बौद्धस्तोत्रसंग्रह

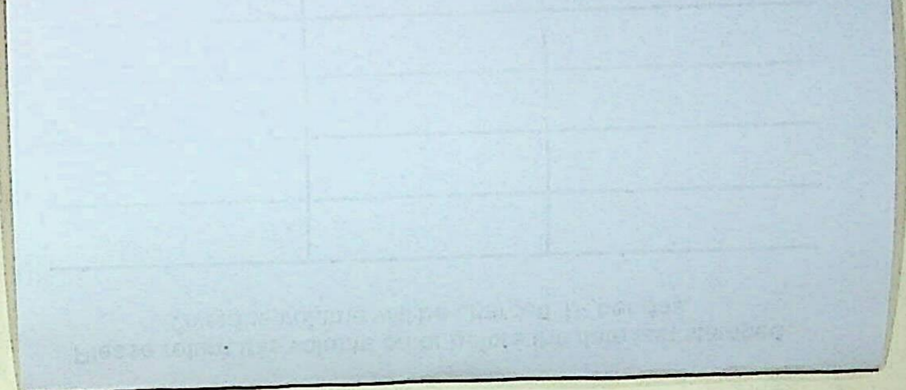
(१०८ प्राचीन बौद्धस्तोत्रों की प्रथम माला)

सम्पादनकर्ता
जनार्दनशास्त्री पाण्डेय

BAUDDHA - STOTRA - SAMGRAHA

[A Collection of One Hundred Eight Old Buddhist Hymns — First Series]

Compiled by
Janardan Shastri Pandeya





बौद्धस्तोत्रसंग्रहः

Bauddhastotrasamgraha

विद्वद्वरेण्य श्रद्धेय श्री व्रजवल्लभ द्विवेदिमहोदयानां
पावनकराब्जयोः सादरं
समर्पितं

जनार्दनपाण्डेयेन

BAUDDHASTOTRASAMGRAHA

Editor
Janardan Shastri Pandey

Foreword by
H. H. The Dalai Lama

Introduction by
Prof. S. Rinpoche
Director, Central Institute of Higher Tibetan Studies
Sarnath, Varanasi

MOTILAL BANARSIDASS
Delhi :: Varanasi :: Patna :: Bangalore :: Madras

बौद्धस्तोत्रसंग्रहः

संग्रहकर्ता सम्पादकश्च
जनार्दनशास्त्री पाण्डेयः

प्ररोचना
परमपावन दलाई लामा

प्रस्तावना
प्रो० एस० रिनपोछे
डाइरेक्टर, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली :: वाराणसी :: पटना :: बंगलौर :: मद्रास

प्रथम संस्करण : १९९४

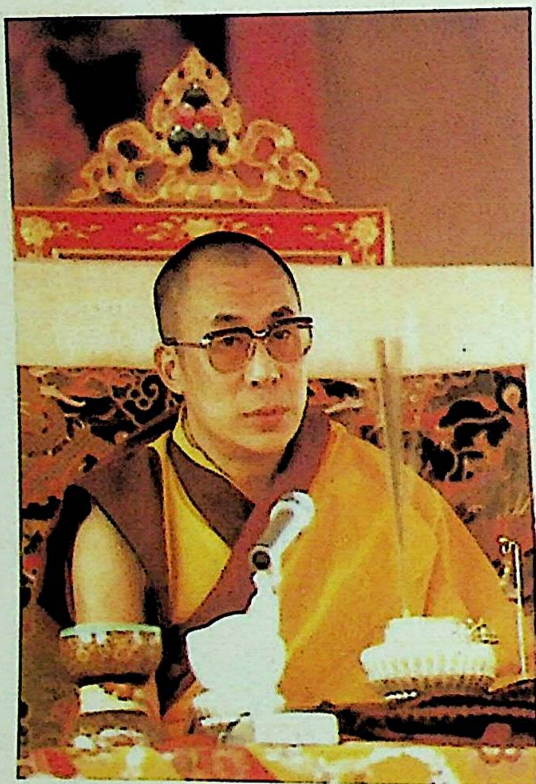
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७
१२०, रॉयपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, मद्रास–६०० ००४
१६, सेंट मार्क्स रोड, बंगलौर–५६० ००१
अशोक राजपथ, पटना–८०० ००४
चौक, वाराणसी–२२१ ००१

मूल्य : (अजिल्द) १२५.००
(सजिल्द) २००.००

नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, चौक, वाराणसी द्वारा प्रकाशित
तथा महाकान्त प्रेस, भदैनी, वाराणसी द्वारा मुद्रित ।

संकलनं स्तोत्राणां श्रीमदवलोकितेशावतारस्य ।
श्रीशासनधरसागरस्याधिकरकञ्जं समर्पयति ॥

—जनार्दनशास्त्री पाण्डेयः





THE DALAI LAMA

FOREWORD

Pandit Janardan Shastri Pandey is associated with the Rare Buddhist Text Project at the Central Institute of Higher Tebetan Studies, Sarnath. He has prepared a collection of poetic eulogies by a variety of Indian Buddhist acharyas, entitled *Bauddha Stotra Samgraha*. These works, which can be found in the traditions of both the sutras and tantras, are important not only for their spiritual content but, also for the subtlety of their philosophical expression. Their particular charm lies in their popularity. Within the Tibetan community, both lay and monastic, many of these works continue to be recited regularly as part of an individual's personal religious practice.

This may well be the first modern publication of such a large number of Stotras in their original language. I am confident this will be of great benefit to interested scholars, practitioners and students. I congratulate the author on his valuable contribution to a greater appreciation of Buddhist literature. This collection might be first of its kind to bring the Stotras together in large number in their original language as a modern publication. I hope this will benefit many practitioners, scholars and students.

March 18, 1994

प्रस्तावना

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान के तत्त्वावधान में कार्यरत दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना के परामर्शक, भारतीय लिपि विशेषज्ञ, विश्रुत विद्वान् पं० जनार्दन शास्त्री पाण्डेय ने बौद्ध स्तोत्र संग्रह के नाम से महत्त्वपूर्ण बौद्ध स्तोत्रों का संग्रह किया है। विभिन्न स्रोतों से इनका संग्रह किया गया है जैसे कि नामसंगीति को सोलह हजार श्लोक प्रमाण वाले मायाजाल नामक महायोगतन्त्र के समाधि-जाल पटल से लिया गया है। गुह्येश्वरीस्तोत्र और मंजुवज्रस्तोत्र स्वयंभू पुराण से उद्धृत हैं। चतुः षष्टि संवरस्तोत्र संवरागम महातन्त्र का है। मंगल षोडश-स्तुति भद्रकल्पावदान से ली गयी है। शाक्यसिंह स्तोत्र दुर्गतिपरिशोधनतन्त्र आदि से लिये गये हैं।

स्तोत्र का अर्थ है स्तुति। स्तोत्र के द्वारा उपासक अपने इष्टदेव के सामने अनुराग व्यक्त करता है।

संस्कृत साहित्य के इतिहास के लेखकों ने स्तोत्र साहित्य का भक्ति काव्य में समावेश किया है। इनमें भक्तिभावना की प्रधानता है। अलंकार शास्त्रियों में से कुछ ने नौ रसों के अतिरिक्त भक्ति को दसवें रस के रूप में मान्यता दी है। काव्य की यह विधा अनुराग और विराग दोनों प्रकार की भावनाओं से ओत प्रोत है। इसलिये आध्यात्मिक उन्नति के उद्देश्य से समाज ने इनको बहुत पसन्द किया है। यही कारण है कि सभी भारतीय धर्मों के अनुयायियों ने भक्ति काव्य की इस परम्परा को स्तोत्र साहित्य के रूप में पल्लवित एवं पुष्पित किया है।

संस्कृत का स्तोत्र-साहित्य बड़ा ही विशाल, सरस एवं हृदयस्पर्शी है। बौद्ध स्तोत्र साहित्य के इतिहास में पहला नाम अश्वघोष का है। अश्वघोष के बाद मातृचेट का नाम आता है। इन दोनों स्तोत्रकारों का समय ईसा की पहली शताब्दी माना जाता है। अश्वघोष और मातृचेट को कुछ विद्वान् अभिन्न मानते हैं तो कुछ इनका स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार करते हैं।

शून्यवाद के प्रतिष्ठापक आचार्य नागार्जुन के चतुःस्तव की चर्चा इतिहास के ग्रन्थों में मिलती है, किन्तु इतिहासकारों ने इनको एक ही स्तव मान लिया है

और इनके निरौपम्य स्तव तथा अचिन्त्य स्तव की अलग से चर्चा की है। वस्तुतः चतुःस्तव नागार्जुन के चार स्तोत्रों का संग्रह है और उक्त दोनों स्तव उसी के अन्तर्गत आते हैं। प्रस्तुत संग्रह में इन चारों स्तवों के अतिरिक्त नागार्जुन के अन्य स्तोत्र भी संगृहीत हैं। नागार्जुन के धर्मधातुस्तव के भी कुछ श्लोक उद्धरणों के रूप में मिलते हैं। अभी तक यह स्तोत्र संस्कृत में उपलब्ध नहीं हो सका है, किन्तु इसका भोट अनुवाद उपलब्ध है। भोट देश के लिये यह गौरव की बात है कि इस तरह की अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियाँ, जिनका कि आज संस्कृत मूल उपलब्ध नहीं होता, भोट अनुवाद में वे सुरक्षित हैं।

इतिहास ग्रन्थों में हर्षवर्धन कृत बौद्ध स्तोत्रों की भी चर्चा मिलती है। सर्वज्ञ मित्र का स्रग्धरा स्तोत्र तथा उससे संबद्ध किंवदन्तियाँ भी वहाँ उल्लखित हैं। स्तोत्र साहित्य में स्रग्धरा स्तोत्र एक उज्ज्वल नक्षत्र के समान अपनी आभा को फैलाये हुए है। स्रग्धरा स्तोत्र के विषय में कहा है कि वह महायान में नितान्त लोकप्रिय तारा का स्तोत्र है। स्तोत्र साहित्य में इसकी टक्कर के बहुत कम स्तोत्र मिलेंगे। स्रग्धरा छन्द में निबद्ध यह स्तोत्र इतना प्रसिद्ध हो गया कि बिना भगवती तारा का नाम जोड़े भी केवल स्रग्धरा स्तोत्र के नाम से ही इसका बोध हो जाता है। छन्द, अलंकार और अपनी गौडीय रीति के कारण यह स्तोत्र मेघदूत जैसे खण्ड काव्यों में स्थान पाने का अधिकारी है।

इन सभी महत्त्वपूर्ण स्तोत्रों में से अधिकांश का यहाँ संग्रह हुआ है। नागार्जुन के स्तोत्रों के अतिरिक्त यहाँ आचार्य अश्वघोष के बुद्धगण्डी स्तव का, आर्यदेवकृत गण्डीस्तव का, चन्द्रकीर्तिकृत मध्यमक शास्त्र स्तुति का, मातृचेट कृत अध्यर्ध-शतक का, चर्चित सर्वज्ञमित्र के प्रसिद्ध स्रग्धरा स्तोत्र और हर्षवर्धन के 'सुप्रभातम्' स्तोत्र का भी समावेश किया गया है। भिक्षुणी चन्द्रकान्ता, लक्षा भगवती, चरपति (चर्पटि) पाद, मंजुनाथ, वनरत्न, वन्धुदत्त, वज्रदत्त, विभूतिचन्द्र, आचार्य चन्द्रदास, रामचन्द्र भारती आदि के स्तोत्र भी संगृहीत हैं। वासुकिनाग, नवग्रह, ब्रह्मा, विष्णु, शंकर और सुरपति कृत स्तोत्र भी यहाँ देखे जा सकते हैं। मातृचेट के अध्यर्धशतक में हेतुस्तव, निरुपमस्तव, अद्भुतस्तव, रूपस्तव, करुणास्तव, वचनस्तव, शासनस्तव, प्रणिधिस्तव, मार्गावतारस्तव, दुष्करस्तव, कौशलस्तव और आनृण्यस्तव नामक बारह स्तोत्रों का समावेश है।

अचिन्त्यस्तव में आचार्य नागार्जुन ने चतुष्कोटिविनिर्मुक्त शून्यता और निःस्वभावता सिद्धान्त की स्तुति के व्याज से सम्यक् प्रतिष्ठा की है।

चतुःषष्टिसंवर स्तोत्र में श्रीहेरुक महावीर के मेषवक्त्र, अश्वानन आदि

६४ स्वरूपों की स्तुति की गयी है। बुद्धभाषित तारानमस्कारैकविंशतिस्तोत्र का भोट देश में आज भी सर्वाधिक प्रचलन है। धर्मधातुवागीश्वर मण्डल स्तोत्र में स्तुति के व्याज से पूरे वागीश्वर मण्डल का खाका खड़ा कर दिया गया है। मध्यमक स्तुति में आचार्य चन्द्रकीर्ति ने नागार्जुन की और उनकी शिष्य सन्तति की चर्चा करते हुए इनके द्वारा रचे गये ग्रन्थों का भी उल्लेख किया है। लगता है चन्द्रकीर्ति ने मध्यमक शास्त्र की अपनी अनाकुला वृत्ति की समाप्ति पर इस स्तुति की रचना की है।

हम कह सकते हैं कि बौद्ध स्तोत्रों का यह एक अनूठा संग्रह है। भगवान् बुद्ध के समर्पित भक्तों का ही नहीं, बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों के जिज्ञासुजनों का भी इससे बहुत उपकार होगा। हम इन स्तोत्रों के संग्राहक एवं प्रकाशक की मंगलकामना करते हैं।

समदोङ् रिनपोछे

आमुख

मानव जब बाह्य दृश्य पदार्थों को देखता है तो उसकी भावना उनके विषय में जानने के लिये उसे प्रेरित करती है, जिससे वह अदृश्य और अलौकिक तत्त्वों के अनुसन्धान में प्रवृत्त होता है और इन प्राकृतिक पदार्थों के मूल में उसे किसी अप्राकृतिक दिव्य विभूति का आभास होता है। इससे उसके भावकेन्द्र में हलचल सी होती है और उस दिव्य विभूति के प्रति वह आकर्षित होता है। धीरे-धीरे वह आकर्षण इतना बढ़ता है कि उसके प्रति उसकी श्रद्धा और आदर भाव होने लगता है। परमात्मसत्ता के जो विविध रूप प्रादुर्भूत हुए हैं उनके असीम सौन्दर्य, वैभव और शक्ति की कल्पना करता हुआ उनमें से किसी एक को उस दिव्य विभूति का स्वरूप समझकर वह अपना आराध्य मान लेता है। उसके गुणों से प्रेरणा ग्रहण करता है और धीरे-धीरे उसे आत्मसमर्पण कर देता है। मानव की अपने आराध्य के प्रति इसी भक्ति, श्रद्धा, अनुराग और आत्मनिवेदन की भावना से स्तोत्र-साहित्य की उत्पत्ति हुई है।

स्तोत्र शब्द ष्टुञ् स्तुतौ धातु से ष्ट्रन् प्रत्यय होकर निष्पन्न होता है, कोश में इसके पर्याय हैं—स्तव, स्तुति और नुति (स्तवः स्तोत्रं स्तुतिर्नुतिः—अमर कोश १।६।११)। इनमें ष्टुञ् धातु से ष्ट्रन् प्रत्यय से स्तोत्र, अप् प्रत्यय से स्तव और क्तिन् प्रत्यय से स्तुति एवं णू स्तवने धातु से क्तिन् होकर नुति शब्द बना है। स्तोत्र वाङ्मय को शास्त्रकारों ने भक्ति साहित्य के अन्दर रखा है, क्योंकि उनमें आराध्य के प्रति आराधक की समर्पण भावना अनिवार्यतः होती है। कोई भी व्यक्ति चाहे किसी धर्म का हो और किसी को भी अपना आराध्य मानता हो, स्तोत्र द्वारा अपने हृदय के भावों को उसके सम्मुख प्रस्तुत करता है। यह परम्परा आदिकाल से चली आ रही है। ऋग्वेद संसार में सबसे प्राचीन ग्रन्थ माना जाता है उसका प्रत्येक सूक्त स्तोत्र ही कहा जा सकता है।

मत्स्य पुराण के १२१ वें अध्याय में स्तोत्र के चार प्रकार बताये गये हैं—

द्रव्यस्तोत्रं कर्मस्तोत्रं विधिस्तोत्रं तथैव च।
तथैवाभिजनस्तोत्रं स्तोत्रमेतच्चतुष्टयम्॥

स्तुति या स्तोत्र का अर्थ है प्रशंसा या गुणगान, द्रव्यस्तोत्र का तात्पर्य है आराध्य सम्बन्धी किसी एक द्रव्य (पदार्थ) को लेकर उसकी स्तुति करना (जैसे- वेदान्त देशिक ने भगवान् की पादुका के वर्णन में एक हजार श्लोकों की रचना की है। कटाक्षशतक, कुचपञ्चाशिका आदि स्तोत्र इसी श्रेणी में आते हैं।) अथवा आराध्य के प्रति जिन द्रव्यों को समर्पण किया जाता है तद्विषयक स्तोत्र भी द्रव्य-स्तोत्र कहे जा सकते हैं। कर्मस्तोत्रों में आराध्य के पुरुषार्थ, शौर्य, अलौकिक एवं लोककल्याणकारी कर्मों का वर्णन होता है। विधिस्तोत्र वे हैं जिनमें आराध्य की स्तुति के बहाने आराधक के कर्तव्यों का निर्देश होता है। इनके अतिरिक्त शेष सब अभिजन स्तोत्र कहलाते हैं।

अपने अपराधों की स्वीकृति, हृदय की दीनता आदि कोमलतम भावों को प्रस्तुत करके आत्मविश्लेषण करने वाला मनोवैज्ञानिक यह विशाल स्तोत्र साहित्य जितना संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध है उतना विश्व की किसी अन्य भाषा में नहीं। शैव, वैष्णव, शाक्त, जैन, बौद्ध, जिनके स्तोत्रों की संख्या गणनातीत है, सभी अपने आराध्य के सामने एक सी भावना व्यक्त करते हैं, जिसमें अपनी अल्पज्ञता और आराध्य की सर्वोत्कृष्टता व्यक्त होती है। धीरे-धीरे यह तादात्म्य इतना प्रौढ़ हो जाता है कि आराधक आराध्य से कभी सख्यभाव व्यक्त करता है, कभी रूठने की चेष्टा प्रकट करता है, यहाँ तक कि कभी व्यङ्ग्योक्तियों से उसे डाँटने तक लगता है। विश्रुत विद्वान् मधुसूदन सरस्वती का यह पद्य प्रसिद्ध है—

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्याः स्वाराज्यसिंहासनलब्धदीक्षाः।
शठेन केनापि वयं हठेन दासीकृता गोपवधूविटेन॥

[हम अद्वैत मार्ग के पथिक ही नहीं थे प्रत्युत उन पथिकों का मार्गदर्शन करने वाले आचार्य थे। स्वाराज्य सिंहासन अर्थात् पूर्ण ब्रह्मप्राप्ति की हमें दीक्षा मिल चुकी थी, वह पद हमारे लिये दूर नहीं था। परन्तु गोपियों के विट (जार) किसी धूर्त ने हमें जबर्दस्ती अपना दास बना लिया (हम उसके भक्त हो गये।)]

स्तोत्र-साहित्य का बहुत बड़ा अंश इस प्रकार की व्यङ्ग्योक्तियों से भरा पड़ा है। धीरे-धीरे वह तादात्म्य इस श्रेणी में पहुँच जाता है कि कालिदास जैसे कवि को कहना पड़ता है—'स्तुतिभ्यो व्यतिरिच्यन्ते दूराणि चरितानि ते' (रघुवंश) अर्थात् हे भगवन्! आपके चरित इतने विशाल हैं कि वहाँ तक हमारी वाणी की पहुँच ही नहीं है। अन्त में जैन आचार्य समन्तभद्र के शब्दों में—

न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवान्तवैरे।
तथापि ते पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनाति चित्तं दुरिताऽञ्जनेभ्यः ॥

[हे नाथ ! आप वीतराग हैं इसलिये किसी के द्वारा की हुई पूजा या स्तुति से आप प्रसन्न हो जायेंगे, यह सोचना ही व्यर्थ है। आप विवान्तवैर हैं अतः कोई आप की निन्दा करे तो उससे आप अप्रसन्न होंगे, यह भी नहीं कहा जा सकता, फिर भी हम आपकी स्तुति करते हैं क्योंकि आप के पवित्र गुणों व कर्मों का स्मरण करने से हमारा चित्त निर्मल हो जाता है और उसमें किसी प्रकार के बुरे विचार या पाप की भावना नहीं आ पाती।]

यह स्तोत्र-साहित्य के उपयोग की चरम परिणति है। चित्त की शुद्धि के विना कोई साधना में सफल नहीं होता और आराध्य के गुण कर्मों का चिन्तन तथा तदनुरूप कार्य के विना चित्त शुद्धि नहीं होती, अतः चित्त का निर्मलीकरण ही स्तोत्र रूप वाचिक तपस्या का अन्तिम फल है।

बौद्धस्तोत्र

संसार का कोई भी ऐसा धर्म नहीं है जिसमें किसी न किसी रूप में किसी आराध्य को न स्वीकारा गया हो। जब आराध्य हो तो आराधक भी होंगे और स्तोत्र भी। भले ही वे किसी भाषा में हों। बौद्ध धर्म में स्तोत्रों का विशाल भण्डार है, विशेषकर महायान सम्प्रदाय में। क्योंकि यह सम्प्रदाय अत्यन्त भक्ति-प्रवण होने के साथ ही साधना-प्रधान भी है। इसमें पारलौकिक ही नहीं ऐहिक सिद्धियों के लिये भी विभिन्न देवी-देवताओं की तान्त्रिक साधना विहित है। भगवान् बुद्ध ने जहाँ दार्शनिक पक्ष की पुष्टि के लिये विभिन्न देशनाएँ दी हैं वहीं तन्त्रनय की भी देशना दी है, ऐसा माना जाता है। बौद्ध वाङ्मय का विस्तृत धारणी-साहित्य इसका ज्वलन्त उदाहरण है। महायान सम्प्रदाय के स्तोत्र अधिकतर संस्कृत में ही हैं। यद्यपि इनका भोट भाषा में अनुवाद हुआ है और सामान्य जनता उसके पाठ से लाभान्वित भी होती है, परन्तु उनका मूलरूप संस्कृत में ही है। आचार्य नागार्जुन, मातृचेट, अश्वघोष आदि ईसवीशती के प्रारम्भ से पूर्ववर्ती विद्वानों के सरल, सरस और भक्तिप्रवण स्तोत्र प्रायः संस्कृत में ही पाये जातें हैं।

यद्यपि स्तोत्र में शाब्दिक चमत्कार या अर्थगाम्भीर्य आवश्यक नहीं है, सरल से सरल और कम से कम शब्दों में अपने हृद्गत भाव को आराध्य तक पहुँचा देना ही स्तोत्र का अभिप्राय है, परन्तु कुछ विद्वान् भक्तों ने अपने पाण्डित्य

का ऐसा कौशल दिखाया है कि उनकी रचनाएँ रस, ध्वनि, व्यञ्जना और अलंकारों से परिपूर्ण काव्य ही कहे जा सकते हैं। वज्रविलासिनी-साधनास्तव, वसन्ततिलकास्तुति, वज्रदत्त का लोकेश्वर शतक, सर्वज्ञमित्र का आर्य तारा-स्रग्धरा स्तोत्र, चन्द्रदास की तारास्तुति आदि इसी कोटि के स्तोत्र हैं।

बौद्ध धर्म एवं दर्शन के गूढ़ तत्त्वों को भी इन स्तोत्रों द्वारा व्यक्त किया गया है। आर्य नागार्जुन के चार स्तव—लोकातीतस्तव, अचिन्त्यस्तव, परमार्थ-स्तव और निरौपम्यस्तव, मातृचेट का अध्यर्ध शतक आदि कई स्तोत्र इस कोटि में आते हैं। अद्वयपरमार्था नामसंगीति, जिसके प्रत्येक नाम की निरुक्ति द्वारा दार्शनिक पदार्थों को अवगत कराने के लिये अमृतकणिका, उद्योत आदि विशाल वाङ्मय की रचना की जा चुकी है, आर्यदेव का चतुःशतक, अश्वघोष का गण्डीस्तव, चन्द्रकीर्ति की मध्यमक शास्त्र स्तुति आदि बहुत से ऐसे स्तोत्र हैं। इनके अतिरिक्त ललितविस्तर, गण्डव्यूह, मंजुश्रीमूलकल्प, सुवर्णप्रभास, स्वयम्भू पुराण आदि ग्रन्थों में सैकड़ों उत्तम स्तोत्र भरे पड़े हैं।

इस अनन्त बौद्धस्तोत्र-वाङ्मय में आज सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसका अपना मूलरूप बहुत विकृत हो चुका है। भोट भाषा में जिन स्तोत्रों का अनुवाद हुआ है और जो उस भाषा में उनका पाठ करते हैं उनके लिये तो एक स्वरूप सुरक्षित है किन्तु संस्कृत के स्तोत्रों की स्थिति अच्छी नहीं है। भाषा, भाव, छन्द और व्याकरण की दृष्टि से उन्हें अपने मूलरूप में ले आना कठिन ही नहीं, असम्भव सा लगता है। इसके कई कारण हो सकते हैं। एक तो मौखिक परम्परा से अशिक्षितों द्वारा उच्चारण की भ्रष्टता से, प्रतिलिपि करने वालों को संस्कृत भाषा का ज्ञान न होने से, जिस लिपि में लिखा है उसका पूर्ण ज्ञान न होने के कारण दूसरी लिपि में लिखने में हुई त्रुटियों से तथा अत्यन्त श्रद्धावश भावातिरेक में भक्तों द्वारा अपनी ओर से विना विचार के प्रक्षेप कर देने आदि से इनमें पर्याप्त अशुद्धियाँ आ गई हैं वास्तव में यह विशाल स्तोत्र साहित्य विद्वानों के लिये गम्भीर अनुसन्धान का विषय हो गया है।

प्रस्तुत संस्करण

स्वर्गीय जगन्नाथ उपाध्याय जी की प्रबल इच्छा थी कि बौद्ध वाङ्मय का वर्गीकरण करके प्रत्येक अनुभाग के साहित्य का पृथक्-पृथक् संकलन कर जिज्ञासुओं और अनुसन्धाताओं के लिये प्रस्तुत किया जाय। इसीलिये उन्होंने

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना की शोध पत्रिका 'धीः' के प्रत्येक अंक के प्रारम्भ में २ स्तोत्र प्रकाशित करने का नियम बनाया। ताकि इस प्रकार स्तोत्रों का एक संकलन हो। इन स्तोत्रों का चयन करने के लिये मुझे बौद्ध स्तोत्र वाङ्मय का आलोडन करने का अवसर मिला। 'धीः' के वर्ष में २ अंक प्रकाशित होते हैं। इस प्रक्रिया से विशाल बौद्ध स्तोत्र संग्रह के प्रकाशन में दीर्घकाल की अपेक्षा होती, इसलिये केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान के निदेशक श्रद्धेय प्रो० स० रिनपोछे जी ने मुझे प्रेरित किया कि सम्प्रति १०८ बौद्धस्तोत्रों का एक संकलन प्रस्तुत करूँ। इस संग्रह का अधिकांश मैंने स्व० उपाध्याय जी के व्यक्तिगत संग्रह से प्राप्त अप्रकाशित स्तोत्र संग्रह से लिया है, जिसका विवरण 'धीः' के प्रथम अंक में दिया गया है। सहयोगियों से प्राप्त कुछ वे स्तोत्र हैं जिनका बौद्ध जनता प्रायः पाठ करती है। इसके अतिरिक्त विब्लियोथिका बुद्धिका XV से सप्तजिनस्तव, बुद्धिष्ट टेक्स्ट सोसाइटी जरनल एण्ड टेक्स्ट, पार्ट II १८९३ से भक्तिशतकम्, लोकेशचन्द्र के शतपिटक सीरीज वाल्यूम ३६६ से मारविजय तथा शान्तरक्षित ग्रन्थालय के पंचाशत्स्तोत्र संग्रह से रत्नमाला स्तोत्र लिया है। मेरा उद्देश्य संप्रति केवल संकलन को विद्वानों तथा जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करना मात्र रहा है अतः मैंने इसके सम्पादन में सामान्य नियमों का ही पालन किया है किसी प्रकार की टिप्पणी या समालोचनात्मक संस्करण बनाने का प्रयत्न नहीं।

आभार

मैं शतशः नमन करता हूँ परमपावन दलाई लामा जी को जिन्होंने इस संकलन को देखकर मुझे अपने आशीर्वाद से अनुगृहीत किया है।

श्रद्धेय आचार्य रिनपोछे जी का, जो अपनी सदाशयता के लिये प्रसिद्ध हैं, मैं अत्यन्त आभारी हूं, इनकी प्रेरणा ही मेरा संबल रही है।

आचार्य व्रजवल्लभ द्विवेदी जी प्रारम्भ से ही सर्वदा मेरे प्रत्येक लेखन कर्म में साक्षी रहे हैं अतः उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन मेरे लिये आवश्यक है।

इस संकलन में सर्वाधिक सहयोग मेरे सहकर्मी डॉ० बनारसी लाल, डॉ० ठाकुरसेन नेगी तथा श्री विजयराज वज्राचार्य का रहा है इन सभी को धन्यवाद देता हुआ इनके अभ्युदय की कामना करता हूं।

संस्कृत के मूल एवं तत्संबद्ध महत्त्वपूर्ण दुर्लभ वाङ्मय को सर्वसुलभ करने के लिये प्रायः ९० वर्षों से सतत प्रयत्नशील विश्वविश्रुत प्रकाशन संस्थान मोतीलाल बनारसीदास के तरुण अंशी श्री जैनेन्द्र प्रकाश जैन का मैं हृदय से

धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने इस संग्रह के प्रकाशन में उत्सुकता ही नहीं तत्परता भी दिखाई।

इन स्तोत्रों की जो पाण्डुलिपियाँ मुझे उपलब्ध हुईं उनमें भाषा की दृष्टि से जो प्रायः शुद्ध प्रतीत हुई उसी का पाठ मैंने लिया है। जो श्रद्धालु भक्तजन नियमित रूप से इनमें से किसी स्तोत्र का पाठ करते हों उन्हें यदि कहीं कोई त्रुटि मिले तो उसे सुधारकर मुझे सूचित करने की कृपा करें ताकि अगले संस्करण में उसे ठीक किया जा सके।

अन्त में उन सभी ग्रन्थों, जरनलों तथा व्यक्तियों के प्रति आभार व्यक्त करता हूं जिनसे मुझे इस संकलन में सहयोग मिला है। विद्वज्जनों से निवेदन है मेरी अस्वस्थता, अनवधानता या मुद्रणादि दोष से जो त्रुटियाँ हों उनके लिये मुझे क्षमा करें।

विद्वदनुचर
जनार्दनशास्त्री पाण्डेय

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ–वाराणसी
बुद्ध पौर्णिमा २०५१

स्तोत्रानुक्रमणी

अचिन्त्यस्तवः

ॐ नमो भगवते बुद्धाय ।

प्रतीत्यजानां भावानां नैःस्वभाव्यं जगाद यः ।
तं नमामि सदा बुद्धमचिन्त्यमनिदर्शनम् ॥ १ ॥

यथा त्वया महायाने धर्मनैरात्म्यं महात्मना ।
विदित्तं संदेशित्तं तद् बुद्धिमद्भ्यः करुणावशात् ॥ २ ॥

प्रत्ययेभ्यः समुत्पन्नमनुत्पन्नं त्वयोदितम् ।
स्वभावेन च तज्जातमिति शून्यं प्रकाशितम् ॥ ३ ॥

यद्वत्प्रतीत्यजाच्छब्दात् प्रतिशब्दसमुद्भवः ।
मायामारीचिवच्चापि तथा भवसमुद्भवः ॥ ४ ॥

मायामरीचिगन्धर्वनगरप्रतिबिम्बकाः ।
यद्यजाताः सह स्वप्नैर्नं स्यात्तद्दर्शनादिकम् ॥ ५ ॥

हेतुप्रत्ययसम्भूता यथा ते कृतकाः स्मृताः ।
तद्वत्प्रत्ययजं विश्वं त्वयोक्तं नाथ सांवृतम् ॥ ६ ॥

अतस्तत्कर्तृकं सर्वं यत्किञ्चिद्बाललापनम् ।
रक्तमुष्टिप्रतीकाशमयथार्थं प्रकाशितम् ॥ ७ ॥

कृतकं वस्तु नो जातं तदा किं वार्तमानिकम् ।
कस्य नाशादतीतं स्यादुत्पित्सुः किमपेक्ष्यसे ॥ ८ ॥

स्वस्मान्न जायते भावः परस्मान्नोभयादपि ।
न सन्नासन्न सदसत् कुतः कस्योद्भवस्तदा ॥ ९ ॥

अजाते न स्वभावोऽस्ति कुतः स्वस्मात्समुद्भवः ।
स्वभावाभावसिद्धे च परस्मादप्यसंभवः ॥ १० ॥

स्वत्वे सति परत्वं स्यात् परत्वे स्वत्वमिष्यते ।
आपेक्षिकी तयोः सिद्धिः पारावारमिवोदिता ॥ ११ ॥

यदा नापेक्ष्यते किञ्चित् कुतः किञ्चित्तदा भवेत् ।
यदा नापेक्ष्यते दीर्घं कुतो ह्रस्वादिकं तदा ॥ १२ ॥

अस्तित्वे सति नास्तित्वं दीर्घे ह्रस्वं यथा सति ।
नास्तित्वे सति चास्तित्वं यत्तस्मादुभयं न सत् ॥ १३ ॥

एकत्वादि तथाऽनेकमतीतानागतादि च ।
संक्लेशं व्यवदानं च सम्यक् मिथ्या स्वतः कुतः ॥ १४ ॥

स्वत एव हि यो नास्ति भावः सर्वोऽस्ति कस्तदा ।
पर इत्युच्यते योऽयं न विना स्वस्वभावतः ॥ १५ ॥

न स्वभावोऽस्ति भावानां परभावो तदाऽस्ति न ।
भावाग्रहग्रहावेशः परतन्त्रोऽस्ति कस्तदा ॥ १६ ॥

आदावेव शमं याताः स्वभावेन च निर्वृताः ।
अनुत्पन्नाश्च तत्त्वेन तस्माद् धर्मास्त्वयोदिताः ॥ १७ ॥

निःस्वभावास्त्वया धीमन् रूपाद्याः संप्रकाशिताः ।
फेनबुद्बुदमायाभ्रमरीचिकदलीसमाः ॥ १८ ॥

इन्द्रियैरुपलब्धं यत् तत्तत्त्वेन भवेद् यदि ।
जातास्तत्त्वविदो बालास्तत्त्वज्ञानेन किं तदा ॥ १९ ॥

जातत्वमप्रमाणत्वमथास्य कृततामपि ।
विपरीतमविज्ञानमिन्द्रियाणां त्वमूचिवान् ॥ २० ॥

अज्ञानेनावृतो येन यथावन्न प्रदृश्यते ।
लोकस्तेन यथाभूतमिति मत्वा त्वयोदितम् ॥ २१ ॥

अस्तीति शाश्वती दृष्टिर्नास्तीत्युच्छेददर्शनम् ।
तेनान्तद्वयनिर्मुक्तो धर्मोऽयं देशितस्त्वया ॥ २२ ॥

चतुष्कोटिविनिर्मुक्तास्तेन धर्मास्त्वयोदिताः ।
विज्ञानस्य प्रविज्ञेया जाता विमुक्तगोचरा ॥ २३ ॥

स्वप्ने तु जनकोद्भूतं द्विचन्द्रादीक्षणं यथा ।
भूतं तद्वस्तु नोद्भूतं तथा दृष्टं जगत् त्वया ॥ २४ ॥

उत्पन्नश्च स्थितो नष्टः स्वप्ने यद्वत् सतस्तथा ।
न चोत्पन्नः स्थितो नष्ट उक्तो लोकार्थतस्त्वया ॥ २५ ॥

को नाशः संभवो दृष्टो यथा स्वप्ने तथेतरः ।
संभवः सर्वभावानां विभवोऽपि तथा मतः ॥ २६ ॥

रागादिकं तथा दुःखं दुःखसंक्लेशसंसृतिः ।
संभारपूर्णतिमोक्तिः स्वप्नवद् भाषितं त्वया ॥ २७ ॥

जातं तथैव नो जातमागतं गतमित्यपि ।
मुक्तो बद्धस्तथा ज्ञानो द्वयमिच्छेन्न तत्त्ववित् ॥ २८ ॥

उत्पत्तिर्यस्य नैवास्ति तस्मात् का निर्वृतिर्भवेत् ।
मायागजप्रकाशत्वादादिशान्तस्त्वमर्थतः ॥ २९ ॥

उत्पन्नोऽपि न वोत्पन्नो यद्वन्मायागजो मतः ।
उत्पन्नं च तथा विश्वं न वोत्पन्नं च तत्त्वतः ॥ ३० ॥

अमेयैश्च प्रमेयाणां प्रत्येकं निर्वृतिः कृता ।
लोकनाथैर्हि सत्त्वानां त कश्चिन्मोचितश्च तैः ॥ ३१ ॥

ते च सत्त्वाश्च नो जाता येनैव तेन ते स्फुटम् ।
न कैश्चिन्मोचितः कश्चिदिति प्रोक्तं महामुने ॥ ३२ ॥

मायाकारकृतं यद्वत् वस्तु शून्यं तथेतरत् ।
वस्तुशून्यं जगत्सर्वं त्वयोक्तं कारकस्तथा ॥ ३३ ॥

कारकोऽपि कृतोऽन्येन कर्तृत्वं नातिवर्तते ।
अथवा तात्क्रियाकर्ता कारकस्य प्रसज्यते ॥ ३४ ॥

नाममात्रं जगत्सर्वमित्युच्चैर्भाषितं त्वया ।
अभिधानात् पृथग्भूतमभिधेयं न विद्यते ॥ ३५ ॥

कल्पनामात्रमित्यस्मात् सर्वधर्माः प्रकाशिताः ।
कल्पनाप्यसती प्रोक्ता यथा शून्यं विकल्प्यते ॥ ३६ ॥

भावाऽभावद्वयातीतमनातीतश्च कुत्रचित् ।
न चा नं न च ज्ञेयं न चास्तिज्ञा नैव नास्तिवत् ॥ ३७ ॥

यन्न चैकं न चानेकं नोभयं न च नोभयम् ।
अनालयमथाव्यक्तमचिन्त्यमनिदर्शनम् ॥ ३८ ॥

यन्नोदेति न च व्येति नोच्छेदि न च शाश्वतम् ।
न चाकाशप्रतीकाशं नाक्षरज्ञानगोचरम् ॥ ३९ ॥

यः प्रतीत्यसमुत्पादः शून्यता सैव ते मता ।
तथाविधश्च सद्धर्मस्तत्समश्च तथागतः ॥ ४० ॥

तत्तत्त्वं परमार्थोऽपि तथता द्रव्यमिष्यते ।
भूतं तदविसंवादि तद्बोधाद् बुद्ध उच्यते ॥ ४१ ॥

बुद्धानां सत्त्वधातोश्च तेनाभिन्नस्त्वमर्थतः ।
आत्मनश्च परेषां च समता तेन ते मता ॥ ४२ ॥

भावेभ्यः शून्यता नान्या न च भावोऽस्ति तां विना ।
तस्मात्प्रतीत्यजा भावास्त्वया शून्याः प्रकाशिताः ॥ ४३ ॥

हेतुप्रत्ययसंभूता परतन्त्रा च संवृतिः ।
परतन्त्रमिति प्रोक्तं परमार्थस्त्वकृत्रिमः ॥ ४४ ॥
स्वभावः प्रकृतिस्तत्त्वं द्रव्यं वस्तु सदित्यपि ।
नास्ति वैकल्पिको भावः परतन्त्रस्तु विद्यते ॥ ४५ ॥
अस्तीति कल्पिते भावः समारोपस्त्वयोदितः ।
नास्तीति कृतकोच्छेदादुच्छेदश्च प्रकाशितः ॥ ४६ ॥
तत्त्वज्ञाने न चोच्छेदो न च शाश्वतता मता ।
वस्तुशून्यं जगत्सर्वं मरीचिप्रतिमं मतम् ॥ ४७ ॥
मृगतृष्णाजलं यद्वन्नोच्छेदि न च शाश्वतम् ।
तद्वत्सर्वं जगत्प्रोक्तं नोच्छेदि न च शाश्वतम् ॥ ४८ ॥
द्रव्यमुत्पद्यते यस्य तस्योत्पादादिकं भवेत् ।
अन्तवान्नान्तवांश्चापि लोकस्तस्य प्रसज्यते ॥ ४९ ॥
ज्ञाने सति यथा ज्ञेयं ज्ञेये ज्ञानं तथा सति ।
यदोभयमनुत्पन्नमिति बुद्धे तदास्ति किम् ॥ ५० ॥
इति मायादि दृष्टान्तैः स्फुटमुक्त्वा भिषग्वरः ।
देशयामास सद्धर्मं सर्वदृष्टिचिकित्सितम् ॥ ५१ ॥
एतत्तत्परमं तत्त्वं निःस्वभावत्वदेशना ।
भावग्रहगृहीतानां चिकित्सेयमनुत्तरा ॥ ५२ ॥
धर्मयाज्ञिक ! तेनैव धर्मयज्ञं निरन्तरम् ।
अभीष्टमीजे त्रैलोक्ये निष्कषाये निरन्तरम् ॥ ५३ ॥
वस्तुग्राहभयोच्छेदी कुतीर्थ्यमृगभीकरः ।
नैरात्म्यसिंहनादोऽयमद्भुतो नदितस्त्वया ॥ ५४ ॥
शून्यताधर्मगम्भीरा धर्मभेरी पराहता ।
नैःस्वभाव्यमहानादो धर्मशङ्खः प्रपूरितः ॥ ५५ ॥
धर्मयौतकमाख्यातं बुद्धानां शासनामृतम् ।
नीतार्थमिति चोद्दिष्टं धर्माणां शून्यतैव हि ॥ ५६ ॥
या उत्पादनिरोधादिसर्वज्ञत्वादिदेशना ।
नेयार्था सा मता नाथ भाषिता संवृतिश्च सा ॥ ५७ ॥
प्रज्ञापारमिताम्भोधेर्योऽत्यन्तं पारमागतः ।
स पुण्यगुणरत्नाढ्यस्त्वद्गुणार्णवपारगः ॥ ५८ ॥
इति स्तुत्वा जगन्नाथमचिन्त्यमनिदर्शनम् ।
यदवाप्तं मया पुण्यं तेनास्तु त्वत्समं जगत् ॥ ५९ ॥

इति अचिन्त्यस्तवः

अद्वयपरमार्था नामसङ्गीतिः

ॐ नमः श्रीमहामञ्जुनाथाय

अथ वज्रधरः श्रीमान् दुर्दान्तदमकः परः।
त्रिलोकविजयी वीरो गुह्यराट् कुलिशेश्वरः॥ १॥

विबुद्धपुण्डरीकाक्षः प्रोत्फुल्लकमलाननः।
प्रोल्लालयन् वज्रवरं स्वकरेण मुहुर्मुहुः॥ २॥

भृकुटीतरङ्गप्रमुखैरनन्तैर्वज्रपाणिभिः।
दुर्दान्तदमकैर्वीरैर्वीरबीभत्सरूपिभिः॥ ३॥

उल्लालयद्भिः स्वकरैः प्रस्फुरद्वज्रकोटिभिः।
प्रज्ञोपायमहाकरुणाजगदर्थकरैः परैः॥ ४॥

हृष्टतुष्टाशयैर्मुदितैः क्रोधविग्रहरूपिभिः।
बुद्धकृत्यकरैर्नाथैः सार्द्धं प्रणतविग्रहैः॥ ५॥

प्रणम्य नाथं संबुद्धं भगवन्तं तथागतम्।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा इदमाह स्थितोऽग्रतः॥ ६॥

मद्धिताय ममार्थाय अनुकम्पाय मे विभो।
मायाजालाभिसंबोधेर्यथालाभी भवाम्यहम्॥ ७॥

अज्ञानपङ्कमग्नानां क्लेशव्याकुलचेतसाम्।
हिताय सर्वसत्त्वानामनुत्तरफलाप्तये॥ ८॥

प्रकाशयतु संबुद्धो भगवान् शास्ता जगद्गुरुः।
महासमयतत्त्वज्ञ इन्द्रियाशयवित् परः॥ ९॥

भगवन्! ज्ञानकायस्य महोष्णीषस्य गीष्पतेः।
मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्य ज्ञानमूर्तेः स्वयम्भुवः॥ १०॥

गम्भीरार्थामुदारार्थां महार्थामसमां शिवाम्।
आदिमध्यान्तकल्याणीं नामसङ्गीतिमुत्तमाम्॥ ११॥

यातीतैर्भाषिता बुद्धैर्भाषिष्यन्ते ह्यनागताः।
प्रत्युत्पन्नाश्च संबुद्धा यां भाषन्ते पुनः पुनः॥ १२॥

मायाजाले महातन्त्रे या चास्मिन् संप्रगीयते ।
महावज्रधरैर्हृष्टैरमेयैर्मन्त्रधारिभिः ॥ १३ ॥

अहं चैनां धारयिष्याम्यानिर्याणाद् दृढाशयः ।
यथा भवाम्यहं नाथ सर्वसंबुद्धगुह्यधृक् ॥ १४ ॥

प्रकाशयिष्ये सत्त्वानां यथाशयविशेषतः ।
अशेषक्लेशनाशाय अशेषाज्ञानहानये ॥ १५ ॥

एवमध्येष्य गुह्येन्द्रो वज्रपाणिस्तथागतम् ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रह्वकायः स्थितोऽग्रतः ॥ १६ ॥

इति अध्येषणाज्ञानगाथाः षोडश ।

अथ शाक्यमुनिर्भगवान् संबुद्धो द्विपदोत्तमः ।
निर्णमय्यायतां स्फीतां स्वजिह्वां स्वमुखाच्छुभाम् ॥ १७ ॥

स्मितं संदर्श्य लोकानामपायत्रयशोधनम् ।
त्रिलोकाभासकरणं चतुर्मारारिशासनम् ॥ १८ ॥

त्रिलोकमापूरयन्त्या ब्राह्म मधुरया गिरा ।
प्रत्यभाषत गुह्येन्द्रं वज्रपाणिं महाबलम् ॥ १९ ॥

साधु वज्रधर श्रीमन् साधु ते वज्रपाणये ।
यस्त्वं जगद्धितार्थाय महाकरुणयान्वितः ॥ २० ॥

महार्थां नामसङ्गीतिं पवित्रामघनाशिनीम् ।
मञ्जुश्रीज्ञानकायस्य मत्तः श्रोतुं समुद्यतः ॥ २१ ॥

तत्साधु देशयाम्येषः अहं ते गुह्यकाधिप ।
शृणु त्वमेकाग्रमनास्तत्साधु भगवन्निति ॥ २२ ॥

इति प्रतिवचनज्ञानगाथाः षट् ।

अथ शाक्यमुनिर्भगवान् सकलं मन्त्रकुलं महत् ।
मन्त्रविद्याधरकुलं व्यवलोक्य कुलत्रयम् ॥ २३ ॥

लोकलोकोत्तरकुलं लोकालोककुलं महत् ।
महामुद्राकुलं चाग्र्यं महोष्णीषकुलं महत् ॥ २४ ॥

इति षट्कुलावलोकनज्ञानगाथे द्वे ।

इमां षण्मन्त्रराजानां संयुक्तामद्वयोदयाम् ।
अनुत्पादधर्मिणीं गाथां भाषते स्म गिरांपतेः ॥ २५ ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः स्थितो हृदि ।
ज्ञानमूर्तिरहं बुद्धो बुद्धानां त्र्यध्ववर्तिनाम् ॥ २६ ॥

ॐ वज्रतीक्ष्णदुःखच्छेदप्रज्ञाज्ञानमूर्तये ।
ज्ञानकायवागीश्वरारपचनाय ते नमः ॥ २७ ॥

इति मायाजालाभिसंबोधिक्रमगाथास्तिस्रः ।

तद्यथा भगवान् बुद्धः संबुद्धोऽकारसम्भवः ।
अकारः सर्ववर्णाग्र्यो महार्थः परमाक्षरः ॥ २८ ॥

महाप्राणो ह्यनुत्पादो वागुदाहारवर्जितः ।
सर्वाभिलापहेत्वग्र्यः सर्ववाक्सुप्रभास्वरः ॥ २९ ॥

महामहमहारागः सर्वसत्त्वरतिङ्करः ।
महामहमहाद्वेषः सर्वक्लेशमहारिपुः ॥ ३० ॥

महामहमहामोहो मूढधीमोहसूदनः ।
महामहमहाक्रोधो महाक्रोधरिपुर्महान् ॥ ३१ ॥

महामहमहालोभः सर्वलोभनिषूदनः ।
महाकामो महासौख्यो महामोदो महारतिः ॥ ३२ ॥

महारूपो महाकायो महावर्णो महावपुः ।
महानामा महोदारो महाविपुलमण्डलः ॥ ३३ ॥

महाप्रज्ञायुधधरो महाक्लेशाङ्कुशोऽग्रणीः ।
महायशा महाकीर्तिर्महाज्योतिर्महाद्युतिः ॥ ३४ ॥

महामायाधरो विद्वान् महामायार्थसाधकः ।
महामायारतिरतो महामायेन्द्रजालिकः ॥ ३५ ॥

महादानपतिः श्रेष्ठो महाशीलधरोऽग्रणीः ।
महाक्षान्तिधरो धीरो महावीर्यपराक्रमः ॥ ३६ ॥

महाध्यानसमाधिस्थो महाप्रज्ञाशरीरधृक् ।
महाबलो महोपायः प्रणिधिर्ज्ञानसागरः ॥ ३७ ॥

महामैत्रीमयोऽमेयो महाकारुणिकोऽग्रधीः ।
महाप्रज्ञो महाधीमान् महोपायो महाकृतिः ॥ ३८ ॥

महार्द्धिबलोपेतो महावेगो महाजवः ।
महर्द्धिको महेशाख्यो महाबलपराक्रमः ॥ ३९ ॥

महाभवाद्रिसंभेत्ता महावज्रधरो घनः ।
महाक्रूरो महारौद्रो महाभयभयङ्करः ॥ ४० ॥

महाविद्योत्तमो नाथो महामन्त्रोत्तमो गुरुः ।
महायाननयारूढो महायाननयोत्तमः ॥ ४१ ॥

इति वज्रधातुमण्डलज्ञानगाथाश्चतुर्दश ।

महावैरोचनो बुद्धो महामौनी महामुनिः ।
महामन्त्रनयोद्भूतो महामन्त्रनयात्मकः ॥ ४२ ॥

दशपारमिताप्राप्तो दशपारमिताश्रयः ।
दशपारमिताशुद्धिर्दशपारमितानयः ॥ ४३ ॥

दशभूमीश्वरो नाथो दशभूमिप्रतिष्ठितः ।
दशज्ञानविशुद्धात्मा दशज्ञानविशुद्धधृक् ॥ ४४ ॥

दशाकारो दशार्थार्थो मुनीन्द्रो दशबलो विभुः ।
अशेषविश्वार्थकरो दशाकारवशी महान् ॥ ४५ ॥

अनादिर्निष्प्रपञ्चात्मा शुद्धात्मा तथतात्मकः ।
भूतवादी यथावादी तथाकारी अनन्यवाक् ॥ ४६ ॥

अद्वयो द्वयवादी च भूतकोटिव्यवस्थितः ।
नैरात्म्यसिंहनिर्णादी कुतीर्थ्यमृगभीकरः ॥ ४७ ॥

सर्वत्रगोऽमोघगतिस्तथागतमनोजवः ।
जिनो जितारिर्विजयो चक्रवर्ती महाबलः ॥ ४८ ॥

गणमुख्यो गणाचार्यो गणेशो गणपतिर्वशी ।
महानुभावो धौरेयोऽनन्यनेयो महानयः ॥ ४९ ॥

वागीशो वाक्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरनन्तगोः ।
सत्यवाक् सत्यवादी च चतुःसत्योपदेशकः ॥ ५० ॥

अवैवर्तिको ह्यनागामो खड्गः प्रत्येकनायकः ।
नानानिर्याणनिर्यातो महाभूतैककारणः ॥ ५१ ॥

अर्हन् क्षीणास्रवो भिक्षुर्वीतरागो जितेन्द्रियः ।
क्षेमप्राप्तोऽभयप्राप्तः शीतीभूतो ह्यनाविलः ॥ ५२ ॥

विद्याचरणसंपन्नः सुगतो लोकवित्परः ।
निर्ममो निरहङ्कारः सत्यद्वयनयस्थितः ॥ ५३ ॥

संसारपारकोटिस्थः कृतकृत्यः स्थलस्थितः ।
कैवल्यज्ञाननिष्ठ्यूतः प्रज्ञाशस्त्रो विदारणः ॥ ५४ ॥

सद्धर्म्मो धर्मराड् भास्वान् लोकालोककरः परः ।
धर्मेश्वरो धर्मराजः श्रेयोमार्गोपदेशकः ॥ ५५ ॥

सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सर्वसंकल्पवर्जितः ।
निर्विकल्पोऽक्षयो धातुर्धर्मधातुः परोऽव्ययः ॥ ५६ ॥

पुण्यवान् पुण्यसंभारो ज्ञानं ज्ञानाकरं महत् ।
ज्ञानवान् सदसज्ज्ञानी संभारद्वयसंभृतः ॥ ५७ ॥

शाश्वतो विश्वराड् योगी ध्यानं ध्येयो धियांपतिः ।
प्रत्यात्मवेद्यो ह्यचलः परमाद्यस्त्रिकायधृक् ॥ ५८ ॥

पञ्चकायात्मको बुद्धः पञ्चज्ञानात्मको विभुः ।
पञ्चबुद्धात्ममुकुटः पञ्चचक्षुरसङ्गधृक् ॥ ५९ ॥

जनकः सर्वबुद्धानां बुद्धपुत्रः परोवरः ।
प्रज्ञाभवोद्भवो योनिर्धर्मयोनिर्भवान्तकृत् ॥ ६० ॥

घनैकसारो वज्रात्मा सद्योजातो जगत्पतिः ।
गगनोद्भवः स्वयम्भूः प्रज्ञाज्ञानानलो महान् ॥ ६१ ॥

वैरोचनो महादीप्तिर्ज्ञानज्योतिर्विरोचनः ।
जगत्प्रदीपो ज्ञानोल्को महातेजाः प्रभास्वरः ॥ ६२ ॥

विद्याराजोऽग्रमन्त्रेशो मन्त्रराजो महार्थकृत् ।
महोष्णीषोऽद्भुतोष्णीषो विश्वदर्शी वियत्पतिः ॥ ६३ ॥

सर्वबुद्धात्मभावाग्र्यो जगदानन्दलोचनः ।
विश्वरूपी विधाता च पूज्यो मान्यो महाऋषिः ॥ ६४ ॥

कुलत्रयधरो मन्त्री महासमयमन्त्रधृक् ।
रत्नत्रयधरः श्रेष्ठस्त्रियानोत्तमदेशकः ॥ ६५ ॥

अमोघपाशो विजयी वज्रपाशो महाग्रहः ।
वज्राङ्कुशो महापाशः,

इति सुविशुद्धधर्मधातुज्ञानगाथाः पादोनपञ्चविंशतिः ।

वज्रभैरवभीकरः ॥ ६६ ॥

क्रोधराट् षण्मुखो भीमः षण्णेत्रः षड्भुजो बली ।
दंष्ट्राकरालः कङ्कालो हलाहलः शताननः ॥ ६७ ॥

यमान्तको विघ्नराजो वज्रवेगो भयङ्करः ।
विघुष्टवज्रो हृद्वज्रो मायावज्रो महोदरः ॥ ६८ ॥

कुलिशेशो वज्रयोनिर्वज्रमण्डो नभोपमः ।
अचलैकजटाटोपो गजचर्मपटार्द्रधृक् ॥ ६९ ॥

हाहाकारो महाघोरो हीहीकारो भयानकः ।
अट्टहासो महाहासो वज्रहासो महारवः ॥ ७० ॥

वज्रसत्त्वो महासत्त्वो वज्रराजो महासुखः ।
वज्रचण्डो महामोदो वज्रहूँकारहूँकृतिः ॥ ७१ ॥

वज्रबाणायुधधरो वज्रखड्गो निकृन्तनः ।
विश्ववज्रधरो वज्री एकवज्री रणञ्जहः ॥ ७२ ॥

वज्रज्वालाकरालाक्षो वज्रज्वालाशिरोरुहः ।
वज्रावेशो महावेशः शताक्षो वज्रलोचनः ॥ ७३ ॥

वज्ररोमाङ्कुरतनुर्वज्ररोमैकविग्रहः ।
वज्रकोटिनखारम्भो वज्रसारघनच्छविः ॥ ७४ ॥

वज्रमालाधरः श्रीमान् वज्राभरणभूषितः ।
हाहाट्टहासो निर्घोषो वज्रघोषः षडक्षरः ॥ ७५ ॥

मञ्जुघोषो महानादस्त्रैलोक्यैकरवो महान् ।
आकाशधातुपर्यन्तघोषो घोषवतां वरः ॥ ७६ ॥

इत्यादर्शज्ञानगाथाः पादेन सार्धं दश ।

तथताभूतनैरात्म्यभूतकोटिरनक्षरः ।
शून्यतावादिवृषभो गम्भीरोदारगर्जनः ॥ ७७ ॥

धर्मशङ्खो महाशब्दो धर्मगण्डी महारणः ।
अप्रतिष्ठितनिर्वाणो दशदिग्धर्मदुन्दुभिः ॥ ७८ ॥

अरूपो रूपवानग्र्यो नानारूपो मनोमयः ।
सर्वरूपावभासश्रीरशेषप्रतिबिम्बधृक् ॥ ७९ ॥

अप्रधृष्यो महेशाख्यस्त्रैधातुकमहेश्वरः ।
समुच्छ्रितार्यमार्गस्थो धर्मकेतुर्महोदयः ॥ ८० ॥

त्रैलोक्यैककुमाराङ्गः स्थविरो वृद्धः प्रजापतिः ।
द्वात्रिंशल्लक्षणधरः कान्तस्त्रैलोक्यसुन्दरः ॥ ८१ ॥

लोकज्ञानगुणाचार्यो लोकाचार्यो विशारदः।
नाथस्त्राता त्रिलोकाप्तः शरणं ताय्यनुत्तरः॥ ८२॥

गगनाभोगसम्भोगः सर्वज्ञज्ञानसागरः।
अविद्याण्डकोशसंभेत्ता भवपञ्जरदारणः॥ ८३॥

शमिताशेषसंक्लेशः संसारार्णवपारगः।
ज्ञानाभिषेकमुकुटः सम्यक्संबुद्धभूषणः॥ ८४॥

त्रिदुःखदुःखशमनस्त्र्यन्तोऽनन्तस्त्रिमुक्तिगः।
सर्वावरणनिर्मुक्त आकाशसमतां गतः॥ ८५॥

सर्वक्लेशमलातीतस्त्र्यध्वानध्वगतिं गतः।
सर्वसत्त्वमहानागो गुणशेखरशेखरः॥ ८६॥

सर्वोपधिविनिर्मुक्तो व्योमवर्त्मनि सुस्थितः।
महाचिन्तामणिधरः सर्वरत्नोत्तमो विभुः॥ ८७॥

महाकल्पतरुः स्फीतो महाभद्रघटोत्तमः।
सर्वसत्त्वार्थकृत्कर्त्ता हितैषी सत्त्ववत्सलः॥ ८८॥

शुभाशुभज्ञः कालज्ञः समयज्ञः समयो विभुः।
सत्त्वेन्द्रियज्ञो वेलज्ञो विमुक्तित्रयकोविदः॥ ८९॥

गुणी गुणज्ञो धर्मज्ञः प्रशस्तो मङ्गलोदयः।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यः कीर्तिर्लक्ष्मीर्यशः शुभः॥ ९०॥

महोत्सवो महाश्वासो महानन्दो महारतिः।
सत्कारः सत्कृतिर्भूतिः प्रमोदः श्रीर्यशस्पतिः॥ ९१॥

वरेण्यो वरदः श्रेष्ठः शरण्यः शरणोत्तमः।
महाभयारिः प्रवरो निःशेषभयनाशनः॥ ९२॥

शिखी शिखण्डी जटिलो जटी मौण्डी किरीटिमान्।
पञ्चाननः पञ्चशिखः पञ्चचोरकशेखरः॥ ९३॥

महाव्रतधरो मौञ्जी ब्रह्मचारी व्रतोत्तमः।
महातपास्तपोनिष्ठः स्नातको गौतमोऽग्रणीः॥ ९४॥

ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मा ब्रह्मनिर्वाणमाप्तवान्।
मुक्तिर्मोक्षो विमोक्षाङ्गो विमुक्तिः शान्तता शिवः॥ ९५॥

निर्वाणं निर्वृतिः शान्तिः श्रेयो निर्याणमन्तगः।
सुखदुःखान्तकृन्निष्ठा वैराग्यमुपधिक्षयः॥ ९६॥

अजयोऽनुपमोऽव्यक्तो निराभासो निरञ्जनः ।
निष्कलः सर्वगो व्यापी सूक्ष्मो बीजमनाश्रवः ॥ ९७ ॥

अरजो विरजो विमलो वान्तदोषो निरामयः ।
सुप्रबुद्धो विबुद्धात्मा सर्वज्ञः सर्ववित्परः ॥ ९८ ॥

विज्ञानधर्मतातीतो ज्ञानमद्वयरूपधृक् ।
निर्विकल्पो निराभोगस्त्र्यध्वसंबुद्धकार्यकृत् ॥ ९९ ॥

अनादिनिधनो बुद्ध आदिबुद्धो निरन्वयः ।
ज्ञानैकचक्षुरमलो ज्ञानमूर्तिस्तथागतः ॥ १०० ॥

वागीश्वरो महावादी वादिराड् वादिपुङ्गवः ।
वदतांवरो वरिष्ठो वादिसिंहोऽपराजितः ॥ १०१ ॥

समन्तदर्शी प्रामोद्यस्तेजोमाली सुदर्शनः ।
श्रीवत्सः सुप्रभो दीप्तिर्भाभासुरकरद्युतिः ॥ १०२ ॥

महाभिषग्वरः श्रेष्ठः शल्यहर्ता निरुत्तरः ।
अशेषभैषज्यतरुः क्लेशव्याधिर्महारिपुः ॥ १०३ ॥

त्रैलोक्यतिलकः कान्तः श्रीमान् नक्षत्रमण्डलः ।
दशदिग्व्योमपर्य्यन्तो धर्मध्वजमहोच्छ्रयः ॥ १०४ ॥

जगच्छत्रैकविपुलो मैत्रीकरुणमण्डलः ।
पद्मनृत्येश्वरः श्रीमान् रत्नच्छत्रो महाविभुः ॥ १०५ ॥

सर्वबुद्धमहाराजः सर्वबुद्धात्मभावधृक् ।
सर्वबुद्धमहायोगः सर्वबुद्धैकशासनः ॥ १०६ ॥

वज्ररत्नाभिषेकश्रीः सर्वरत्नाधिपेश्वरः ।
सर्वलोकेश्वरपतिः सर्ववज्रधराधिपः ॥ १०७ ॥

सर्वबुद्धमहाचित्तः सर्वबुद्धमनोगतिः ।
सर्वबुद्धमहाकायः सर्वबुद्धसरस्वती ॥ १०८ ॥

वज्रसूर्य्यमहालोको वज्रेन्दुविमलप्रभः ।
विरागादिमहारागो विश्ववर्णोज्ज्वलप्रभः ॥१०९ ॥

सम्बुद्धवज्रपर्यङ्को बुद्धसङ्गीतिधर्मधृक् ।
बुद्धपद्मोद्भवः श्रीमान् सर्वज्ञज्ञानकोषधृक् ॥ ११० ॥

विश्वमायाधरो राजा बुद्धविद्याधरो महान् ।
वज्रतीक्ष्णो महाखड्गो विशुद्धः परमाक्षरः ॥ १११ ॥

दुःखच्छेदमहायानवज्रधर्ममहायुधः ।
जिनजिग् वज्रगाम्भीर्यो वज्रबुद्धिर्यथार्थवित् ॥ ११२ ॥

सर्वपारमितापूरी सर्वभूमिविभूषणः ।
विशुद्धधर्मनैरात्म्यः सम्यग्ज्ञानेन्दुहृत्प्रभः ॥ ११३ ॥

मायाजालमहोद्योगः सर्वतन्त्राधिपः परः ।
अशेषवज्रपर्यङ्को निःशेषज्ञानकायधृक् ॥ ११४ ॥

समन्तभद्रः सुमतिः क्षितिगर्भो जगद्धृतिः ।
सर्वबुद्धमहागर्भो विश्वनिर्माणचक्रधृक् ॥ ११५ ॥

सर्वभावस्वभावाग्र्यः सर्वभावस्वभावधृक् ।
अनुत्पादधर्मा विश्वार्थः सर्वधर्मस्वभावधृक् ॥ ११६ ॥

एकक्षणमहाप्राज्ञः सर्वधर्मावबोधधृक् ।
सर्वधर्माभिसमयो भूतान्तमुनिरग्रधीः ॥ ११७ ॥

स्तिमितः सुप्रसन्नात्मा सम्यक्संबुद्धबोधिधृक् ।
प्रत्यक्षः सर्वबुद्धानां ज्ञानार्चिः सुप्रभास्वरः ॥ ११८ ॥

इति प्रत्यवेक्षणज्ञानगाथाः द्वाचत्वारिंशत् ।

इष्टार्थसाधकः परः सर्वापायविशोधकः ।
सर्वसत्त्वोत्तमो नाथः सर्वसत्त्वप्रमोचकः ॥ ११९ ॥

क्लेशसंग्रामशूरैकः अज्ञानरिपुदर्पहा ।
धीशृङ्गारधरः श्रीमान् वीरबीभत्सरूपधृक् ॥ १२० ॥

बाहुदण्डशताक्षेपपदनिक्षेपनर्त्तनः ।
श्रीमच्छतभुजाभोगगगनाभोगनर्त्तनः ॥ १२१ ॥

एकपादतलाक्रान्तमहीमण्डतले स्थितः ।
ब्रह्माण्डशिखराक्रान्तपादाङ्गुष्ठनखे स्थितः ॥ १२२ ॥

एकार्थोऽद्वयधर्मार्थः परमार्थोऽविनश्वरः ।
नानाविज्ञप्तिरूपार्थश्चित्तविज्ञानसंततिः ॥ १२३ ॥

अशेषभावार्थरतिः शून्यतारतिरग्रधीः ।
भवरागाद्यतीतश्च भवत्रयमहारतिः ॥ १२४ ॥

शुद्धः शुभ्राभ्रधवलः शरच्चन्द्रांशुसुप्रभः ।
बालार्कमण्डलच्छायो महारागनखप्रभः ॥ १२५ ॥

इन्द्रनीलाग्रसच्चीरो महानीलकचाग्रधृक् ।
महामणिमयूखश्रीर्बुद्धनिर्वाणभूषणः ॥ १२६ ॥

लोकधातुशताकम्पी ऋद्धिपादमहाक्रमः ।
महास्मृतिधरस्तत्त्वश्चतुःस्मृतिसमाधिराट् ॥ १२७ ॥

बोध्यङ्गकुसुमामोदस्तथागतगुणोदधिः ।
अष्टाङ्गमार्गनयवित् सम्यक्संबुद्धमार्गवित् ॥ १२८ ॥

सर्वसत्त्वमहासङ्गो निःसङ्गो गगनोपमः ।
सर्वसत्त्वमनोजातः सर्वसत्त्वमनोजवः ॥ १२९ ॥

सर्वसत्त्वेन्द्रियार्थज्ञः सर्वसत्त्वमनोहरः ।
पञ्चस्कन्धार्थतत्त्वज्ञः पञ्चस्कन्धविशुद्धधृक् ॥ १३० ॥

सर्वनिर्याणकोटिस्थः सर्वनिर्याणकोविदः ।
सर्वनिर्याणमार्गस्थः सर्वनिर्याणदेशकः ॥ १३१ ॥

द्वादशाङ्गभवोत्खातो द्वादशाकारशुद्धधृक् ।
चतुःसत्यनयाकारो अष्टज्ञानावबोधधृक् ॥ १३२ ॥

द्वादशाकारसत्यार्थः षोडशाकारतत्त्ववित् ।
विंशत्याकारसंबोधिर्विबुद्धः सर्ववित्परः ॥ १३३ ॥

अमेयबुद्धनिर्माणकायकोटिविभावकः ।
सर्वक्षणाभिसमयः सर्वचित्तक्षणार्थवित् ॥ १३४ ॥

नानायाननयोपायजगदर्थविभावकः ।
यानत्रितयनिर्यात एकयानफले स्थितः ॥ १३५ ॥

क्लेशधातुविशुद्धात्मा कर्मधातुक्षयङ्करः ।
ओघोदधिसमुत्तीर्णो योगकान्तारनिसृतः ॥ १३६ ॥

क्लेशोपक्लेशसंक्लेशसुप्रहीणसवासनः ।
प्रज्ञोपायमहाकरुणा अमोघजगदर्थकृत् ॥ १३७ ॥

सर्वसंज्ञाप्रहोणार्थो विज्ञानार्थो निरोधकृत् ।
सर्वसत्त्वमनोविषयः सर्वसत्त्वमनोगतिः ॥ १३८ ॥

सर्वसत्त्वमनोऽन्तस्थस्तच्चित्तसमताङ्गतः ।
सर्वसत्त्वमनोह्लादी सर्वसत्त्वमनोरतिः ॥ १३९ ॥

सिद्धान्तो विभ्रमापेतः सर्वभ्रान्तिविवर्जितः ।
निःसंदिग्धमतिस्त्र्यर्थः सर्वार्थस्त्रिगुणात्मकः ॥ १४० ॥

पञ्चस्कन्धार्थस्त्रिकालः सर्वक्षणविभावकः ।
एकक्षणाभिसंबुद्धः सर्वबुद्धस्वभावधृक् ॥ १४१ ॥

अनङ्गकायः कायाग्र्यः कायकोटिविभावकः ।
अशेषरूपसन्दर्शी रत्नकेतुर्महामणिः ॥ १४२ ॥

इति समताज्ञानगाथाश्चतुर्विंशतिः ।

सर्वसंबुद्धबोद्धव्यो बुद्धबोधिरनुत्तरः ।
अनक्षरो मन्त्रयोनिर्महामन्त्र कुलत्रयः ॥ १४३ ॥

सर्वमन्त्रार्थजनको महाबिन्दुरनक्षरः ।
पञ्चाक्षरो महाशून्यो बिन्दुशून्यः षडक्षरः ॥ १४४ ॥

सर्वाकारो निराकारः षोडशार्धार्धबिन्दुधृक् ।
अकलः कलनातीश्चतुर्थध्यानकोटिधृक् ॥ १४५ ॥

सर्वध्यानकलाभिज्ञः समाधिकुलगोत्रवित् ।
समाधिकायः कायाग्र्यः सर्वसंभोगकायराट् ॥ १४६ ॥

निर्माणकायः कायाग्र्यो बुद्ध निर्माणवंशधृक् ।
दशदिग्विश्वनिर्माणो यथावज्जगदर्थकृत् ॥ १४७ ॥

देवातिदेवो देवेन्द्रः सुरेन्द्रो दानवाधिपः ।
अमरेन्द्रः सुरगुरुः प्रमथः प्रमथेश्वरः ॥ १४८ ॥

उत्तीर्णभवकान्तार एकः शास्ता जगद्गुरुः ।
प्रख्यातदशदिग्लोको धर्मदानपतिर्महान् ॥ १४९ ॥

मैत्रीसन्नाहसन्नद्धः करुणावर्मवर्मितः ।
प्रज्ञाखड्गो धनुर्बाणः क्लेशाज्ञानरणञ्जहः ॥ १५० ॥

मारारिर्मारजिद्वीरश्चतुर्मारभयान्तकृत् ।
सर्वमारचमूजेता सम्बद्धो लोकनायकः ॥ १५१ ॥

वन्द्यः पूज्योऽभिवाद्यश्च माननीयश्च नित्यशः ।
अर्चनीयतमो मान्यो नमस्यः परमो गुरुः ॥ १५२ ॥

त्रैलोक्यैकक्रमगतिर्व्योमपर्यन्तविक्रमः ।
त्रैविद्यः श्रोत्रियः पूतः षडभिज्ञः षडनुस्मृतिः ॥ १५३ ॥

बोधिसत्त्वो महासत्त्वो लोकातीतो महर्द्धिकः ।
प्रज्ञापारमितानिष्ठः प्रज्ञातत्त्वत्वमागतः ॥ १५४ ॥

आत्मवित्परवित्सर्वः सर्वीयो ह्यग्रपुद्गलः ।
सर्वोपमामतिक्रान्तो ज्ञेयो ज्ञानाधिपः परः ॥ १५५ ॥

धर्मदानपतिः श्रेष्ठश्चतुर्मुद्रार्थदेशकः ।
पर्युपास्यतमो जगतां निर्याणत्रययायिनाम् ॥ १५६ ॥

परमार्थविशुद्धश्रीस्त्रैलोक्यसुभगो महान् ।
सर्वसम्पत्करः श्रीमान् मञ्जुश्रीः श्रीमतांवरः ॥ १५७ ॥

इति कृत्यानुष्ठानज्ञानगाथाः पञ्चदश ।

नमस्ते वरदवज्राग्र्य भूतकोटे नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते शून्यतागर्भ बुद्धबोधे नमोस्तु ते ॥ १५८ ॥

बुद्धराग नमस्तेऽस्तु बुद्धकाम नमो नमः ।
बुद्धप्रीते नमस्तुभ्यं बुद्धमोद नमो नमः ॥ १५९ ॥

बुद्धस्मित नमस्तुभ्यं बुद्धहास नमो नमः ।
बुद्धवाच नमस्तुभ्यं बुद्धभाव नमो नमः ॥ १६० ॥

अभवोद्भव नमस्तुभ्यं नमस्ते बुद्धसंभव ।
गगनोद्भव नमस्तुभ्यं नमस्ते ज्ञानसंभव ॥ १६१ ॥

मायाजाल नमस्तुभ्यं नमस्ते बुद्धनाटक ।
नमस्ते सर्वसर्वेभ्यो ज्ञानकाय नमोऽस्तु ते ॥ १६२ ॥

इति पञ्चतथागतज्ञानस्तुतिगाथाः पञ्च ।

इयमसौ वज्रपाणेः वज्रधरभगवतो ज्ञानमूर्तेः सर्वतथागतज्ञानकायस्य मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्यावेणिकपरिशुद्धा नामसङ्गीतिस्तवानुत्तरप्रीतिप्रासादमहोद्बिल्य संजननार्थं, कायवाङ्मनोगुह्यपरिशुद्ध्यै, अपरिपूर्णपरिशुद्धभूमिपारमितापुण्यज्ञानसंभारपरिपूरिपरिशुद्ध्यै, अनधिगतानुत्तरार्थस्याधिगमाय, अप्राप्तस्य प्राप्त्यै, यावत्सर्वतथागतसर्वधर्मनेत्रीसंधारणार्थं च मया देशिता, संप्रकाशिता, विवृता, विभजितोत्तानीकृता, अधिष्ठिता चेयं मया वज्रपाणे वज्रधर तव सन्ताने चित्ते सर्वमन्त्रधर्मताधिष्ठानेनेति ॥ १६३ ॥

इति प्रथमचक्रस्येयमनुशंसा एकादश पदानि

पुनरपरमियं वज्रपाणे वज्रधर नामसङ्गीतिः सुपरिशुद्धा, पर्यवदाता, सर्वज्ञज्ञानकायवाङ्मनोगुह्यभूता, सर्वतथागतानां बुद्धबोधिः, सम्यक्संबुद्धानामभिसमयः, सर्वतथागतानामनुत्तरः, धर्मधातुगतिः सुगतानाम्, सर्वमारबलपराजयो जिनानाम्,

दशबलवलिता सर्वदशबलानाम्, सर्वज्ञता सर्वज्ञज्ञानानामागमः सर्वधर्माणाम्, समुदागमः सर्वबुद्धधर्माणाम्, विमलसुपरिशुद्धपुण्यज्ञानसंभारपरिपूरी सर्वमहाबोधिसत्त्वानाम्, प्रसूतिः सर्वश्रावकप्रत्येकबुद्धानाम्, क्षेत्रं सर्वदेवमनुष्यसम्पत्तेः, प्रतिष्ठा महायानस्य, संभवो बोधिसत्त्वचर्यायाः, निष्ठा सम्यगार्यमार्गस्य, निकषो विमुक्तीनाम्, उत्पत्तिर्निर्वाणमार्गस्य, अनुच्छेदस्तथागतवंशस्य, प्रवृद्धिर्महाबोधिसत्त्वकुलगोत्रस्य, निग्रहः सर्वपरप्रवादिनाम्, विध्वंसनं सर्वतीर्थिकानाम्, पराजयश्चतुर्मारिबलचमूसेनायाः, संग्रहः सर्वसत्त्वानाम्, आर्यमार्गपरिपाकः सर्वनिर्याणयायिनाम्, समाधिश्चतुर्ब्रह्मविहारविहारिणाम्, ध्यानमेकाग्रचित्तानाम्, योगः कायवाङ्मनोऽभियुक्तानाम्, विसंयोगः सर्वसंयोजनानाम्, प्रहाणं सर्वक्लेशोपक्लेशानाम्, व्युपशमः सर्वावरणानाम्, विमुक्तिः सर्वबन्धनानाम्, मोक्षः सर्वोपधीनाम्, शान्तिः सर्वचित्तोपप्लवानाम्, आकरः सर्वसम्पत्तीनाम्, परिहाणिः सर्वविपत्तीनाम्, पिधानं सर्वापायद्वाराणाम्, सत्पथो विमुक्तिपुरस्य, अप्रवृत्तिः संसारचक्रस्य, प्रवर्त्तनं धर्मचक्रस्य, उच्छ्रितछत्रध्वजपताका तथागतशासनस्य, अधिष्ठानं सर्वधर्मदेशनायाः, क्षिप्रसिद्धिर्मन्त्रमुखचर्याचारिणां बोधिसत्त्वानाम्, भावनाधिगमः प्रज्ञापारमिताभियुक्तानां बोधिसत्त्वानाम्, शून्यताप्रतिवेधोऽद्वयप्रतिवेधभावनाभियुक्तानाम्, निष्पत्तिः सर्वपारमितासंभारस्य, परिशुद्धिः सर्वभूमिपारमितापरिपूर्याणाम्, प्रतिवेधः सम्यक्चतुरार्यसत्यानाम्, सर्वधर्मैकचित्तप्रतिवेधश्चतुःस्मृत्युपस्थानानाम्, यावच्छब्दपरिसमाप्तिः सर्वबुद्धगुणानामियं नामसङ्गीतिः ॥

इति द्वितीयचक्रस्येयमनुशंसापदानि द्वापञ्चाशत् ।

पुनरपरं वज्रपाणे वज्रधर इयं नामसङ्गीतिः सर्वसत्त्वानामशेषकायवाङ्मनःसमुदाचारपापप्रशमनी, सर्वसत्त्वानां सर्वापायविशोधिनी, सर्वदुर्गतिनिवारिणी, सर्वकर्मावरणसमुच्छेदनकरी, सर्वाष्टक्षणसमुत्पादस्यानुत्पादनकरी, अष्टमहाभयव्युपशमनकरी, सर्वदुःस्वप्नविनाशनकरी, सर्वदुर्निमित्तव्यपोहनकरी, दुःशकुनविघ्नव्युपशमनकरी, सर्वमारारिकर्मदूरीकरणी, सर्वकुशलमूलपुण्योपचयकरी, सर्वायोनिशोमनसिकारस्यानुत्पादनकरी, सर्वमदमानदर्पाहङ्कारनिर्घातनकरी, सर्वदुःखदौर्मनस्यानुत्पादनकरी, सर्वतथागतानां हृदयभूता, सर्वबुद्धबोधिसत्त्वानां गुह्यभूता, सर्वश्रावकप्रत्येकबुद्धानां रहस्यभूता, सर्वमुद्रामन्त्रभूता, सर्वधर्मानभिलाप्यवादिनां स्मृतिसम्प्रजन्यसंजननी, अनुत्तरप्रज्ञामेधाकरी, आरोग्यबलैश्वर्यसम्पत्करी, श्रीशुभशान्तिकल्याणप्रवर्धनकरी, यशःकीर्तिश्लोकस्तुतिप्रकाशनकरी, सर्वव्याधिमहाभयव्युपशमनकरी, पूततरा पूततराणाम्, पवित्रतरा पवित्रतराणाम्, धन्यतमा धन्यतमानाम्, सर्वमाङ्गल्यतमा सर्वमाङ्गल्यतमानाम्, शरणं शरणार्थि-

नाम्, लयनं लयनार्थिनाम्, त्राणं त्राणार्थिनाम्, परायणं परायणानाम्, द्वीपभूता द्वीपार्थिनाम्, अगतिकानामनुत्तरगतिभूता, यानपात्रभूता भवसागरपारगामिनाम्, महाभैषज्यराजभूता सर्वव्याधिनिर्घातनतया, प्रज्ञाभूता हेयोपादेयभावविभावनतया, ज्ञानालोकभूता सर्वतमोऽन्धकारकुदृष्ट्यपनयनाय, चिन्तामणिराजभूता सर्वसत्त्वाशयाभिप्रायपरिपूरणाय, सर्वज्ञज्ञानभूता मञ्जुश्रीज्ञानकायप्रतिलम्भाय, परिशुद्धज्ञानादर्शभूता पञ्चचक्षुःप्रतिलम्भाय, षट्पारमितापरिपूरीभूता आमिषाभयधर्मदानोत्सृजनतया, दशभूमिप्रतिलम्बभूता पुण्यज्ञानसंभारसमाधिपरिपूरणतया, अद्वयधर्मता द्वयधर्मविगतत्वादतथतारूपता अनन्यधर्मताध्यारोपविगतत्वाद्, भूतकोटिरूपता परिशुद्धसर्वतथागतज्ञानकायस्वभावतया, सर्वाकारमहाशून्यतारूपता अशेषकुदृष्टिगतिगहननिर्घातनतया, सर्वधर्मानभिलाप्यरूपेयं नामसङ्गीतिः यद्धताद्वयधर्मतावतारणार्थं नामसंधारणप्रकाशनतया ॥

इति तृतीय चक्रस्येयमनुशंसापदानि द्वापञ्चाशत् ।

पुनरपरं वज्रपाणे वज्रधर कश्चित् कुलपुत्रो वा कुलदुहिता वा मन्त्रमुखचर्याचारी इमां भगवतो मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्य सर्वतथागतज्ञानकायस्य भगवतो ज्ञानमूर्तेरद्वयपरमार्थां नामसङ्गीतिं नामचूडामणिं सकलपरिसमाप्तामन्यूनामखण्डामेभिरेव गाथापदव्यञ्जनैः प्रत्यहं त्रिकालं धारयिष्यति, वाचयिष्यति, पर्यवाप्स्यति, योनिशश्च मनसि करिष्यति, परेभ्यश्च विस्तरेण यथासमयं यथावत्संप्रकाशयिष्यति, प्रत्येकं चान्यतमान्यतमं नामार्थं मञ्जुश्रीज्ञानकायमालम्बनीकृत्य एकाग्रमनसा भावयिष्यति, अधिमुक्तितत्त्वमनस्काराभ्यां समन्तमुखविहारविहारी सर्वधर्मप्रतिवेधिकया परमया अनाविलया प्रज्ञाविद्धया श्रद्धया समन्वागतः सन् तस्य त्र्यध्वाबद्धसंगिनः सर्वबुद्धबोधिसत्त्वाः संगम्य समागम्य सर्वधर्ममुखान्युपदर्शयिष्यन्ति, आत्मभावं चोपदर्शयिष्यन्ति, सर्वबुद्धबोधिसत्त्वाधिष्ठानं च सर्वकायवाङ्मनोभिस्तस्य सन्ताने चित्ते सम्यगधिष्ठास्यन्ति, सर्वबुद्धबोधिसत्त्वानुग्रहेण चानुग्रहीष्यन्ति, सर्वधर्मवैशारद्यप्रतिभानश्चोपसंहरिष्यन्ति, सर्वार्हच्छ्रावकप्रत्येकबुद्धाश्चार्यधर्मप्रमाणतयात्मभावं चोपदर्शयिष्यन्ति, दुर्दान्तदमकाश्च महाक्रोधराजानो महावज्रधरादयो जगत्परित्राणभूता नानानिर्माणकायैरोजोबलं तेजोऽप्रधृष्यतां सर्वमन्त्रमुद्राभिसमयमण्डलान्युपसंहरिष्यन्ति, अशेषाश्च मन्त्रमहाविद्याराज्यः सर्वविघ्नविनायकमारारिप्रत्यङ्गिरामहापराजिताः सरात्रिन्दिवं प्रतिक्षणं सर्वेर्यापथेषु रक्षावरणगुप्तिं करिष्यन्ति, ये च ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्ररुद्रनारायणसनत्कुमारमहेश्वरकार्तिकेयमहाकालनन्दिकेश्वरयमवरुणकुबेरहारतीदशदिग्लोकपालाश्च ते सर्वे सततसमितं रात्रिन्दिवं गच्छतस्तिष्ठतः शयानस्य निषण्णस्य स्वपतो जाग्रतः समाहितस्यासमाहितस्य च एकाकिना बहुजनमध्ये गतस्य यावद्ग्रामनगरनिगमजन-

पदराष्ट्रराजधानीगतस्य इन्द्रकीलरथ्याप्रतोलीवीथीनगरद्वारराजमार्गचत्वरशृङ्गाटकनगरान्तरपणपण्यशालामध्यगतस्य यावच्छून्यागारगिरिकन्दरनदीवनगहनोपगतस्य उच्छिष्टस्यानुच्छिष्टस्य मत्तस्य प्रमत्तस्य सदा सर्वथा रक्षावरणगुप्तिं करिष्यन्ति, रात्रिन्दिवं च परं स्वस्त्ययनं करिष्यन्ति, ये चान्ये देवनागयक्षगन्धर्वासुरगरुडकिन्नरमहोरगमनुष्याऽमनुष्या ये चान्ये ग्रहनक्षत्रगणपतयो याश्च सप्तमातरो याश्च यक्षिणीराक्षसीपिशाच्यस्ताः सर्वाः संहिताः समग्राः ससैन्याः सपरीवाराः सर्वेर्यापथेषु परां रक्षावरणगुप्तिं करिष्यन्ति, परं च तस्य काये ओजोबलं प्रक्षेप्स्यन्ति, आरोग्यमायुर्वृद्धिं चोपसंहरिष्यन्ति ॥

इति चतुर्थचक्रस्येयमनुशंसापदान्येकोनविंशतिः ।

पुनरपरं वज्रपाणे वज्रधर य इमां नामसङ्गीतिं नामचूडामणिं प्रत्यहमखण्डसमाधानतस्त्रिकृत्वा कण्ठगतामावर्तयिष्यति, पुस्तकगतां वा पठमानः प्रवर्तयिष्यति, भगवतो मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्य रूपमालम्बयन्, तद्रूपमनुचिन्तयन् तद्रूपमनुध्यायन् तमेवं रूपं निर्माणकायैर्न चिरादेव विनयवंशमुपादाय रक्षति, गगनतलगताश्च बुद्धबोधिसत्त्वाः नानानिर्माणरूपकायैः सहगता रक्षन्ति, न च तस्य सत्त्वस्य जातु कथमपि दुर्गत्यपायपतनं भविष्यति, न नीचकुलोपपत्तिर्भविष्यति, न प्रत्यन्तजनपदोपपत्तिर्भविष्यति, न हीनेन्द्रियो भविष्यति, न मिथ्यादृष्टिकुलोपपत्तिर्भविष्यति, नाबुद्धकेषु बुद्धक्षेत्रेषूत्पत्स्यते, न च बुद्धोत्पादविमुखता तद्देशितधर्मविमुखपरोक्षता भविष्यति, न च दीर्घायुष्केषु देवेषूत्पत्स्यते, न च दुर्भिक्षरोगशस्त्रान्तःकल्पेषूत्पत्स्यते, न च पञ्चकषायकालेषूत्पत्स्यते, न च राजशत्रुचोरभयं भविष्यति, न सर्वोपकरणवैकल्यदारिद्र्यभयं भविष्यति, नाश्लोकाभ्याख्याननिन्दायशोऽकीर्तिभयं भविष्यति, सुजातिकुलगोत्रसम्पन्नश्च भविष्यति, समन्तप्रासादिकरूपवर्णसमन्वागतश्च भविष्यति, प्रियो मन आपः परमसुखसंवासः प्रियदर्शनश्च, लोकानां भविष्यति, शुभसौभाग्यादेयवाक्यश्च लोकानां भविष्यति, यत्र यत्रोपपत्स्यते तत्र तत्र जातिस्मरो भविष्यति, महाभोगः महापरीवारोऽक्षयपरीवारश्च भविष्यति, अग्रणीः सर्वसत्त्वानामग्रगुणसमन्वागतो भविष्यति, प्रकृत्या च षट्पारमितागुणसमन्वागतो भविष्यति, चतुर्ब्रह्मविहारविहारी भविष्यति, स्मृतिसंप्रजन्योपायबलप्रणिधिज्ञानसमन्वागतश्च भविष्यति, सर्वशास्त्रविशारदो वाग्मी च भविष्यति, स्पष्टवागजडः पटुश्च भविष्यति, दक्षोऽनलसः संतुष्टो महार्थो वितृष्णश्च भविष्यति, परमविश्वासी च सर्वसत्त्वानामाचार्यगुरुसंमतश्च भविष्यति, अश्रुतपूर्वाणि च तस्य सर्वशिल्पकलाभिज्ञाज्ञानशास्त्राणि चार्थतो ग्रन्थतश्च प्रतिभासमागमिष्यन्ति, सुपरिशुद्धशीलाजीवसमुदाचारचारी च भविष्यति, सुप्रव्रजितः रूपसंपन्नश्च भविष्यति, अप्रमुषितसर्वज्ञता

बोधिचित्तश्च भविष्यति, न जातु श्रावकार्हत्प्रत्येकबुद्धनियमावक्रान्तिगतश्च भविष्यति ॥

इति पञ्चमचक्रस्येयमनुशंसापदान्येकपञ्चाशत् ।

एवं वज्रपाणे वज्रधर अप्रमेयगुणसमन्वागतोऽसौ मन्त्रमुखचर्याचारी भविष्यति, अन्यैश्चाप्रमेयैरेवंप्रकारैर्गुणगणैः समन्वागतो भविष्यति, अचिरादेव वज्रपाणे वज्रधर परमार्थनामसङ्गीतिसंधारकः पुरुषपुद्गलः सुसंभृतपुण्यज्ञानसंभारः क्षिप्रतरं बुद्धगुणान्समुदानीयानुत्तरां सम्यक्संबोधिमभिसंभोत्स्यते, अनल्पकल्पापरिनिर्वाणधर्माणां सर्वसत्त्वानामनुत्तरधर्मदेशकोऽधिष्ठाता दशदिक्सद्धर्मदुन्दुभिर्धर्मराजः ॥

इति षष्ठचक्रस्येयमनुशंसाप्रमेया ।

ॐ सर्वधर्माभावस्वभावविशुद्धवज्र अ आ अं अः प्रकृतिपरिशुद्धाः सर्वधर्मा यदुत सर्वतथागतज्ञानकायस्य मञ्जुश्रीपरिशुद्धितामुपादायेति ।

अ आ सर्वतथागतहृदय हर हर ॐ हूँ ह्रीं भगवन् ज्ञानमूर्तिवागीश्वर महावाचः सर्वधर्मगगनामलसुपरिशुद्धधर्मधातुज्ञानगर्भ आः ।

इति मन्त्रविन्यासः ।

अथ वज्रधरः श्रीमान् हृष्टतुष्टः कृताञ्जलिः ।
प्रणम्य नाथं संबुद्धं भगवन्तं तथागतम् ॥

अन्यैश्च बहुभिर्नाथैर्गुह्येन्द्रैर्वज्रपाणिभिः ।
स सार्द्धं क्रोधराजानैः प्रोवाचोच्चैरिदं वचः ॥

अनुमोदामहे नाथ साधु साधु सुभाषितम् ।
कृतोऽस्माकं महानर्थः सम्यक्संबोधिप्रापकः ॥

जगतश्चाप्यनाथस्य विमुक्तिफलकाङ्क्षिणः ।
श्रेयोमार्गो विशुद्धोऽयं मायाजालनयोदितः ॥

गम्भीरोदारवैपुल्यो महार्थो जगदर्थकृत् ।
बुद्धानां विषयो ह्येष सम्यक्संबुद्धभाषितः ॥

इति उपसंहारगाथाः पञ्च ।

आर्यमायाजालषोडशसाहस्रिकान्महायोगतन्त्रान्तःपातिसमाधिजालपटलाद् भगवता श्रीशाक्यमुनिना भाषिता भगवतो मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्याद्वयपरमार्था नामसङ्गीतिः परिसमाप्ता ।

अध्यर्धशतकं नाम स्तोत्रम्

आचार्यमातृचेटविरचितम्

१ उपोद्घातः

नमो बुद्धाय

सर्वदा सर्वथा सर्वे यस्य दोषा न सन्ति ह ।
सर्वे सर्वाभिसारेण यत्र चावस्थिता गुणाः ॥ १ ॥

तमेव शरणं गन्तुं तं स्तोतुं तमुपासितुम् ।
तस्यैव शासने स्थातुं न्याय्यं यद्यस्ति चेतना ॥ २ ॥

सवासनाश्च ते दोषा न सन्त्येकस्य तायिनः ।
सर्वे सर्वविदः सन्ति गुणास्ते चानपायिनः ॥ ३ ॥

न हि प्रतिनिविष्टोऽपि मनोवाक्कायकर्मसु ।
सह धर्मेण लभते कश्चिद्भगवतोऽन्तरम् ॥ ४ ॥

सोऽहं प्राप्य मनुष्यत्वं ससद्धर्ममहोत्सवम् ।
महार्णवयुगच्छिद्रकूर्मग्रीवार्पणोपमम् ॥ ५ ॥

अनित्यताव्यनुसृतां कर्मच्छिद्रससंशयाम् ।
आत्तसारां करिष्यामि कथं नेमां सरस्वतीम् ॥ ६ ॥

इत्यसंख्येयविषयानवेत्यापि गुणान्मुनेः ।
तदेकदेशप्रणयः क्रियते स्वार्थगौरवात् ॥ ७ ॥

स्वयम्भुवे नमस्तेऽस्तु प्रभूताद्भुतकर्मणे ।
यस्य संख्याप्रभावाभ्यां न गुणेष्वस्ति निश्चयः ॥ ८ ॥

इयन्त इति नास्त्यन्त ईदृशा इति का कथा ।
पुण्या इत्येव तु गुणान्प्रति ते मुखरा वयम् ॥ ९ ॥

उपोद्घातस्तवो नाम प्रथमः परिच्छेदः ।

हेतुस्तवः

विषह्यमविषह्यं वेत्यवधूय विचारणाम् ।
स्वयमभ्युपपन्नं ते निराक्रन्दमिदं जगत् ॥ १० ॥

अव्यापारितसाधुस्त्वं त्वमकारणवत्सलः ।
असंस्तुतसखाश्च त्वमनवस्कृतबान्धवः ॥ ११ ॥

स्वमांसान्यपि दत्तानि वस्तुष्वन्येषु का कथा ।
प्राणैरपि त्वया साधो मानितः प्रणयी जनः ॥ १२ ॥

स्वैः शरीरैः शरीराणि प्राणैः प्राणाः शरीरिणाम् ।
जिघांसुभिरुपात्तानां क्रीतानि शतशस्त्वया ॥ १३ ॥

न दुर्गतिभ्यां नेष्टा[भ्या]मभिप्रार्थयता गतिम् ।
केवलाशयशुद्ध्यैव शोलं सात्मीकृतं त्वया ॥ १४ ॥

जिह्मानां नित्यविक्षेपादृजूनां नित्यसेवनात् ।
कर्मणां परिशुद्धानां त्वमेकायनतां गतः ॥ १५ ॥

पीड्यमानेन बहुशस्त्वया कल्याणचेतसा ।
क्लेशेषु विवृतं तेजो जनः क्लिष्टोऽनुकम्पितः ॥ १६ ॥

परार्थे त्यजतः प्राणान् या प्रीतिरभवत् तव ।
न सा नष्टोपलब्धेषु प्राणेषु प्राणिनां भवेत् ॥ १७ ॥

यद्रुजा निरपेक्षस्य च्छिद्यमानस्य तेऽसकृत् ।
वधकेष्वपि सत्त्वेषु कारुण्यमभवत् प्रभो ॥ १८ ॥

सम्यक्सम्बोधिबीजस्य चित्तरत्नस्य तस्य ते ।
त्वमेव वीर सारज्ञो दूरे तस्येतरो जनः ॥ १९ ॥

नाकृत्वा दुष्करं कर्म दुर्लभं लभ्यते पदम् ।
इत्यात्मनिरपेक्षेण वीर्यं संवर्धितं त्वया ॥ २० ॥

विशेषोत्कर्षनियमो न कदाचिदभूत् तव ।
अतस्त्वयि विशेषाणां छिन्नस्तरतमक्रमः ॥ २१ ॥

सुसुखेष्वपि सङ्गोऽभूत् सफलेषु समाधिषु ।
न ते नित्यानुबद्धस्य महाकरुणया हृदि ॥ २२ ॥

त्वादृशान् पीडयत्येव नानुगृह्णाति तत् सुखम् ।
प्रणीतमपि सद्वृत्त यदसाधारणं परैः ॥ २३ ॥

विमिश्रात् सारमादत्तं सर्वं पीतमकल्मषम् ।
त्वया सूक्तं दुरुक्तं तु विषवत् परिवर्जितम् ॥ २४ ॥

क्रीणता रत्नसारज्ञ प्राणैरपि सुभाषितम् ।
पराक्रान्तं त्वया बोधौ तासु तासूपपत्तिषु ॥ २५ ॥

इति त्रिभिरसंख्येयैरेवमुद्यच्छता त्वया ।
व्यवसायद्वितीयेन प्राप्तं पदमनुत्तरम् ॥ २६ ॥

हेतुस्तवो नाम द्वितीयः परिच्छेदः ।

३ निरुपमस्तवः

अकृत्वेर्ष्यां विशिष्टेषु हीनाननवमत्य च ।
अगत्वा सदृशैः स्पर्धां त्वं लोके श्रेष्ठतां गतः ॥ २७ ॥

हेतुष्वभिनिवेशोऽभूद् गुणानां न फलेषु ते ।
तेन सम्यक्प्रतिपदा त्वयि निष्ठां गुणा गताः ॥ २८ ॥

तथात्मा प्रचयं नीतस्त्वया सुचरितैर्यथा ।
पुण्यायतनतां प्राप्तान्यपि पादरजांसि ते ॥ २९ ॥

कर्शयित्वोद्धृता दोषा वर्धयित्वा विशोधिताः ।
गुणास्तेन सुनीतेन परां सिद्धिं स्वमध्यगाः ॥ ३० ॥

तथा सर्वाभिसारेण दोषेषु प्रहृतं त्वया ।
यथैषामात्मसन्ताने वासनापि न शेषिता ॥ ३१ ॥

तथा संभृत्य संभृत्य त्वयात्मन्याहिता गुणाः ।
प्रतिरूपकमप्येषां यथा नान्यत्र दृश्यते ॥ ३२ ॥

उपघातावरणवन्मितकालं प्रदेशि च ।
सुलभातिशयं सर्वमुपमावस्तु लौकिकम् ॥ ३३ ॥

अद्वन्द्विनामगम्यानां ध्रुवाणामनिवर्तिनाम् ।
अनुत्तराणां का तर्हि गुणानामुपमाऽस्तु ते ॥ ३४ ॥

गोष्पदोत्तानतां याति गाम्भीर्यं लवणाम्भसः।
यदा ते बुद्धिगाम्भीर्यमगाधापारमीक्ष्यते ॥ ३५ ॥

शिरीषपक्ष्माग्रलघु स्थैर्यं भवति पार्थिवम्।
अकम्प्ये सर्वधर्माणां स्वत्स्थैर्येऽभिमुखीकृते ॥ ३६ ॥

अज्ञानतिमिरघ्नस्य ज्ञानालोकस्य ते मुने।
न रविर्विषये भूमिं खद्योतिमपि विन्दति ॥ ३७ ॥

मलिनत्वमिवायान्ति शरच्चन्द्राम्बराम्भसाम्।
तव वाग्बुद्धिचेष्टानां शुद्धिं प्रति विशुद्धयः ॥ ३८ ॥

अनेन सर्वं व्याख्यातं यत् किञ्चित्साधु लौकिकम्।
दूरे हि बुद्धधर्माणां लोकधर्मास्तपस्विनः ॥ ३९ ॥

यस्यैव धर्मरत्नस्य प्राप्त्या प्राप्तस्त्वमग्रताम्।
तेनैव केवलं साधो साम्यं ते तस्य च त्वया ॥ ४० ॥

आत्मेच्छाच्छलमात्रं तु सामान्योपांशु किंचन।
यत्रोपक्षिप्य कथ्येत सा वक्तुरतिलोलता ॥ ४१ ॥

निरुपमस्तवो नाम तृतीयः परिच्छेदः।

४ अद्भुतस्तवः

प्रतन्विव हि पश्यामि धर्मतामनुचिन्तयन्।
सर्वं चार्वाजितं मारविजयं प्रति ते जगत् ॥ ४२ ॥

महतोऽपि हि संरम्भात् प्रतिहन्तुं समुद्यताः।
क्षमाया नातिभारोऽस्ति पात्रस्थाया विशेषतः ॥ ४३ ॥

यत्तु मारजयान्वक्षं सुमहत्क्लेशवैशसम्।
तस्यामेव कृतं रात्रौ तदेव परमाद्भुतम् ॥ ४४ ॥

तमोविधमने भानोर्यः सहस्रांशुमालिनः।
वीर विस्मयमागच्छेत् स तीर्थ्यविजये तव ॥ ४५ ॥

सरागो वीतरागेण जितरोषेण रोषणः।
मूढो विगतमोहेन त्रिभिर्नित्यं जितास्त्रयः ॥ ४६ ॥

प्रशंससि च सद्धर्मानसद्धर्मान् विगर्हसि ।
अनुरोधविरोधौ च न स्तः सदसतोस्तव ॥ ४७ ॥

नैवार्हत्सु न तीर्थ्येषु प्रतिघानुनयं प्रति ।
यस्य ते चेतसोऽन्यत्वं तस्य ते का स्तुतिर्भवेत् ॥ ४८ ॥

गुणेष्वपि न संगोऽभूत् तृष्णा न गुणवत्स्वपि ।
अहो ते सुप्रसन्नस्य सत्त्वस्य परिशुद्धता ॥ ४९ ॥

इन्द्रियाणां प्रसादेन नित्यकालानपायिना ।
मनो नित्यप्रसन्नं ते प्रत्यक्षमिव दृश्यते ॥ ५० ॥

आबालेभ्यः प्रसिद्धास्ते मतिस्मृतिविशुद्धयः ।
गमिता भावपिशुनैः सुव्याहृतसुचेष्टितैः ॥ ५१ ॥

अद्‌भुतस्तवो नाम चतुर्थः परिच्छेदः ।

५ रूपस्तवः

उपशान्तं च कान्तं च दीप्तमप्रतिघाति च ।
निभृतं चोर्जितं चेदं रूपं कमिव नाक्षिपेत् ॥ ५२ ॥

येनापि शतशो दृष्टं योऽपि तत्पूर्वमीक्षते ।
रूपं प्रीणाति ते चक्षुः समं तदुभयोरपि ॥ ५३ ॥

असेचनकभावाद्धि सौम्यभावाच्च ते वपुः ।
दर्शने दर्शने प्रीतिं विदधाति नवां नवाम् ॥ ५४ ॥

अधिष्ठानगुणैर्गात्रमधिष्ठातृगुणैर्गुणः ।
परया संपदोपेतास्तवान्योन्यानुरूपया ॥ ५५ ॥

क्वान्यत्र सुनिविष्टाः स्युरिमे ताथागता गुणाः ।
ऋते रूपात्तवैवास्माल्लक्षणव्यञ्जनोज्ज्वलात् ॥ ५६ ॥

धन्यमस्मीति ते रूपं वदतीवाश्रितान् गुणान् ।
सुनिक्षिप्ता वयमिति प्रत्याहुरिव तद्‌गुणाः ॥ ५७ ॥

रूपस्तवो नाम पञ्चमः परिच्छेदः ।

६ करुणास्तवः

सर्वमेवाविशेषेण क्लेशैर्बद्धमिदं जगत् ।
त्वं जगत्क्लेशमोक्षार्थं बद्धः करुणया चिरम् ॥ ५८ ॥

कं नु प्रथमतो वन्दे त्वां महाकरुणामुत ।
ययैवमपि दोषज्ञस्त्वं संसारे धृतश्चिरम् ॥ ५९ ॥

विवेकसुखसात्म्यस्य यदाकीर्णस्य ते गताः ।
काला लब्धप्रसरया तत् ते करुणया कृतम् ॥ ६० ॥

शान्तादरण्याद् ग्रामान्तं त्वं हि नाग इव ह्रदात् ।
विनेयार्थं करुणया विद्ययेवावकृष्यसे ॥ ६१ ॥

परमोपशमस्थोऽपि करुणापरवत्तया ।
कारितस्त्वं पदन्यासं कुशीलवकलास्वपि ॥ ६२ ॥

ऋद्धिर्या सिंहनादा ये स्वगुणोद्भावनाश्च याः ।
वान्तेच्छोपविचारस्य कारुण्यनिकषः स ते ॥ ६३ ॥

परार्थैकान्तकल्याणी कामं स्वाश्रयनिष्ठुरा ।
त्वय्येव केवलं नाथ करुणा करुणाभवत् ॥ ६४ ॥

तथा हि कृत्वा शतधा धीरा बलिमिव क्वचित् ।
परेषामर्थसिद्ध्यर्थं त्वां विक्षिप्तवती दिशः ॥ ६५ ॥

त्वदिच्छयैव तु व्यक्तमनुकूला प्रवर्तते ।
तथा हि बाधमानापि त्वां सती नापराध्यते ॥ ६६ ॥

करुणास्तवो नाम षष्ठः परिच्छेदः ।

७ वचनस्तवः

सुपदानि महार्थानि तथ्यानि मधुराणि च ।
गूढोत्तानोभयार्थानि समासव्यासवन्ति च ॥ ६७ ॥

कस्य न स्यादुपश्रुत्य वाक्यान्येवंविधानि ते ।
त्वयि प्रतिहतस्यापि सर्वज्ञ इति निश्चयः ॥ ६८ ॥

प्रायेण मधुरं सर्वमगत्या किञ्चिदन्यथा ।
वाक्यं तवार्थसिद्धया तु सर्वमेव सुभाषितम् ॥ ६९ ॥

यच्छ्लक्ष्णं यच्च परुषं यद्वा तदुभयान्वितम् ।
सर्वमेवैकरसतां विमर्दे याति ते वचः ॥ ७० ॥

अहो सुपरिशुद्धानां कर्मणां नैपुणं परम् ।
यैरिदं वाक्यरत्नानामीदृशं भाजनं कृतम् ॥ ७१ ॥

अस्मद्धि नेत्रसुभगादिदं श्रुतिमनोहरम् ।
मुखात् क्षरति ते वाक्यं चन्द्राद्द्रवमिवामृतम् ॥ ७२ ॥

रागरेणुं प्रशमयद्वाक्यं ते जलदायते ।
वैनतेयायते द्वेषभुजङ्गोद्धरणं प्रति ॥ ७३ ॥

दिवाकरायते भूयोऽप्यज्ञानतिमिरं नुदत् ।
शक्रायुधायते मानगिरीनभिविदारयत् ॥ ७४ ॥

दृष्टार्थत्वादवितथं निष्क्लेशत्वादनाकुलम् ।
गमकं सुप्रयुक्तत्वात् त्रिकल्याणं हि ते वचः ॥ ७५ ॥

मनांसि तावच्छ्रोतॄणां हरन्त्यादौ वचांसि ते ।
ततो विमृश्यमानानि रजांसि च तमांसि च ॥ ७६ ॥

आश्वासनं व्यसनिनां त्रासनं च प्रमादिनाम् ।
संवेजनं च सुखिनां योगवाहि वचस्तव ॥ ७७ ॥

विदुषां प्रीतिजननं मध्यानां बुद्धिवर्धनम् ।
तिमिरघ्नं च मन्दानां सार्वजन्यमिदं वचः ॥ ७८ ॥

अपकर्षति दृष्टिभ्यो निर्वाणमुपकर्षति ।
दोषान् निष्कर्षति गुणान् वाक्यं तेऽभिप्रवर्षति ॥ ७९ ॥

सर्वत्राव्याहता बुद्धिः सर्वत्रोपस्थिता स्मृतिः ।
अवन्ध्यं तेन सर्वत्र सर्वं व्याकरणं तव ॥ ८० ॥

यन्नादेशे न चाकाले नैवापात्रे प्रवर्तसे ।
वीर्यं सम्यगिवारब्धं तेनामोघं वचस्तव ॥ ८१ ॥

वचनस्तवो नाम सप्तमः परिच्छेदः ।

८ शासनस्तवः

एकायनं सुखोपायं स्वनुवन्धि निरत्ययम् ।
आदिमध्यान्तकल्याणं तव नान्यस्य शासनम् ॥ ८२ ॥

एवमेकान्तकान्तं ते दृष्टिरागेण बालिशाः ।
मतं यदि विगर्हन्ति नास्ति दृष्टिसमो रिपुः ॥ ८३ ॥

अनवभुङ्क्था यदस्यार्थे जगतो व्यसनं बहु ।
तत् संस्मृत्य विरूपेऽपि स्थेयं ते शासने भवेत् ॥ ८४ ॥

प्रागेव हितकर्तुश्च हितवक्तुश्च शासनम् ।
कथं न नाम कार्यं स्यादादीप्तशिरसापि ते ॥ ८५ ॥

भुजिष्यता बोधिसुखं त्वद्गुणापचितिः शमः ।
प्राप्यते त्वन्मतात् सर्वमिदं भद्रचतुष्टयम् ॥ ८६ ॥

त्रासनं सर्वतीर्थ्यानां नमुचेरुपतापनम् ।
आश्वासनं नृदेवानां तवेदं वीर शासनम् ॥ ८७ ॥

त्रैधातुकमहाभौममसङ्गमनवग्रहम् ।
शासनेन तवाक्रान्तमन्तकस्यापि शासनम् ॥ ८८ ॥

त्वच्छासननयज्ञो हि तिष्ठेत् कल्पमपीच्छया ।
प्रयाति तत्र तु स्वैरी यत्र मृत्योरगोचरः ॥ ८९ ॥

आगमस्यार्थचिन्ताया भावनोपासनस्य च ।
कालत्रयविभागोऽस्ति नान्यत्र तव शासनात् ॥ ९० ॥

एवं कल्याणकलितं तदेवमृषिपुङ्गव ।
शासनं नाद्रियन्ते यत् किं वैशसतरं ततः ॥ ९१ ॥

शासनस्तवो नामाष्टमः परिच्छेदः ।

९ प्रणिधिस्तवः

श्रवणं तर्पयति ते प्रसादयति दर्शनम् ।
वचनं ह्लादयति ते विमोचयति शासनम् ॥ ९२ ॥

प्रसूतिर्हर्षयति ते वृद्धिर्नन्दयति प्रजाः ।
प्रवृत्तिरनुगृह्णाति निवृत्तिरुपहन्ति च ॥ ९३ ॥

कीर्तनं किल्बिषहरं स्मरणं ते प्रमोदनम्।
अन्वेषणं मतिकरं परिज्ञानं विशोधनम् ॥ ९४ ॥

श्रीकरं तेऽभिगमनं सेवनं धीकरं परम्।
भजनं निर्भयकरं शंकरं पर्युपासनम् ॥ ९५ ॥

शीलोपसम्पदा शुद्धः प्रसन्नो ध्यानसम्पदा।
त्वं प्रज्ञासम्पदाऽक्षोभ्यो ह्रदः पुण्यमयो महान् ॥ ९६ ॥

रूपं द्रष्टव्यरत्नं ते श्रव्यरत्नं सुभाषितम्।
धर्मो विचारणारत्नं गुणरत्नाकरो ह्यसि ॥ ९७ ॥

त्वमोघैरुह्यमानानां द्वीपस्त्राणं क्षतात्मनाम्।
शरणं भवभीरूणां मुमुक्षूणां परायणम् ॥ ९८ ॥

सत्पात्रं शुद्धवृत्तत्वात् सत्क्षेत्रं फलसम्पदा।
सन्मित्रं हितकारित्वात् सर्वप्राणभृतामसि ॥ ९९ ॥

प्रियस्त्वमुपकारित्वात् सुरतत्वान्मनोहरः।
एकान्तकान्तः सौम्यत्वात् सर्वैर्बहुमतो गुणैः ॥ १०० ॥

हृद्योऽसि निरवद्यत्वाद्रम्यो वाग्रूपसौष्ठवात्।
धन्यः सर्वार्थसिद्धत्वान्माङ्गल्यो गुणसंश्रयात् ॥ १०१ ॥

प्रणिधिस्तवो नाम नवमः परिच्छेदः।

१० मार्गावतारस्तवः

स्थायिनां त्वं परिक्षेप्ता विनियन्तापहारिणाम्।
समाधाता विजिह्मानां प्रेरको मन्दगामिनाम् ॥ १०२ ॥

नियोक्ता धुरि दान्तानां खटुङ्कानामुपेक्षकः।
अतोऽसि नरदम्यानां सत्सारथिरनुत्तरः ॥ १०३ ॥

आपन्नेष्वनुकम्पा ते प्रस्वस्थेष्वर्थकामता।
व्यसनस्थेषु कारुण्यं सर्वेषु हितकामता ॥ १०४ ।

विरुद्धेष्वपि वात्सल्यं प्रवृत्तिः पतितेष्वपि।
रौद्रेष्वपि कृपालुत्वं का नामेयं तवार्यता ॥ १०५ ॥

गुरुत्वमुपकारित्वान्मातापित्रोर्यदीष्यते ।
केदानीमस्तु गुरुता त्वय्यत्यन्तोपकारिणि ॥ १०६ ॥

स्वकार्यनिरपेक्षाणां विरुद्धानामिवात्मनाम् ।
त्वं प्रपाततटस्थानां प्राकारत्वमुपागतः ॥ १०७ ॥

लोकद्वयोपकाराय लोकातिक्रमणाय च ।
तमोभूतेषु लोकेषु प्रज्ञालोकः कृतस्त्वया ॥ १०८ ॥

भिन्ना देवमनुष्याणामुपभोगेषु वृत्तयः ।
धर्मसम्भोगसामान्यात्त्वय्यसम्भेदमागताः ॥ १०९ ॥

उपपत्तिवयोवर्णदेशकालनिरत्ययम् ।
त्वया हि भगवन् धर्मसर्वातिथ्यमिदं कृतम् ॥ ११० ॥

अविस्मितान् विस्मितवत्स्पृहयन्तो गतस्पृहान् ।
उपासते प्राञ्जलयः श्रावकानपि ते सुराः ॥ १११ ॥

अहो संसारमण्डस्य बुद्धोत्पादस्य दीप्तता ।
मानुष्यं यत्र देवानां स्पृहणीयत्वमागतम् ॥ ११२ ॥

मार्गावतारस्तवो नाम दशमः परिच्छेदः ।

११ दुष्करस्तवः

खेदः शमसुखज्यानिरसज्जनसमागमः ।
द्वन्द्वान्याकीर्णता चेति दोषान् गुणवदुद्वहन् ॥ ११३ ॥

जगद्धितार्थं घटसे यदसङ्गेन चेतसा ।
का नामासौ भगवति बुद्धानां बुद्धधर्मता ॥ ११४ ॥

कदन्नान्यपि भुक्तानि क्वचित्क्षुदधिवासिता ।
पन्थानो विषमाः क्षुण्णाः सुप्तं गोकण्टकेष्वपि ॥ ११५ ॥

प्राप्ताः क्षेपावृताः सेवा वेषभाषान्तरं कृतम् ।
नाथ वैनेयवात्सल्यात् प्रभुणापि सता त्वया ॥ ११६ ॥

प्रभूतमपि ते नाथ सदा नात्मनि विद्यते ।
वक्तव्य इव सर्वैर्हि स्वैरं स्वार्थे नियुज्यसे ॥ ११७ ॥

येन केन चिदेव त्वं यत्र तत्र यथा तथा।
चोदितः स्वां प्रतिपदं कल्याणीं नातिवर्तसे ॥ ११८ ॥

नोपकारपरेऽप्येवमुपकारपरो जनः।
अपकारपरेऽपि त्वमुपकारपरो यथा ॥ ११९ ॥

अहितावहिते शत्रौ त्वं हितावहितः सुहृत्।
दोषान्वेषणनित्येऽपि गुणान्वेषणतत्परः ॥ १२० ॥

यतो निमन्त्रणं तेऽभूत् सविषं सहुताशनम्।
तत्राभूदभिसंयानं सदयं सामृतं च ते ॥ १२१ ॥

अक्रोष्टारो जिताः क्षान्त्या द्रुग्धाः स्वस्त्ययनेन च।
सत्येन चापवक्तारस्त्वया मैत्र्या जिघांसवः ॥ १२२ ॥

अनादिकालप्रहता बह्व्यः प्रकृतयो नृणाम्।
त्वया विभावितापायाः क्षणेन परिवर्तिताः ॥ १२३ ॥

दुष्करस्तवो नामैकादशः परिच्छेदः।

१२ कौशलस्तवः

यत्सौरत्यं गतास्तीक्ष्णाः कदर्याश्च वदान्यताम्।
क्रूराः पेशलतां यातास्तत् तवोपायकौशलम् ॥ १२४ ॥

इन्द्रियोपशमो नन्दे मानस्तब्धे च संनतिः।
क्षमित्वं चाङ्गुलीमाले कं न विस्मयमानयेत् ॥ १२५ ॥

बहवस्तृणशय्यासु हित्वा शय्यां हिरण्मयीम्।
अशेरत सुखं धीरास्तृप्ता धर्मरसस्य ते ॥ १२६ ॥

पृष्टेनापि क्वचिन्नोक्तमुपेत्यापि कथा कृता।
तर्षयित्वा परत्रोक्तं कालाशयविदा त्वया ॥ १२७ ॥

पूर्वं दानकथाद्याभिश्चेतस्युत्पाद्य सौष्ठवम्।
ततो धर्मो गतमले वस्त्रे रङ्ग इवार्पितः ॥ १२८ ॥

न सोऽस्त्युपायः शक्तिर्वा येन न व्यायतं तव।
घोरात् संसारपातालादुद्धर्तुं कृपणं जगत् ॥ १२९ ॥

बहूनि बहुरूपाणि वचांसि चरितानि च।
विनेयाशयभेदेन तत्र तत्र गतानि ते॥ १३०॥

विशुद्धान्यविरुद्धानि पूजितान्यर्चितानि च।
सर्वाण्येव नृदेवानां हितानि महितानि च॥ १३१॥

न हि वक्तुं च कर्तुं च बहु साधु च शक्यते।
अन्यथानन्यथावादिन् दृष्टं तदुभयं त्वयि॥ १३२॥

केवलात्मविशुद्धयैव त्वया पूतं जगद्भवेत्।
यस्मान्नैवंविधं क्षेत्रं त्रिषु लोकेषु विद्यते॥ १३३॥

प्रागेवात्यन्तनष्टानामनादौ भवसंकटे।
हिताय सर्वसत्त्वानां यस्त्वमेवं समुद्यतः॥ १३४॥

कौशलस्तवो नाम द्वादशः परिच्छेदः।

१३ आनृण्यस्तवः

न तां प्रतिपदं वेद्मि स्याद्ययापचितिस्तव।
अपि ये परिनिर्वान्ति तेऽपि ते नानृणा जनाः॥ १३५॥

तव तेऽवस्थिता धर्मे स्वार्थमेव तु कुर्वते।
यः श्रमस्तन्निमित्तं तु तव का तस्य निष्कृतिः॥ १३६॥

त्वं हि जागर्षि सुप्तानां संतानान्यवलोकयन्।
अप्रमत्तः प्रमत्तानां सत्त्वानां भद्रबान्धवः॥ १३७॥

क्लेशानां वध आख्यातो मारमाया विघाटिता।
उक्तं संसारदौरात्म्यमभया दिग्विदर्शिता॥ १३८॥

किमन्यदर्थकामेन सत्त्वानां करुणायता।
करणीयं भवेद् यत्र न दत्तानुनयो भवान्॥ १३९॥

यदि संचारिणो धर्माः स्युरिमे नियतं त्वया।
देवदत्तमुपादाय सर्वत्र स्युर्निवेशिताः॥ १४०॥

अत एव जगन्नाथ नेहान्योऽन्यस्य कारकः।
इति त्वमुक्तवान् भूतं जगत् संज्ञापयन्निव॥ १४१॥

चिराय भुवि सद्धर्मं प्रेर्य्य लोकानुकम्पया।
बहूनुत्पाद्य सच्छिष्यांस्त्रैलोक्यानुग्रहक्षमान् ॥ १४२ ॥

साक्षाद्विनेयवर्गीयान् सुभद्रान्तान् विनीय च।
ऋणशेषं किमद्यापि सत्त्वेषु यदभूत् तव ॥ १४३ ॥

यस्त्वं समाधिवज्रेण तिलशोऽस्थीनि चूर्णयन्।
अतिदुष्करकारित्वमन्तेऽपि न विमुक्तवान् ॥ १४४ ॥

परार्थाविव मे धर्मरूपकायाविति त्वया।
दुष्कुहस्यास्य लोकस्य निर्वाणेऽपि निदर्शितम् ॥ १४५ ॥

तथाहि सत्सु संक्राम्य धर्मकायमशेषतः।
तिलशो रूपकायं च भित्त्वासि परिनिर्वृतः ॥ १४६ ॥

अहो स्थितिरहो वृत्तमहो रूपमहो गुणाः।
न नाम बुद्धधर्माणामस्ति किञ्चिदनद्भुतम् ॥ १४७ ॥

उपकारिणि चक्षुष्ये शान्तवाक्कायकर्मणि।
त्वय्यपि प्रतिहन्यन्ते पश्य मोहस्य रौद्रताम् ॥ १४८ ॥

पुण्योदधिं रत्ननिधिं धर्मराशिं गुणाकरम्।
ये त्वां सत्त्वा नमस्यन्ति तेभ्योऽपि सुकृतं नमः ॥ १४९ ॥

अक्षयास्ते गुणा नाथ शक्तिस्तु क्षयिणी मम।
अतः प्रसङ्गभीरुत्वात् स्थीयते न वितृप्तितः ॥ १५० ॥

अप्रमेयमसंख्येयमचिन्त्यमनिदर्शनम् ।
स्वयमेवात्मनाऽऽत्मानं त्वमेव ज्ञातुमर्हसि ॥ १५१ ॥

न ते गुणांशावयवोऽपि कीर्तितः
परा च नस्तुष्टिरवस्थिता हृदि।
अकर्शनेनैव महाह्रदाम्भसां
जनस्य तर्षाः प्रशमं व्रजन्ति ह ॥ १५२ ॥

फलोदयेनास्य शुभस्य कर्मणो
मुनिप्रसादप्रतिभोद्भवस्य मे।
असद्वितर्काकुलमारुतेरितं
प्रयातु चित्तं जगतां विधेयताम् ॥ १५३ ॥

आनृण्यस्तवो नाम त्रयोदशमः परिच्छेदः।
अध्यर्धशतकं समाप्तम्। कृतिराचार्यमातृचेटस्य ॥

अवधानस्तोत्रम् (वन्दनास्तवं वा)

ॐ नमो लोकनाथाय

आराधितोऽसि भुजगासुरलोकसंघैर्गन्धर्वयक्षमुनिभिः परिवन्दिताय ।
द्वात्रिंशदादिवरलक्षणभूषिताय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ १ ॥

बालार्ककोटिसमतेजकलेवराय आलोकिते सुगतशेखरधारिताय ।
शुभ्रांशुमौलितिलकाय जटाधराय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ २ ॥

अम्भोजपाणिकमलासनसंस्थिताय यज्ञोपवीतफणिराजसुमण्डिताय ।
रत्नादिहारकनकोज्ज्वलभूषिताय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥३॥

उत्पादभङ्गभवसागरतारकाय दुर्ग्राहिदुर्गतिभुवां परिमोचकाय ।
रागादिदोषपरिमुक्त सुनिर्मलाय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ ४ ॥

मैत्र्यादिभिश्चतुरब्रह्मविहारणाय धारामृतैः सकलसत्त्वसुपोषणाय ।
मोहान्धकारकृतदोषविदारणाय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ ५ ॥

दैत्येन्द्रवंशवलितारणमोक्षदाय सत्त्वोपकारत्वरितकृतनिश्चयाय ।
सर्वज्ञज्ञानपरिपूरितदेशनाय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ ६ ॥

अष्टादशनरकमार्गविशोधनाय अज्ञानगाढतिमिरपरिध्वंसनाय ।
ज्ञानैकदृष्टिव्यवलोकितमोक्षदाय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ ७ ॥

त्वं लोकनाथ भुवनेश्वर सुप्रदाय दारिद्र्यदुःखमयपञ्जरदारणाय ।
त्वत्पादपङ्कजयुगप्रतिवन्दिताय नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ ८ ॥

मार्तण्डमण्डलरुचिस्तथतास्वभावं त्वां नौम्यहं सुफलदं विमलप्रभावम् ।
चिन्तामणिं सुसदृशं त्वतिदुर्भगोऽहं नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥९॥

यद्भक्तितो दशनखाञ्जलिसोत्तमाङ्गमष्टाङ्गकैः प्रणमितं तव पादपद्म ।
दुःखार्णवे पतितमुद्धर मां कृपालो नित्यं नमामि शिरसा करुणामयाय ॥ १० ॥

सप्ताष्टभूतगतमाधवशुक्लपक्षे तारापुनर्वसु सहे भृगुसूनुवारे ।
श्रीक्रौंचदारणतिथौ च स्तुतिं करोमि मे देहि वाञ्छितफलं भुवनैकनाथ ॥११॥

ये पठन्ति महापुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
सर्वकामार्थसिद्धिं च गमिष्यन्ति सुखावतीम् ॥ १२ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्यावधानस्तोत्रं समाप्तम् ॥

अवलोकितेश्वरस्तवः

चन्द्रकान्ताभिक्षुणीकृतः

ॐ नमोऽवलोकितेश्वराय

भुवनत्रयवन्दितलोकगुरुम् अमराधिपतिस्तुतब्रह्मवरम् ।
मुनिराजवरं द्युतिसिद्धिकरं प्रणमाम्यवलोकितनामधरम् ॥ १ ॥

सुगतात्मजरूपसुरूपधरं बहुलक्षणभूषितदेहवरम् ।
अमिताभतथागतमौलिधरं कनकाब्जविभूषितवामकरम् ॥ २ ॥

कुटिलामलपिङ्गलधूम्रजटं शशिबिम्बसमुज्ज्वलपूर्णमुखम् ।
कमलायतलोचनचारुवरं हिमखण्डविपाण्डुरगण्डयुगम् ॥ ३ ॥

अधरं जितपङ्कजनाभिसमं शरदम्बुदगर्जितमेघरुतम् ।
बहुरत्नविभूषितबाहुयुगं तनुकोमलशाद्वलपाणितलम् ॥ ४ ॥

मृगचर्मविवेष्टितवामतनुं शुभकुण्डलमण्डितलोलधरम् ।
विमलं कमलोदरनाभितलं मणिमण्डितमेखलहेमवरम् ॥ ५ ॥

कटिवेष्टितचित्रसुवस्त्रधरं जिनबोधिमहोदधिपारगतम् ।
बहुपुण्यमुपार्जितलब्धवरं ज्वरव्याधिहरं बहुसौख्यकरम् ॥ ६ ॥

शुभशान्तिकरं त्रिभवास्यकरं सचरं खचरं स्तुतिदेहधरम् ।
विविधाकुलनिर्जितमारबलं दशपारमितापरमार्थकरम् ॥ ७ ॥

चतुरस्त्रविहारविवेकपरं तथताद्वयबोधविबोधकरम् ।
मणिनूपुरगर्जितपादयुगं गजमन्दविलम्बितहंसगतिम् ॥ ८ ॥

परिपूर्णमहामृतलब्धधृतिं क्षीरोदजलार्णवनित्यगतिम् ।
श्रीपोतलकाभिनिवासरतिं करुणामयनिर्मलचारुदृशम् ॥ ९ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य चन्द्रकान्ताभिक्षुणी-
विरचितः स्तवः समाप्तः ।

●

अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्

चरपतिपादविरचितम्

ॐ नमोऽवलोकितेश्वराय

देवमनुष्यासुरनुतचरणः प्रतिहतजन्मजरारुजमरणः ।
लोकेश त्वं मामशरण्यं रक्ष कृपालो कुरु कारुण्यम् ॥ १ ॥

संसारोदधिमध्यनिमग्नं क्लेशमहोर्मिसमाहितभग्नम् ।
मामवधारय मा विरुवन्तं त्राहि महाकृप नौमि भवन्तम् ॥ २ ॥

तृष्णातिमिरोपद्रुतनेत्रं मरणमहाभयविह्वलगात्रम् ।
पालय भगवन्नवलोकय मां यावदवीचिं यामि न विषमाम् ॥ ३ ॥

कृतमन्यस्त्रीग्रहणमजस्रं हतमज्ञेयं प्राणिसहस्रम् ।
नाथ मया कृतपापमशेषं नाशय संप्रति कायिकदोषम् ॥ ४ ॥

यज्जीवितसत्कारनिमित्तं लोकान् नित्यं भणितमसत्यम् ।
तल्लोकेश्वर शमय समस्तं वाचिकनरकं चिरमभ्यस्तम् ॥ ५ ॥

सत्त्वानामिह चिन्तितमहितं स्वयमनुमोदितमपि नरविहितम् ।
अधुना तन्मम मानसपापं स्फोटय नाथ करोमि विलापम् ॥ ६ ॥

देवमनुष्यासुरजातीनां तिर्यङ्नारकप्रेतगतीनाम् ।
सत्त्वा ये निवसन्ति सदाऽऽर्ता रक्षसि तानिति तव मयि वार्ता ॥ ७ ॥

तेन ममोपरि सृज कारुण्यं वीक्ष्य शरीरगतं तारुण्यम् ।
इति शृणु भगवन् भवति भणामि यावन्नरकं नैव विशामि ॥ ८ ॥

किं चोपेत्य करोषि परार्थं मुञ्चसि भगवन् मामकृतार्थम् ।
अथवा प्रेक्ष्य कृपा तव पुण्यं जनयसि दृष्टं कथमविपन्नम् ॥ ९ ॥

स्मरणेनापि भवसि परितुष्टः क्षिपसि च कलुषं किमिति न दृष्टः ।
यस्माद् भगवन् परहितदक्ष क्षेपं मा कुरु मामिह रक्ष ॥ १० ॥

दन्तितुरङ्गमपुत्रकलत्रं राज्यमकण्टकवेश्मविचित्रम् ।
अस्थिशिरोऽसृङ्मांसपर्यन्तं भवतार्थिभ्यो दत्तमनन्तम् ॥ ११ ॥

अञ्जनगुटिकापादुकसिद्धिः सिद्धौषधिमणिमन्त्रविशुद्धिः ।
सिद्ध्यति यक्षस्त्रीपुरवेशः तुष्यसि यस्य त्वं लोकेश ॥ १२ ॥

ये करचरणविलोचनहीना विविधव्याधिमहाभयदीनाः ।
ते त्वयि तुष्टे पुष्टशरीरा विलसन्त्यरुजो गुणगम्भीराः ॥ १३ ॥

गरलं व्याधिर्ग्रहडाकिन्यः शान्ति यान्ति सदा योगिन्यः ।
सरति न तस्य पुरो यमदूतः प्रीतो यस्य च त्वं जिनभूतः ॥ १४ ॥

इति लोकेश्वर किं क्रियमाणं मुञ्चसि भगवन् मामत्राणम् ।
रौम्यहमनुदिनमुद्यतपाणिर्नाशय त्राससमाकुलवाणिः ॥ १५ ॥

यद्विषयेन्द्रियचञ्चलमनसा कृतबहुपापं व्याकुलमनसा ।
नीतं जन्म मयाऽस्मिन् सकलं जठरनिमित्तं भ्रमता विकलम् ॥ १६ ॥

तत्कुरु संप्रति मम लोकेश प्रणतो विविधाञ्जलिरहमेषः ।
येनाभुक्त्वापायिकदोषं सुगतिं भवतो यामि न मोक्षम् ॥ १७ ॥

मोहद्वेषविनाशनहेतुस्त्वं संसारमहोदधिसेतुः ।
पतितस्त्रस्तोत्थापितबाहुस्त्वं गुरुदुरितनिशाकरराहुः ॥ १८ ॥

देशितसुगतानुत्तरतत्त्वस्त्वं पालितबहुदुःखितसत्त्वः ।
निर्जितदुर्जयमन्मथमारस्त्वं संतीर्णभवार्णवपारः ॥ १९ ॥

सकलालाननिकृन्तनदेहस्त्वं परिभावितजगतसुदेहः ।
भगवन्ननुपमकरुणासिन्धुस्त्वं जनविदितोऽकारणबन्धुः ॥ २० ॥

लीलाविदलितकर्मविभङ्गस्त्वं परहितविषयव्यासङ्गः ।
दिव्यध्यानसमाहितचित्तस्त्वं याचकसाधारणचित्तः ॥ २१ ॥

परमपकुर्वन्नपि करुणावान् मयि परितोषं न करोषि भवान् ।
कथमिह मोहमहोरगदष्टं विषयशरीरमकुशलं भ्रष्टम् ॥ २२ ॥

सकलजनार्थं प्रति या करुणा सा किं भवतो नियतस्फरणा ।
येन न रक्षसि किल्विषवन्तं भवतः पुरतो मां विरुवन्तम् ॥ २३ ॥

नाथ कृपा ते व्योमविशाला सत्त्वेषु हि यथाम्बुदधारा ।
स्थलजलनिम्नोन्नतबहुदेशे सरति निरन्तरमनिशमशेषे ॥ २४ ॥

इति भगवत्स्मरणाद्यत्पुण्यं मम नेनेदं जगदक्षुण्णम् ।
लभतां श्रीपोतलकाचलवासं जनयतु सुन्दरविविधविलासम् ॥ २५ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य चरपतिपादविरचितं
स्तोत्रं समाप्तम् ।

अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्

वासुकिनागराजकृतम्

ॐ नमोऽवलोकितेश्वराय

जटाधरं सौम्यविशाललोचनं
सदाप्रसन्नाननचन्द्रमण्डलम् ।
सुरासुरैर्वन्दितपादपङ्कजं
नमामि नाथं मणिपद्मसंभवम् ॥ १ ॥

सरोजपत्रायतदिव्यलोचनं
कुदृष्टिसंशोधितशुद्धलोचनम् ।
कृपामृतार्द्रं जगदेकलोचनं
नमामि नाथं मणिपद्मसंभवम् ॥ २ ॥

हारेन्दुहारार्धहिमाधिकोज्ज्वलं
निघृष्टगण्डामललोलकुण्डलम् ।
गभस्तिमालाकुलकोटिसंकुलं
नमामि नाथं मणिपद्मसंभवम् ॥ ३ ॥

प्रबुद्धधर्माध्वनि धर्मधातुकं
सहस्रबाहुं द्विचतुश्च षड्भुजम् ।
खधातुना तुल्यमनन्तबाहुकं
नमामि नाथं मणिपद्मसंभवम् ॥ ४ ॥

उपायप्रज्ञोदधिमन्थनोद्भवं
त्रिधातुसंरक्षणहेतुसंभवम् ।
जिनेन्द्रमौलिं जिनधातुसंभवं
नमामि नाथं मणिपद्मसंभवम् ॥ ५ ॥

पद्मोपरि गतं नाथं पद्महस्तं जटाधरम् ।
आर्यावलोकितं वन्दे सर्वसत्त्वानुकम्पकम् ॥ ६ ॥

श्रीवासुकिनागराजकृतमार्यावलोकितेश्वरस्तोत्रं समाप्तम् ।



अवलोकितेश्वराष्टकस्तोत्रम्

ॐ नमोऽवलोकितेश्वराय

स्तुत्वा गुणैरनुपमैरनुबिन्दुपात्रं स्तोत्रं मया कृतमिदं जडवालिशेन ।
लोकेश्वरं गुणनिधिं गुणसागरं च नित्यं नमामि शिरसाञ्जलिसंपुटेन ॥ १ ॥

प्राणेषु यान् स्रवति येन रसाम्बुपारान् क्षुत्तृष्णदुःखपरिपीडितसर्वसत्त्वान् ।
एवंविधं जगदिदं परिपालनाय तस्मै नमोऽस्तु सततं हि यथार्थनाम्ने ॥ २ ॥

सत्कुङ्कुमात्तमरुणाङ्कसमानवर्णं द्वात्रिंशलक्षणविभूषितगात्रशोभम् ।
सर्वेषु यस्य करुणामयवत्सलत्वं तस्मै नमामि भवते करुणामयाय ॥ ३ ॥

संसारसागरमहालयनाशदक्ष एकस्त्वमेव शरणं भुवि नैकनाथ ।
केनापि त्वद्गुणगणा गणने न शक्यास्तं लोकनाथमवलोकितनामसंज्ञम् ॥ ४ ॥

नानाविधाभरणमण्डितदिव्यरूपं बालेन्दुलग्नजटभूषितलोकनाथम् ।
वामे च मण्डलधरं वरदं च सव्ये त्वां लोकनाथ शरणं प्रव्रजामि नित्यम् ॥ ५ ॥

ब्रह्मादिभिः परिवृतं सुरसिद्धसंघैर्गन्धर्वकिन्नरमहोरगनागयक्षैः ।
नाथस्य यस्य भवतश्चरणाम्बुजं च तं लोकनाथचरणं शरणं व्रजामि ॥ ६ ॥

भूतैः पिशाचगरुडोरगराक्षसीभिः कुम्भाण्डपूतनमहल्लकराजराजैः ।
वैश्वानरासुरशतैः परिवारभूतं तं लोकनाथचरणं शरणं गतोऽस्मि ॥ ७ ॥

अब्धिर्दिवाकरकरैर्नहि शोषमेति तद्वत्कवीश्वरशतैर्गुणसागरस्ते ।
लोकेश्वर प्रथितकीर्तिनिधानभूतो न क्षीयते गुणनिधिर्गुणसागरस्य ॥ ८ ॥

श्लोकाष्टकं प्रतिदिनं खलु ये पठन्ति ते प्राप्नुवन्ति सहसा धनपुत्रमोक्षान् ।
कुष्ठादिरोगनिकरं क्षमतां प्रयाति वन्दामहे च नितरां तव पादयुग्मे ॥ ९ ॥

श्री आर्यावलोकितेश्वरस्य श्लोकाष्टकं समाप्तम् ।

●

अवलोकितेश्वराष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ॐ नमोऽवलोकितेश्वराय

पद्मसत्त्व महापद्म लोकेश्वर महेश्वर।
अवलोकितेश धीराग्र्य वज्रधर्म नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

धर्मराज महाशुद्ध सत्त्वराज महामते।
पद्मात्मक महापद्म पद्मनाथ नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

पद्मोद्भव सुपद्माभ पद्मशुद्ध सुशोधक।
वज्रपद्म सुपद्माङ्क पद्मपद्म नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

महाविश्व महालोक महाकाय महोपम।
महाधीर महावीर महाशौरे नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

सत्त्वाशय महायान महायोग पितामह।
शम्भु शङ्कर शुद्धार्थ बुद्धपद्म नमोऽस्तुते ॥ ५ ॥

धर्मतत्त्वार्थ सद्धर्म शुद्धधर्म सुधर्मकृत्।
महाधर्म सुधर्माग्र्य धर्मचक्र नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

बुद्धसत्त्व सुसत्त्वाग्र्य धर्मसत्त्व सुसत्त्वधृक्।
सत्त्वोत्तम सुसत्त्वज्ञ सत्त्वसत्त्व नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

अवलोकितेश नाथाग्र्य महानाथ विलोकित।
आलोकलोक लोकार्थ लोकनाथ नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

लोकाक्षराक्षर महा अक्षराग्र्याक्षरोपम।
अक्षराक्षर सर्वाक्षि चक्राक्षर नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

पद्महस्त महाहस्त समाश्वासक दायक।
बुद्धधर्म महाबुद्ध बुद्धात्मक नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

बुद्धरूप महारूप वज्ररूप सुरूपवित्।
धर्मालोक सुतेजाग्र्य लोकालोक नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

पद्मश्रीनाथ नाथाग्र्य धर्मश्रीनाथ नाथवान्।
ब्रह्मनाथ महाब्रह्म ब्रह्मपुत्र नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

दीप दीपाग्र्य दीपोग्र दीपालोक सुदीपक।
दीपनाथ महादीप बुद्धदीप नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

बुद्धाभिषिक्त बुद्धाग्र्य बुद्धपुत्र महाबुध।
बुद्धाभिषेकमूर्द्धाग्र्य बुद्धबुद्ध नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥

बुद्धचक्षो महाचक्षो धर्मचक्षो महेक्षण।
समाधिज्ञानसर्वस्व वज्रनेत्र नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥

एवं सर्वात्मना गौणं नाम्नामष्टशतं तव।
भावयेत् स्तुनुयाद्वापि लोकैश्वर्यमवाप्नुयात् ॥ १६ ॥

आर्यावलोकितेश्वरनामाष्टोत्तरशताध्येषणास्तोत्रं समाप्तम्।

आकाशगर्भनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्

ॐ नमो बुद्धाय

आकाशगर्भं सत्त्वार्थं महासत्त्व महाद्युते ।
महारत्न सुरत्नाग्र्य वज्ररत्न नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

अभिषेकमहारत्न महाशुद्ध महाशुभ ।
बुद्धरत्न विशुद्धाङ्ग रत्नरत्न नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

आकाशाकाशसंभूत सर्वाकाश महानभ ।
आकाशधातुसर्वांश सर्वांशाग्र्य नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

रत्नसंभव रत्नोर्ण बुद्धोर्णं सुतथागत ।
सर्वरत्न सुसर्वाग्र्य रत्नकार्यं नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

रत्नरत्नाग्र्य रत्नोग्र रत्नसर्व तथागत ।
रत्नोत्तम महाकाश समाकाश नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

अलङ्कारमहाशोभ शोभाकर सुशोभक ।
शुद्धसर्वार्थं शुद्धार्थं दानचर्यं नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

धर्मरत्न विशुद्धाग्र्य सङ्घरत्न तथागत ।
महाभिषेक लोकार्थं प्रमोदार्थं नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

दान प्रदान दानाग्र्य त्याग त्यागाग्र्य दायक ।
सर्वसत्त्वार्थं तत्त्वार्थं महार्थार्थं नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

चिन्ताराज महातेज दानपारमितानय ।
तथागत महासत्त्व सर्वबुद्ध नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

तथागत महारत्न तथागत महाप्रभ ।
तथागत महाकेतो महाहास नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

तथागताभिषेकाङ्ग महाभिषेक महाविभो ।
लोकनाथ त्रिलोकाग्र्य लोकसूर्यं नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

रत्नाधिकाधिकतर रत्नभूषण रत्नधृक् ।
रत्नालोक महालोक रत्नकीर्ते नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

रत्नोत्कर सुरत्नोत्थ मणे वज्रमणे गुण ।
रत्नाकर सुदीप्ताङ्ग सर्वरत्न नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

महात्मयष्टि रत्नेश सर्वाशापरिपूरक ।
सर्वाभिप्रायसंप्राप्तिरत्नराशि नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥

अभ्वश्य व्यापि सर्वात्म वरप्रद महावर ।
विभूते सर्वसंपत्ते वज्रगर्भ नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥

यः कश्चिद् धारयेन् नाम्नामिदन्तेऽष्टशतं शिवम् ।
सर्वबुद्धाभिषेकं तु स प्राप्नोत्यनघः क्षणात् ॥ १६ ॥

श्री आकाशगर्भनामाष्टशताध्येषणास्तोत्रं संपूर्णम् ।

आदिबुद्धद्वादशकस्तोत्रम्

ॐ नम आदिबुद्धाय

नमस्ते बुद्धरूपाय धर्मरूपाय ते नमः।
नमस्ते संघरूपाय पञ्चबुद्धात्मने नमः॥ १॥

पृथ्वीरूपायाब्रूपाय तेजोरूपाय ते नमः।
नमस्ते वायुरूपायाकाशरूपाय ते नमः॥ २॥

ब्रह्मणे सत्त्वरूपाय रजोरूपाय विष्णवे।
तमोरूपमहेशाय ज्ञानरूपाय ते नमः॥ ३॥

प्रज्ञोपायात्मरूपाय गुह्यरूपाय ते नमः।
दिग्रूपलोकपालाय विश्वरूपाय ते नमः॥ ४॥

चक्षूरूपाय कर्णाय घ्राणरूपाय जिह्वके।
कायरूपाय श्रीधर्मरूपाय मनसे नमः॥ ५॥

नमस्ते रूपरूपाय रसरूपाय ते नमः।
गन्धरूप-शब्दरूप-स्पर्शरूपाय ते नमः॥ ६॥

धर्मरूपधारकाय षडिन्द्रियात्मने नमः।
मांसास्थिमेदमज्जानां संघातरूपिणे नमः॥ ७॥

रूपाय जङ्गमानां ते स्थावराणां च मूर्तये।
तिरश्चां मोहरूपाय रूपायाश्चर्यमूर्तये॥ ८॥

सृष्टिकर्त्रे जन्मरूप कालरूपाय मृत्यवे।
भव्याय वृद्धरूपाय बालाय ते नमो नमः॥ ९॥

प्राणापानसमानोदानव्यानमूर्तये नमः।
वर्णापवर्णरूपाय भोक्त्रे तन्मूर्तये नमः॥ १०॥

दिनरूपाय सूर्याय चन्द्राय रात्रिरूपिणे।
तिथिरूपाय नक्षत्रयोगवारादिमूर्तये॥ ११॥

बाह्याभ्यन्तररूपाय लौकिकाय नमोनमः।
नैर्वाणाय नमस्तुभ्यं बहुरूपाय ते नमः॥ १२॥

आदिबुद्धद्वादशकं पुण्यं प्रातः पठिष्यति।
यदिच्छति लभेन्नूनं मनुजो नित्यनिश्चयः॥ १३॥

श्रीमञ्जुश्रीकृतमादिबुद्धद्वादशकस्तोत्रं समाप्तम्।

कमलाकरसर्वतथागतस्तोत्रम्

अथ खलु कमलवने सर्वतथागतस्तवेनातीतानागतप्रत्युत्पन्नानां बुद्धानां भगवतोऽत्यस्तावीत्—

ये जिनपूर्वकाये भवन्ति ये च ध्रियन्ति दशदिशि लोके ।
तान् हि जिनांश्च करोमि प्रणामं तं जिनसंघमहं प्रभिजष्ये ॥ १ ॥

शान्तप्रशान्तविशुद्धमुनीन्द्रं स्वर्णसुवर्णप्रभासितगात्रम् ।
सर्वसुरासुरसुस्वरघोषं ब्रह्मरुतस्वरगर्जितघोषम् ॥ २ ॥

षट्पदभौंरमहीरुहकेशं नीलसुकुञ्चितकाशनिकाशम् ।
शङ्ख तुषारसुपाण्डरदन्तं हेमविराजितभाषितनाभम् ॥ ३ ॥

नीलविशालविशुद्धसुनेत्रं नीलमिवोत्पलफुल्लितक्षेत्रम् ।
पद्मसुवर्णविभान्तसुजिह्वं पद्मप्रभाषितपद्मसुखाभम् ॥ ४ ॥

शङ्खमृणालनिभं सुखतार्णं दक्षिणवर्तितवेडुलितर्णम् ।
सूक्ष्मनिशाकरक्षीणशशीव मात्रसुमन्त्र सरोजसुनाभम् ॥ ५ ॥

काञ्चनकोटिसुवर्णसुनासमुन्नतमृदुतरपादपपत्रम् ।
अग्रधराग्रविशिष्टनासाग्रं मृदुकरसर्वजिनं सततं तम् ॥ ६ ॥

एकसमेकतरोममुखाग्रं बालसुरोमप्रदक्षिणवर्त्तम् ।
नीलनिभोज्ज्वलकुण्डलजातं नीलविराजितमौलसुग्रीवम् ॥ ७ ॥

जातसमानप्रभाषितगात्रं पूजितसर्वदशदिशि लोके ।
दुःखमनन्तं प्रशमितलोकं सर्वसुखेन च तर्पितलोकम् ॥ ८ ॥

नरकस्थासु च तिर्यग्गतिषु प्रेतसुरासुरमनुजगतीषु ।
सर्वपिशाचसुखार्पितसत्त्वं सर्वप्रशान्तमपायगतीषु ॥ ९ ॥

वर्णसुवर्णं कनकनिभासं काञ्चनतप्तप्रभासितगात्रम् ।
सौम्यशशाङ्कसुविमलवक्त्रं विकसितराजितसुविमलवदनम् ॥ १० ॥

तरुणरुहाग्रककोमलगात्रं सिंहविवादकविक्रमनादम् ।
लम्बितहस्तप्रलम्बितबाहुं मारुतप्रेरितसाललजिह्वम् ॥ ११ ॥

व्योमप्रभोज्ज्वलमुंचितरश्मि सूर्यमिव प्रभया प्रतपन्तम् ।
निर्मलगात्रवरेभि मुनीन्द्रं सर्वप्रभासितक्षेत्रमनन्तम् ॥ १२ ॥

चन्द्रनिशाकरभास्करजालं क्षेत्रमनन्तसहस्रगतेषु ।
तेऽपि च निश्चितसर्वि बभूव बुद्धप्रभासविरोचनतायै ॥ १३ ॥

बुद्धदिवाकरलोकप्रदीपं बुद्धदिवाकररश्मिसहस्रम् ।
क्षेत्रमनन्तसहस्रगतेषु पश्यतु लोकतथागतसूर्यम् ॥ १४ ॥

पुण्यशतानि सहस्र च कृत्वा सर्वगुणेभिरलंकृतगात्रम् ।
सौरगजेन्द्रनिभं जितबाहुं विमलरक्षितमण्डितबाहुम् ॥ १५ ॥

भूमितलोपम शालिततुल्यं सूक्ष्मरजोपममागतबुद्धाः ।
सूक्ष्मरजोपम ये च भवन्ति सूक्ष्मरजोपम ये तिष्ठन्ति ॥ १६ ॥

तांश्च जिनान् प्रकरोमि प्रणामं कायेन वाचा मनसा प्रसन्ना ।
पुष्पप्रदान सुगन्धप्रदानैर्वर्णशतेन शुचिश्च स्मरामि ॥ १७ ॥

जिह्वशतैरपि बुद्धगुणानां कल्पसहस्रशतेन हि वक्तुम् ।
ये च सुनिर्वृतसाधुजिनानां सा च ललाट विचित्र अनेकैः ॥ १८ ॥

एकजिनस्य गुणान् नहि शक्यो जिह्वसहस्रेण भाषितु किंचित् ।
काममशक्ति हि सर्वजिनानां एकगुणस्य हि विस्तरवक्तुम् ॥ १९ ॥

सर्वं सदेवकुलोत्तसमूहः सर्वभवाग्र भवजलपूर्णान् ।
ये जलग्रहणतु शक्यप्रमाणं नैव तु एकगुणा सुगतान्तम् ॥ २० ॥

वर्णितु सुस्तुतमज्जिनसर्वं कायतु वाच प्रसन्नमनेन ।
प्रमेय संचित पुण्यफलाग्रं तेन च सत्त्व प्रभोतु जिनत्वम् ॥ २१ ॥

एव तु विश्वं नरपतिबुद्धं एव करोमि नृपः प्रणिधानम् ।
यत्र च कुत्र चि मभ्यभवेत जाति अनागत कल्पमनन्ता ॥ २२ ॥

ईदृशभेरी पश्यमि स्वप्ने ईदृशनादं तत्र शृणोमि ।
ईदृश जिनस्तुति कमलाकरेण जाति जरास्मर तत्र लभेयम् ॥ २३ ॥

बुद्धगुणानि अनन्तमतुल्यं येऽपि च दुर्लभ कल्पसहस्रम् ।
अनुश्रुत ये च स्वप्नगतेऽपि तेषु च देशयि दिवसगतोऽपि ॥ २४ ॥

दुःखसमुद्र विमोचयि सत्त्वा पूरयि षड्भिः पारमिताभिः।
बोधिमनुत्तर पुण्य लभेयं क्षत्रभवेत्तमभासमपत्थ्या ॥ २५ ॥

भेरिप्रदानविपाकफलेन सर्वजिनान च संस्तुतिहेतोः।
संमुखपश्यमि शाक्यमुनीन्द्रं व्याकरणं ह्यहु तत्र लभेयम् ॥ २६ ॥

यौ इम दारकद्वौ मम पुत्रौ कनकेन्द्र कनकप्रभास्वरौ।
तौ उभि दारक तत्र लभेयं बोधिमनुत्तरव्याकरणं च ॥ २७ ॥

ये पि च सत्त्व अनेकमनन्ता शरणविहीना व्यसनगताश्च।
तेषु भवेय अनागत सर्वत्राणपरायण शरणप्रदश्च ॥ २८ ॥

दुःखसमुद्भव संक्षयकर्ता सर्वसुखस्य च आकरभंत।
कल्प अनागत बोधि चरेयं यत्तहु पूर्वं कोटि · गताश्च ॥ २९ ॥

स्वर्णप्रभासोत्तमदेशनताय पापसमुद्रं शोषतु मह्यम्।
कर्मसमुद्र विकीर्यतु मह्यं क्लेशसमुद्र विछिद्यतु मह्यम् ॥ ३० ॥

पुण्यसमुद्रं पूर्यतु मह्यं ज्ञानसमुद्र विशोध्यतु मह्यम्।
विमलज्ञान प्रभासवरेण काम प्रभा च भविष्यतु मह्यम् ॥ ३१ ॥

पुण्यप्रभास विलोचनता च सर्वत्रिलोकि विशिष्ट भवेयम्।
पुण्यवरेण समन्वित नित्यं दुःखसमुद्र उत्तारयिता च ॥ ३२ ॥

सर्वसुखस्य च सागरकल्पं कल्पमनागत बोधि चरेयम्।
यत्नत पूर्वक कोटिगताया ईदृशक्षत्रविशिष्ट त्रिलोके ॥ ३३ ॥

श्रीसुवर्णप्रभोक्तं कमलाकरसर्वतथागतस्तोत्रं समाप्तम्।

●

करुणास्तवः

आचार्यबन्धुदत्तविरचितः

स्तुत्वा प्रणम्यमभयङ्करसर्वसत्त्वं
सम्पूर्णचन्द्रवदनाम्बुजपत्रनेत्रम् ।
सर्वज्ञज्ञानमुकुटोज्ज्वलमुक्तिमार्गं
तं पद्मपाणिवरभूषितज्ञानराशिम् ॥ १ ॥

उत्तुङ्गनाकवरपीनकपोलवक्त्रं
रक्ताधरं हिमतुषारसितासुदन्तम् ।
ब्रह्मेस्वरं श्रुतिधरं मधुरं च वाक्यं
तं पद्मपाणिमृदुवर्णस्वरं नमामि ॥ २ ॥

मालाधरं कनकरत्नविभूषिताङ्गं
नेत्रत्रयं जटविभूषितबालचन्द्रम् ।
कृष्णाजिनाम्बरधरं च सुवर्णवर्णं
तं पद्मपाणिमृदुगात्रभरं नमामि ॥ ३ ॥

त्वां लोकनाथमवलोकितनामधेयं
यज्ञोपवीतसुद(शुभ)चञ्चलसर्पराजम् ।
चिन्तामणिप्रवरकुण्डलघृष्टगात्रं
तं पद्मपाणिस्तुतिसर्वकृतं नमामि ॥ ४ ॥

त्वं ज्ञानराशिवरभाषितसर्वसत्त्वः
संसारकम्पतिमिरार्णवमग्नसत्त्वान् ।
आलोकिते पदमनुत्तरबोधिमार्गं
तं पद्मपाणिवरमार्गददन्नमामि ॥ ५ ॥

गत्वा च येन नरकेषु-अवीचिमग्नं
शीतीकृतं हृदि विशालरुहं सपद्मम् ।
यो नारकी(कं) सकलदुःखमनाशयच्च
त पद्मपाणिनरकाग्निशमं नमामि ॥ ६ ॥

संत्रासयन्ति यमपालकमग्नभूमि
हे धर्मराजमिव आगतकामरूपि ।
ये कर्मभूमिमिव ध्वंसति ते निमित्तं
तं पद्मपाणिहतशासनत्तं (?) नमामि ॥ ७ ॥

गत्वा च येन वररूपमनोहराय
त्रैलोक्यनाथमभयङ्कर सर्वसत्त्वाः ।
दुःखार्णवे तव स्मराणि विमुक्तिदुःखं
तं पद्मपाणिहतकिल्विषकं नमामि ॥ ८ ॥

त्वं प्रेतलोकगतये करुणावशेन
सूचीमुखानुदरपर्वतजीर्णमङ्गान् ।
क्षुत्तृष्णदुःखभयपीडितप्रेतसत्त्वान्
तं पद्मपाणितृषनाशकरं नमामि ॥ ९ ॥

अन्योन्यभक्षक्षुधपीडितप्रेतसत्त्वाः
संपीयते कररुहश्रवते नदीभिः ।
पुष्टिं शरीरहतभुक्षतृषातुराणां
तं पद्मपाणिहतभुक्षतृषं नमामि ॥ १० ॥

गत्वा तमं भुवनवर्जितचन्द्रसूर्ये
चिन्तामणिज्वलितरत्नप्रभावभासे ।
तं यक्षराक्षसगणैश्चरणे नमस्ते
तं पद्मपाणितमभङ्गकृत्तं नमामि ॥ ११ ॥

गत्वा च येन बलिभग्नमनोरथस्य
यद्दीयतेऽनुत्तरपिण्डपात्रम् ।
धर्मंकथेन परितर्पितदानवेन्द्रं
तं पद्मपाणिवरधर्मददं नमामि ॥ १२ ॥

गत्वा च येन दिवि कुण्डलदेवपुत्रं
दानस्य हीनक्षुधपीडितदुःखितं च ।
तं याचयामि परिपूर्णसमृद्धिरत्नं
तं पद्मपाणिधनवृद्धिकरं नमामि ॥ १३ ॥

त्वं कामरूपमुपदर्शितराक्षसीभिः
कामावशेन चरितं तव राक्षसीभिः ।
घातस्य चित्तपरिवर्जितधर्मचित्तं
तं पद्मपाणिबहुरूपधरं नमामि ॥ १४॥

विण्मूत्रभूमिकृमिकोटिसमुद्भवन्ति
गत्वा च येन अलिरूपमनुस्मरन्ति ।
निःसारितं घुणघुणाय ददन्ति धर्मं
तं पद्मपाणिमलिरूपधरं नमामि ॥ १५ ॥

दुर्भिक्षमागधविशालभवेषु पुष्टिं
क्षुत्तृष्णदुःखभयपीडितसर्वसत्त्वाः ।
धान्यादिवृष्टिबहुव्रीहिसमृद्धिरत्नं
तं पद्मपाणिवरकारुणिकं नमामि ॥ १६ ॥

वाराह-अश्वकृतरूपमहाजवेन
उद्धृत्य येन वणिजो भयराक्षसीभिः ।
आस्तीर्य तं पवनवेगमहासमुद्रं
तं पद्मपाणिजितमृत्युभयं नमामि ॥ १७ ॥

त्रैधातुकं तव भजामि विमुक्तिदुःखं
नानासमाधिपरिपूर्णविचित्रमग्नम् ।
त्वद्रोमकूपनिवसन्ति अनेकसत्त्वाः
तं पद्मपाणिक्षयनाशकरं नमामि ॥ १८ ॥

नानाभयानि तव नाममनुस्मरन्ति
राज्ञश्च दण्डभयराक्षसचौरभूतैः ।
नद्यादिमार्गहतकन्दर चाग्निदग्धं
तं पद्मपाणिमभयं ददतं नमामि ॥ १९ ॥

व्याघ्रीभयं खगपिशाचसडाकिनीना-
मापत्सु व्याधिबहुकुष्ठवियोगदुःखम् ।
वैराग्यक्लेशबहु-आपद नाशयन्ति
तं पद्मपाणिभयनाशकरं नमामि ॥ २० ॥

शुक्लाष्टमीनियमधर्ममोघपाशं
तस्मै कृतं विजितमिन्द्रियब्रह्मचर्यम् ।
सर्वंप्रणम्य निजगेयमशेषपापं
तं पद्मपाणिवरदं सततं नमामि ॥ २१ ॥

नित्यं वसन् गुणसमृद्धितपोबलेषु
नानाद्रुमैस्तिलकचम्पकपारिजातैः ।
रम्यं तडागद्विजश्वापदसेवितं च
तं पद्मपाणिनिरयेषु सदा नमामि ॥ २२ ॥

देवैः कुबेरवरुणैर्यमवन्दितश्च
गन्धर्वयक्षमुनिदानववन्दितश्च ।
रक्षैश्च नागमनुजैश्च नमस्कृतेषु
भूतैः पिशाचगरुडैश्च नमस्कृतेषु ॥ २३ ॥

ये ये पठन्ति करुणास्तव नित्यकालं
शान्ति च पुष्टिधनवृद्धिषु लब्धकामाः ।
आयुर्विभूतिवरसौख्यविशालभागी
त्रैकालप्राप्तमपि पश्यति लोकनाथम् ॥ २४ ॥

संकीर्तयन्ति तव वीर्यमहानुभावं
रात्रौ दिवा च तव नाममनुस्मरन्ति ।
दुःस्वप्नविघ्नभयपापविनाशयन्ति
तुष्यन्तु देव सततं तव रक्षयन्ति ॥ २५ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य श्रीबन्धुदत्ताचार्यकृतः करुणास्तवः समाप्तः ।

●

कल्याणत्रिंशतिकास्तोत्रम्

एवंकारसमापन्ना कायवाक्चित्तबुद्धितः।
करोमि सततं तस्या नुतिं पूजां प्रदक्षिणाम् ॥ १ ॥

या देवी सर्वसत्त्वानां सृष्टिसंहारकारिणी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २ ॥

या देवी सर्वभूतानां प्रतिपाले प्रतिष्ठिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३ ॥

या देवी देवदेवीनां देवतारूपिणी स्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४ ॥

या देवी दैत्यदुर्दान्तदाहरूपा भयानका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ५ ॥

या देवी सर्वनागानां सहस्रमुखनागिनी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥

या देवी सप्तपाताले शान्तरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७ ॥

या देवी नरनारीणां वेदमाता चिदम्बिका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८ ॥

यां देवी क्षत्रिणीवैश्याशूद्रीजातिप्रपूजिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ९ ॥

या देवी प्रेतलोकानां पालनाय महर्द्धिका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १० ॥

या देवी सर्वतिर्यक्षु तारिणी तापनाशिनी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ११ ॥

या देवी नारकीयाणां दुःखभाजां च मातृका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १२ ॥

या देवी षोडशसंख्यनरकाणां विनाशिनी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १३॥

या देवी द्वेषिरागीणां मोहिनां दुर्दुरीकृता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १४॥

या देवी कामक्रोधाभ्यां क्रोधरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १५॥

या देवी लोभलाभानां लङ्घनाय विलम्बिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १६॥

या देवो मायाया माता मातॄणां वज्रयोगिनी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १७॥

या देवी राजचौराग्निसिंहशत्रुविनाशिनी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १८॥

या देवी जलनागाहिदुर्भिक्षभयतारिणी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १९॥

या देवी पञ्चभूतानां चन्द्रे सूर्ये प्रतिष्ठिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २०॥

या देवी भौतिकी वेला आलिकालिविचारिणी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २१॥

या देवी सर्वपीठेशी क्षेत्ररूपोपछन्दिका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २२॥

या देवी पीलवाख्याता उपपीलवमीलिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २३॥

या देवी द्वादशे चक्रे राशिलग्नविभूषिणी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २४॥

या देवी षडंगे देशे प्रोद्‌बुद्धमुखचन्द्रिका।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २५॥

या देवी चण्डचक्रेषु गामिनी परमेश्वरी।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २६॥

या देवी कायवाक्चित्ते मन्त्ररूपेण गामिनी ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २७ ॥

या देवी निर्मलात्मा श्रीऋद्धिसिद्धिबलप्रदा ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २८ ॥

या देवो सर्वजन्तूनां सदा मङ्गलकारिणी ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २९ ॥

य इदं पठते धीमान् देव्या भक्तिसमन्वितः ।
बुद्धत्वं लभते शीघ्रं कल्याणं मङ्गलं शिवम् ॥ ३० ॥

श्री त्रिकायनिवासिनीवज्रदेव्याः कल्याणत्रिंशतिकास्तोत्रं समाप्तम् ।

•

कल्याणपञ्चविंशतिस्तोत्रम्

श्रीमानाद्यः स्वयम्भूरमितरुचिरमोघाभिधोऽक्षोभ्यबुद्धः
श्रीमान् वैरोचनाख्यो मणिभवमुनिराड् वज्रसत्त्वः सुसत्त्वः।
श्रीप्रज्ञा वज्रधात्वी सकलशुभकरी आर्यतारादिकास्ताः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १ ॥

देवी सम्पत्प्रसादा गणपतिहृदया वज्रविद्राविणी सा
उष्णीषापर्णदेवी किटिवरवदना मातृका खेचराणाम्।
कोटोलक्षाक्षदेवो स्वगणपरिवृता पञ्चरक्षा सुरक्षा
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २ ॥

रत्ने दीपङ्कराख्यो मणिकुसुमजिनः श्रीविपश्यी शिखी च
विश्वम्भुः श्रीककुत्सः स च कनकमुनिः काश्यपः शाक्यसिंहः।
प्रत्युत्पन्नाभ्यभूतः सकलदशबलो पारमाहात्म्यसिन्धुः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥३॥

श्रीमानार्यावलोकेश्वरजिनजवरो मैत्रेयानन्तगञ्जो
बुद्धः सामन्तभद्रः कुलिशवरधरो मञ्जुनाथो महेशः।
सर्वाघोरी… क्षितिज · खगर्भाभिधानौ महान्तौ
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ४ ॥

बुद्धाधिष्ठानकन्दोद्भववरकमलो नागदासाभिधानः
सत्यां तां यौवनाथो निजवरभुवनाज्ज्योतिरेकं ससर्ज।
एकांशं पञ्च भूत्वा विहरति सततं पञ्चबुद्धात्मकोऽसौ
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ५ ॥

या प्रज्ञा गुह्यरूपा त्रिदलकमलजा सन्तु देवप्रसादा
नैरात्मा पीठरूपा बहुविहितहिता ब्रह्मविष्ण्वीशवन्द्या।
दुर्गायां मार्गकृत्स्ने कृतनतिवरदा प्रादुरासीदगाधैः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ६ ॥

मैत्रीयांशादभूद् यो वनमहदुपरे रत्नचूडास्यरत्नं
ज्योतिः संगम्य भव्यं भवजलधितरी रत्नलिङ्गेश्वराख्यः।
श्रीवत्सो वीतरागाष्टककृतमहिमा व्यक्तरूपाः(पः)स्वयम्भूः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ७ ॥

त्रातुं गोकर्णदुष्टं जपसि धृतमतिं लोकनाथाज्ञयाऽभूत्
पद्माकारं खगञ्जाभिधजिनतनयो वाग्मतीपूरतीरे।
श्रीगोकर्णेश्वरः स पितृजनहृतकृद् वाग्मतीसंगमेऽस्मिन्
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ८ ॥

क्रुद्धं नागाधिराजं कुलिकसमविधं त्रासयन् कीलवद् यो
लोकानां भद्रहेतोः गमनवदुपरि श्रीगिरौ वीतरागः।
श्री सामन्ताद्यभद्रो ध्वजकृतिरभवत् कालिनामा महेशः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ९ ॥

पातुं तं सर्वपादं कमलधरगिरा वज्रपाणिर्जिहीते
लोकानां रक्षणार्थं पुनरपि कलशाकारतांशादभूत् सः।
श्रीमान् सर्वेश्वराख्यो जिनवरतनयो दण्डशूलौ दधानः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १० ॥

दुर्बोधं मञ्जुगर्तंव्यजनसुखरतं कमिनीसुप्रबोधं
कृत्वा प्राज्ञं महान्तं कविवरमकरोन्मञ्जुदेवस्ततोऽपि।
श्वासं संधाय भव्यं सकलगुणपदं प्राप्य गर्तेशसंज्ञाः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ ११ ॥

मत्स्याकाराभिरासीत् सकलवरणविष्कम्भिनामा सुसत्त्वः
सालङ्कारः फणीन्द्रैरददखिलकात् योडियाख्यो ययासौ।
निष्कास्याशं फणीन्द्रेश्वर इति समभूद् वीतरागोऽप्यरागः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १२ ॥

स श्रीमानोडियाने व्यततपतपसा सातपत्रः सुतीरे
पृथ्वीगर्भाख्यबौद्धो ...झटिति तं स्थापयामास वासम्।
गन्धेशो वीतरागोऽभवदखिलसुहृल्लोकनाथाग्रतस्थः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १३ ॥

शंखं दध्मौ सहर्षः स्मरदमितसुतं विक्रमात् प्राप्तसिद्धिः
यस्माल्लोकेश्वराज्ञाविनिहितहरयः प्रादुरासीत् खगर्भः।
यः स्वाशं स्थापयित्वा निजपुरमगमद् विक्रमेशाभिधानं
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १४ ॥

नागस्तार्क्ष्येण यस्मादलभदनुसुखं पुण्यनामा सुतीर्थः
पार्वत्या यत्र तेपे कलहनिवसने शान्ततीर्थः प्रशान्तः।
तप्तं रुद्रेण दुर्गाभिलषितमनसा शङ्कराख्यस्त्रिवेणः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १५ ॥

तीर्थो राजाभिधानो यदलभदवनीपालराज्यं विरूपो
व्याधश्चैतश्च यस्मात् सुरपतिसदनं प्रागमत् कामतीर्थः।
वज्राचार्येण पश्यं यदभिषवकृतः संगमो निर्मलाख्यः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥१६ ॥

दीनैराप्तं निधानं यदपचितिपरैराकराख्यो हि तीर्थो
ज्ञैर्लब्धं ज्ञानमस्माद् यदुदकमतिभिर्ज्ञानिसंज्ञैकतीर्थः।
चिन्तामण्याख्यतीर्थाभिधवदभिषवैर्यत्र प्राप्तोऽभिलाषः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १७ ॥

यत्र स्नातैर्मुदाप्तेतिसमभिधमभूद् यश्च प्रामोदतीर्थः
प्रादात् सल्लक्षणं यः स्वपयसि सरतां तीर्थसल्लक्षणाख्यः।
यत्र स्नात्वा बलाख्यः सुरपतिरजयद् द्वीपमाख्यंभतीर्थः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १८ ॥

विद्याधर्याख्यदेवी गगनपथगता योगिनी वज्रपूर्वा
हारीतः श्रीहनूमान् सगणपतिमहाकालचूडाख्यवन्द्याः।
ब्रह्माण्याद्याश्च देव्यः सहरिसुखवरक्षारनास्कन्दयुक्ताः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ १९ ॥

वाग्मत्या मूलपुच्छप्रभृतय उपतीर्थास्तथा केशचैत्याः
शङ्खोच्चस्थाश्च जातोच्चयगिरिललितश्चैत्यभट्टारकोऽसौ।
फुल्लोच्चो द्रष्टदेवी तदनु भगवतीध्यानप्रोच्चादिसंस्थाः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २० ॥

मञ्जुश्रीपर्वतस्थोऽनुचरविरचितो मञ्जुशोभाख्यचैत्यः
शान्तश्रीनिर्मितेषु प्रकृतवसतयः पञ्चदेवापुरेषु ।
पुच्छाग्रश्चैत्यवर्योऽभ्यकथदनुपमं यत्र शाकेत्पुराशं
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २१ ॥

आधाराख्यो हृदिस्थः सगणफणिपतिर्विघ्नराजान्तकश्च
नागश्चानन्दलोके हरिहरिहरिवाहाख्यत्रैलोक्यवंशे ।
लोकेशायाक्षमत्वस्तदनु सफलयाशाभिलोकैकनाथः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २२ ॥

हेवज्रः संवरोऽसौ सपरिजनगणश्चण्डवीरस्त्रिलोकी
वीरो योगाम्बरोऽसौ यमनिधनकराद्या दशक्रोढ(ध)राजाः ।
गुह्या बाह्याश्च सर्वे परिमितप्रमुखा नामसंगीतिव्याख्या
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २३ ॥

शीर्षे प्रागात् पयोऽसौ सहितपरिजनश्चन्द्रसाहोसिताद्रिः
छित्वा शोषे हृदेऽस्मिन् पुरवरकमलो लोकवासाः परस्य ।
स्वस्थीभूताम्बुसंस्थः सकलजिनवरं प्राभजन्मञ्जुनाथः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २४ ॥

सौखावत्याश्च वज्रं तदनु जनहिते पोतले प्रागमद् यः
शान्तोऽवग्राहदोषे ललितपुरवरं प्राविशन् देवहूतः ।
स श्रीमान् वज्रपाणिः सजटधरहयग्रीवपार्षद्गणेशः
कल्याणं वः क्रियासुः क्वचिदपि सरतां तिष्ठतां नौम्यहं ताः ॥ २५ ॥

श्री स्वयम्भुपुराणोद्धृता कल्याणपञ्चविंशतिस्तुतिः
समाप्ता ।

•

गणेशस्तोत्रम्

खर्वं स्थूलतरं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं
विघ्नेशं मधुगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम् ।
दन्तोद्घातविदारिताहितजनं सिन्दूरशोभाकरं
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम् ॥ १ ॥

हेरम्बः परमो देवः कार्यसिद्धिविधायकः ।
सौभाग्यरूपसम्पन्नां देहि मे सुखसम्पदम् ॥ २ ॥

एकदन्तं महाकायं लम्बोदरं गजाननम् ।
सर्वसिद्धिप्रदातारं गङ्गापुत्रं नमाम्यहम् ॥ ३ ॥

वन्दे तं गणनाथमार्यमनघं दारिद्र्यदावानलं
शुण्डादण्डविधूयमानशमलं संसारसिन्धोस्तरिम् ।
यं नत्वा सुरकोटयः प्रभुवरं सिद्धिं लभन्ते परां
सिन्दूरारुणविग्रहं परिपतद्दानाम्बुधाराहृतम् ॥ ४ ॥

उच्चैर्ब्रह्माण्डखण्डद्वितयसहचरं कुम्भयुग्मं दधानः
प्रेषन्नागारिपक्षप्रतिभटविकटश्रोत्रतालाभिरामः ।
देवः शम्भोरपत्यं भुजगपतितनुस्पर्द्धिवर्धिष्णुहस्त-
स्त्रैलोक्याश्चर्यमूर्तिर्जयति त्रिजगतामीश्वरः कुञ्जरास्यः ॥ ५ ॥

गणपतिश्च हेरम्बो विघ्नराजो विनायकः ।
देवीपुत्रो महातेजा महाबलपराक्रमः ॥ ६ ॥

महोदरो महाकायश्चैकदन्तो गजाननः ।
श्वेतवस्त्रो महादीप्तस्त्रिनेत्रो गणनायकः ॥ ७ ॥

अक्षमालां च दन्तं च गृह्णन् वै दक्षिणे करे ।
परशुं मोदकपात्रं च वामहस्ते विधारयन् ॥ ८ ॥

नानापुष्परतो देवो नानागन्धानुलेपनः ।
नागयज्ञोपवीताङ्गो नानाविघ्नविनाशनः ॥ ९ ॥

देवासुरमनुष्याणां सिद्धगन्धर्ववन्दितम् ।
त्रैलोक्यविघ्नहर्तारमाख्वारूढं नमाम्यहम् ॥ १० ॥

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्नराजो विनायकः ॥ ११ ॥

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
वक्रतुण्डः शूर्पकर्णो हेरम्बः स्कन्दपूर्वजः ॥ १२ ॥

षोडशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ॥ १३ ॥

संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।
विघ्नवल्लीकुठाराय गणाधिपतये नमः ॥ १४ ॥

श्रीगणेशस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

गण्डीस्तवः

आचार्य-आर्यदेवकृतः

आपातालान्तदेवाः सुरनरगरुडा दैत्यगन्धर्वयक्षाः
सिद्धा विद्याधराद्या जलधितटगता नागसत्वाः समग्राः ।
गण्डीशब्दं समन्ताद् रभसितमनसः स्वासनेऽस्मिन् प्रसन्नाः
श्रोतुं [साधो]रधीरा विमलगुणगणस्यास्य त्रैलोक्यबन्धोः ॥ १ ॥

लीलावासितचामरैश्चलदहो काञ्चीप्रपञ्चालसत्
प्राञ्चत्काञ्चनकिङ्किणीभिररणत् स्वासीवहंसस्वनाः ।
तारुण्यामलनीलनीरजदलश्यामाङ्कमाराङ्गना-
श्चक्रुर्यस्य न मानसस्य विकृतिं बुद्धाय तस्मै नमः ॥ २ ॥

येषामस्ति प्रसादो भगवति सुगते मारभिद्योगयुक्ते
ये वा सद्यः प्रसन्नाः सुगतसुतकृते स्वस्ति येषां च भक्तिः ।
गण्डीमाहत्य चास्मिन् जगति शुभकरां शाक्यसिंहस्य शास्तुः
कृत्वा शुद्धान्तसंस्थां सुविहितमनसः श्रोतुमायान्ति सर्वे ॥ ३ ॥

बुद्धं त्रैलोक्यनाथं सुरनरनमितं पारसंसारतीरं
धीरं गम्भीरवन्तं सकलगुणनिधिं धर्मराज्याभिषिक्तम् ।
तृष्णामारान्तकारं कलिकलुषहरं कामलोभान्तवन्तं
तं वन्दे शाक्यसिंहं प्रणमितशिरसा सर्वकालं नमामि ॥ ४ ॥

ऋम्पं ऋम्पं ऋऋम्पं टम टम टटमं तुन्दतुन्दं तुतुन्दं
सं सं सं सं स सं सं समसममसमं दुर्मं दुर्मं द्रुदुर्मम् ।
नागिर्नागिर्ननागिस्तखितखितखितस्तत्यजुर्ये रणे वै
कैः कैः कैः कैश्च कैः कैर्जगति भयहरा कीर्त्यते धर्मगण्डी ॥ ५ ॥

कुरुत कुरुत श्रीपं ध्यानसन्नाहमग्नं
ग्रसति न खलु यावद् दुर्निवारः कृतान्तः ।
इति वदति जनौघे बोधिता भिक्षुसङ्घाः
क्षपितदुरितपक्षाकीर्णनिःशेषदोषाः ॥ ६ ॥

यस्मिन्नभ्युदितेऽखिलं त्रिभुवनं यात्यस्तमस्तङ्गते
येन ज्ञानगभस्तिहस्तविसरैर्हंस्तं यतस्तन्यते ।
सद्धर्मामलमण्डलो दशबलः संसाररात्र्यन्तकः
पायाद्वै मुनिभास्करः सुरगणान् बुद्धः प्रजाबान्धवः ॥ ७ ॥

चित्तं येन जितं गजेन्द्रचपलं ज्ञानाक्षरैर्नाङ्कुशै-
र्नष्टं रागतमोऽन्धकारपटलं ज्ञानाग्निना नाग्निना ।
ध्वस्तं मारबलं प्रशान्तमतिना क्षान्त्यायुधैर्नायुधै-
स्तं वन्दे प्रणतार्तिनाशनपटुं बुद्धं प्रबुद्धं मुनिम् ॥ ८ ॥

तीर्थ्यानामाशु सैन्यं झटिति विघटयन् नाकनिष्ठप्रतिष्ठं
भूयिष्ठाभिः प्रभाभिर्भुवनमवतरंस्त्रासयन् भासुराभिः ।
लक्ष्मीः पातालमूले स्थितकनकमहागर्भसिंहासनस्था
गीतज्योतिः स्वयं वो दिशतु दशबलो दर्शितप्रातिहार्यः ॥ ९ ॥

पादाङ्गुष्ठे निविष्टां क्षिपति पृथुशिलाद्यैः स राजातिगुर्वी
चोग्रं ग्रीष्मप्रतापप्रशममुपगतो वल्गुना मन्त्रपूताम् ।
तामेव त्रास्यमानो विघटयति सुखं श्वासनिःश्वासवातान्
लोकं सिद्धाः प्रणेमुः स दिशतु भगवान् सम्पदं सर्वदर्शी ॥ १० ॥

भग्ना मारादिरूपाः प्रलयभयकरा बद्धसन्नद्धकक्षा
नाना तीक्ष्णाग्रहस्ताः करितुरगमुखाः सिंहनादं नदन्तः ।
बुद्धत्वं येन नीताः कुवलयदलदृशा [प्रेक्षिता] भिक्षुसङ्घाः
धर्मं कान्तं [नितान्त]मघदलनपटुं तीर्थिकाणां शृणुध्वम् ॥ ११ ॥

चित्तं यस्याङ्गनाया रतितरलदृशाऽपाङ्गभङ्गैः सुभङ्गैः
क्षोभं नैवाशु नीतं कुचकलशभरैर्हारलीढैः सुलीढैः ।
तस्यैषा धर्मगण्डी मधुरकलरवं रावते भिक्षुसङ्घं
धर्मं कान्तं तदीयं परमभयकरं तीर्थिकाणां श्रृणुध्वम् ॥ १२ ॥

यः श्रीमान् धर्मचक्रे प्रमुदितमनसा धर्मरत्नैकमौलि-
र्भूयांसं पूर्णदेहं विकसितवदनं धर्मरत्नोद्गिरन्तम् ।
सिंहाक्रान्तासनस्थः कनकगिरिनिभो धर्मनादं नदन्तं
तस्येयं धर्मगण्डी प्रणदति सततं संशृणुध्वं जिनस्य ॥ १३ ॥

मा मा मा मीयकण्ठैर्डिमडिमगगता गागगार्गैर्गलन्तैः
ना ना ना नोपनीतं ननु ननु ननु मा धुर्यमाधुर्यकान्तैः।
गीतैः कामाङ्गनानां प्रचलितमभवद् यस्य चेतो न शर्मि
तस्यैषा धर्मकेतोः पटुपटहरवा रारटीत्युग्रगण्डी ॥ १४ ॥

किं संवर्तप्रदत्तप्रसववनचरा दीर्घसंरम्भनादाः
किं वा निर्वाटघातः किमुत भगवती हुङ्कृतिर्वज्रपाणेः।
तत्सर्वं वै जनानां प्रवचनमतयो द्रष्टुमन्तःप्रवृत्ता
बुद्धस्योदारमूर्तेस्त्रिदशभयकरो गण्डिवादः स एषः ॥ १५ ॥

ऊर्जासंघातिमारा विकृतनखमुखा रौद्रसिंह[स्व]रूपाः
पाताले रत्नदीपे प्रकटमणिगणाः शब्दिताः पर्वतेन्द्राः।
देवेन्द्रैर्मौलिरत्नैः प्रणमितचरणस्यास्य विश्वैकबन्धो
रौत्येषा हन्यमाना यतिषु शुभविदः शाक्यसिंहस्य गण्डी ॥ १६ ॥

कीर्तिर्नाथ प्रमथकमनङ्गोऽस्तु वा तत्त्वदीया
दीनानाथोद्धरण पुरतो गीयते मारशत्रोः।
खिन्दं खिन्दं खिखिन्दं खुद खुद सुखदं दत्तके दत्तुन्दं
तुन्दं तुन्दं तुतुन्दं ध्वनिपटुपटहैः सिद्धगन्धर्वनागैः ॥ १७ ॥

मारैर्नानाप्रकारैर्विकृतशतमुखैर्भूरिवक्त्रैर्ज्वलद्भि-
र्भीमैरट्टाट्टहासैः पललकवलितैः सिंहनादं नदद्भिः।
कालाकारैरनेकैर्गहनभयकरैः सर्वतो भीषयद्भि-
र्व्याप्तं चेतो न यस्य क्षणमपि नियतं मारभङ्गः स वोऽव्यात् ॥१८॥

राजा निष्कण्टराज्यो भवतु वसुमती सर्वसस्याभिपूर्णा
काले वर्षन्तु मेघा व्यपगतविपदः सन्तु लोकाः समस्ताः।
वीहारे कर्मपूर्णं यदखिलनृणां सर्वविघ्नोपशान्ति-
रन्योन्यप्रीतिभावाद् भवतु सुखमयो वीतरागार्यसङ्घः ॥ १९ ॥

शास्तुः सद्धर्मरत्नं सुगतवरसुतान् प्रेरयन्ती विशुद्धचेद्
रागद्वेषैर्विमूढान् विषमपथगतान् रावयन्ती जयन्ती।
सत्त्वानुत्तारयन्ती प्रशमशरशतैर्विद्यमानार्थवन्तं
शास्तुः संप्रीतिहार्यं विविधवररुतैः शान्तिकारी जनस्य ॥ २० ॥

स्फेटन्तं वारनार्या विकटगणघटाट्टाट्टहासं नदन्तं
खेलन्तं विस्फुरन्तं ज्वलदनलशिखाकान्तलीलां ददन्तम् ।
भन्तं प्रेमप्रकामं स्फुटदुरुवचसं कामधात्वीश्वरत्वं
तं वन्दे वन्दनीयं सकलभयहरं बुद्धवीरं सुवीरम् ॥ २१ ॥

संपन्नेऽङ्गुष्ठपद्मे झटिति हृदि तथा कण्ठ एवोपकण्ठे
ढक्कासंकाशतालैः कलपटुपटहैः शङ्खनिर्घोषिघोषैः ।
हा हा हुँ हूँ कृता ये झटिति कटकटैर्भीमनादानुमोदैः
क्षुद्रं चेतो न चैतत् सुरवरजयिनो यस्य तस्मै नमोऽस्तु ॥ २२ ॥

गर्जन्तं वाग्विशेषं प्रकटपटुरवैर्दिव्यगान्धर्वशब्दै-
र्नानानागेन्द्रयक्षैः स्तुतिचटुलशतैः पूज्यमाना महद्भिः ।
सांख्ये माहेश्वरीयानसुरगुरुतम् ··· ··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ···मारभन्ती करकमलगता शान्तिमारारटीति ॥ २३ ॥

दत्त्वा सर्वस्वदानी क्रतुकनकमयं वारणानां शतं वा
राज्यं पुत्रं कलत्रं स्वतनुमपि शिरश्चक्षुषां वा सहस्रम् ।
येना ··· ··· ··· ··· ··· भिरपि शतैर्वत्सराणां व्ययत्वात्
सम्यक्सम्बोधिरग्रा स जयति सुगतः शान्तये सज्जनानाम् ॥ २४ ॥

नानारूपविरूपदृश्यविकृतेर्भूयो ग्रसेद् भूतिभि-
र्बोधैर्योषिति रोधनप्रजनितज्योतिर्ज्वल[द्वन्ध]नैः ।
मारस्यानुचरैर्न यस्य सुधियः किञ्चिन्मनः कम्पितं
नृत्यैर्वा सुगतस्य मारजयिनो गण्डी रणत्यद्भुतम् ॥ २५ ॥

यस्या नादं निशम्य श्रवणसुखकरं यान्ति तृप्तिं समन्तात्
प्रेता भूमीमुखाद्याः पृथुतरवपुषः क्षुत्पिपासाभिभूताः ।
सम्यग्भक्त्या प्रसन्नैः सुरनरवपुषैः श्रूयते चातुरैर्या
सा गण्डी पातु विश्वं दशबलबलिनस्तस्य माना मनोज्ञा ॥ २६ ॥

नानावाद्यकरीन्द्रवाजिमहिषव्याघ्रादिशब्दैर्युतं
चञ्चत्कुन्तसुबाणतोमरगदाचक्रादिशस्त्रोद्यतम् ।
भग्नं सैन्यमनेन योधसहितं मारस्य येन क्षणात्
तस्येयं करुणानिधेर्भगवतः पायाज्जगद् गण्डिका ॥ २७ ॥

धर्मे संरम्भचित्ताः प्रभवहतविधिः पापतः सर्वदैव
दाने शीले क्षमायां पठति सकरुणे सज्जनाः संयताः स्युः ।
इत्येवं सर्वसत्त्वान् सुमधुररणितैर्बोधयन्ती विशुद्धा
तन्नः पुण्यैर्वचोभिस्त्रिजगति सकलं बुद्धवीरस्य गण्डी ॥ २८ ॥

शृण्वन्ती सावधाना प्रशमततशराभ्यासनैर्नैव शब्दं
सेन्द्रादानन्दवज्री स्वभुवननृपतेस्तुङ्गवेलेव देवान् ।
वन्दीभूतान् मुनीन्द्रान् प्रवचनपटुताकारसंरम्भशब्दै-
र्या गण्डी दण्डघातक्रममनुरणनाद् दुन्दुभीवद् धुनोति ॥ २९ ॥

हुंकारी पद्मयोनिस्त्रिपुरविजयिनो वल्लभः शूलपाणि-
र्विष्णुर्यद् वज्रपाणिः सुरपतिरसुरध्वंसनश्चक्रपाणिः ।
ये वा चान्ये स्तुवन्ति प्रमतनिजरवे क्षोभभावे किमास्ते
सर्वे तस्याङ्घ्रिमूले विनयमुपगता गेयमन्त्रं स्तुवामि ॥ ३० ॥

अज्ञान् सर्वज्ञनाथान् मुनिपदसहितान् भ्रामयन्ती त्रिलोकं
मारांश्चान्यप्रकारैर्विविधभयकरान् त्रासयन्ती समस्तान् ।
पापान् प्रोत्सारयन्ती विषयरतिधियः पण्डितान् बोधयन्ती
प्रोच्चैः संरुद्धबोध्यान् प्रवदति भुवने शाक्यसिंहस्य गण्डी ॥ ३१ ।

व्याघ्रयै दत्त्वा स्वदेहं गुणशतनिवहं पुण्यसम्भारलब्धं
बुद्धत्वं यः प्रयातः प्रतिहतदुरितो मन्मथोन्मादनार्थी ।
शास्ता यश्चाद्वितीयो भवभयभिदुरो भिन्नपापाभिसन्धि-
स्तस्येयं वै विचित्रा स्तनति भगवतः शाक्यसिंहस्य गण्डी ॥ ३२ ॥

मायादेव्याश्च कुक्षौ जनितजिनवरः शाक्यसिंहो मुनीन्द्रो
भूम्नि प्रायात्तु मध्ये प्रवरसुमुनिना लोकवृक्षस्य मूले ।
देवेन्द्रब्रह्मरुद्रासुरनरविबुधैः स्नापितो यः स देव-
स्तं वन्दे भक्तिरत्नैः शशधरकिरणाक्षोदिदेहं मुनीन्द्रम् ॥ ३३ ॥

मारैर्नानाप्रकारैरसिपरशुधनुर्बाणहस्तैर्ज्वलद्भि-
र्भीमास्यैर्दुष्टदंष्ट्रैर्गजभुजगमुखैः सिंहवक्त्रैः श्ववक्त्रैः ।
प्रत्यञ्चेनोनमस्य क्षणमपि शमितस्तस्य बुद्धस्य पादौ
गन्तुं लोकोऽपि सर्वो ध्रुवमिति गतभीश्चैषु गण्डी निनाद्या ॥ ३४ ॥

श्री गण्डीस्तवः समाप्तः ।

कृतिरियम् आचार्य-आर्यदेवपादानाम् ।

गुरुरत्नत्रयस्तोत्रम्

ॐ नमोरत्नत्रयाय

तृष्णाजिह्वमसद्विकल्पशिरसं प्रद्वेषचञ्चत्फलं
कामक्रोधवितर्कदर्शनमथो रागप्रचण्डेक्षणम् ।
मोहास्यं स्वशरीरकोटिशतचिन्तातिगं दारुणं
प्रज्ञामन्त्रबलेन यः शमितवान् बुद्धाय तस्मै नमः ॥ १ ॥

बुद्धं प्रबुद्धं वरधर्मराजं शान्तं विशुद्धं समकीर्तिदं तं ।
गुणाकरं सत्त्वमुनीन्द्रराजं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ २ ॥
इति बुद्धरत्नस्तोत्रम् ।

यो जात्यादिकदुःखतप्तमहसां चक्षुः सतां प्राणिनां
यस्त्रैधातुकपञ्जरादहरहः सत्त्वान् समाकर्षति ।
अत्राणं च जगत्समुद्धरति यः संक्लेशदुःखार्णवात्
संबुद्धांश्च पुनश्च्युताच्च महते धर्माय तस्मै नमः ॥ ३ ॥

या सर्वज्ञतया नयत्युपशमं शान्तैषिणः श्रावकान्
या मार्गज्ञतया जगद्धितकृता लोकार्थसम्पादिका ।
सर्वाकारमिदं वदन्ति मुनयो विश्वस्य या संगता
तस्यै श्रावकबोधिसत्त्वगणिनो बुद्धस्य मात्रे नमः ॥ ४ ॥
इतिधर्मरत्नस्तोत्रम् ।

चत्वारः प्रत्युत्पन्नगा भवसुखे सुस्वादविद्वेषिण-
श्चत्वारश्च फले स्थिताः शमरताः शान्ता महायोगिनः ।
इत्यष्टौ वरपुंगला भगवता यस्मिन् गणे व्याकृताः
प्रज्ञाशीलसमाधितप्तवपुषा संघाय तस्मै नमः ॥ ५ ॥

बुद्धं नमामि सततं वरपद्मपाणिं
मैत्र्यात्मकं गगनगंजसमन्तभद्रम् ।
यक्षाधिपं परिहितोद्धृतमञ्जुघोषं
विष्कम्भिणं क्षितिगर्भं प्रणमामि भक्त्या ॥ ६ ॥
इति संघरत्नस्तोत्रम् ।

गुरुर्बुद्धो गुरुर्धर्मो गुरुः संघस्तथैव च ।
गुरुर्वज्रधरः श्रीमान् तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ७ ॥

श्री गुरुरत्नत्रयस्तोत्रं समाप्तम् ।

गुह्येश्वरीस्तोत्रम्

भगवति बहुरूपे निर्विकारे निरञ्जे
निमितनिखिलरूपे निश्चयातीतरूपे ।
अखिलनिगमपारे नित्यनित्यस्वभावे
चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥ १ ॥

हसितमुखशशाङ्कं ज्योत्स्नया रात्रिभूतं
दशशतकिरणोद्यद्वक्त्रमाध्यन्दिनं ते ।
अरुणवदनशोभा औदयी चास्तकाले
चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥ २ ॥

गलजठरपदेषु स्वर्गमर्त्याहिलोकाः
सकलभगणदन्ता रोमराजी द्रुमास्ते ।
गिरय इव नितम्बा रक्तशुक्लाः समुद्रा-
श्चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥३॥

पवनदहनवेगाः श्वासप्रश्वास एव
प्रलयप्रभवकालो मीलनोन्मीलनाभ्याम् ।
द्विदशतपनभूता भीमवक्त्रास्त्वदीया-
श्चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥ ४ ॥

अनुपमतनुदेहं व्याप्यमानं समन्ता-
न्निखिलनिगमसारं दर्शयन् देवि दिव्यम् ।
त्रिभुवनमखिलं ते दर्शितुमेति बुद्धि-
श्चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥ ५ ॥

विधिमुखविबुधास्ते किंकराः पादसंस्था
मुकुटविधृतबुद्धे सर्वमार्गा हि शुद्धे ।
किमु तव महिमानं वर्णये गुह्यदेवि
चरणकमलयुग्मं नौमि देवि त्वदीयम् ॥ ६ ॥

अनुपठति समाप्तौ पूजने भक्तिमान् यो
नुतिमति वित तोति स्पष्टमेवास्य बुद्धिः ।
सकलजनजनन्या भक्तिसम्पत्तिमुच्चैः
करतलवशगास्ताः सिद्धिपुष्ट्यौ लभन्ते ॥७॥

**श्री स्वयंभूपुराणोद्धृतं मञ्जुनाथकृतं
गुह्येश्वरीस्तोत्रं समाप्तम् ।**

चक्रसंवरस्तुतिः

(हेरुकविशुद्धिस्तोत्रं वा)

ॐ नमः श्रीचक्रसंवराय

श्रीहेरुकं महावीरं चक्रसंवरसंवरम् ।
नमामि मारजेतारं डाकिनीजालमा(ना)यकम् ॥ १ ॥

वन्दे तां वज्रवाराहीं महारागानुरूपिणीम् ।
डाकिनीं च तथा लामां खण्डरोहां च रूपिणीम् ॥ २ ॥

चत्वारो(त्वरेऽ)मृतभाण्डां च बोधिचित्तेन पूरिताम् ।
पुल्लीरमलयशिरसि प्रचण्डां वज्रडाकिनीम् ॥ ३ ॥

जालन्धरशिखां चैव चण्डाक्षीं गतकिल्विषाम् ।
ओडियानाह्वये सर्वे श्रोत्रे देवीं प्रभावतीम् ॥ ४ ॥

अर्बुदे पृष्ठवंशे तु महानासां नमाम्यहम् ।
गोदावरीं पुरे वामे कर्णे वीरमतीं शुभाम् ॥ ५ ॥

रामेश्वरीं भ्रुवोर्मध्ये खर्वरीं वरवर्णिनीम् ।
देवीकोट्टे स्थितां मैत्रे श्रीमल्लङ्केश्वरीप्रभाम् ॥ ६ ॥

मालवे स्कन्धदेशे तु द्रुमच्छायां नमाम्यहम् ।
कामरूपे कक्षद्वये देवीमैरावतीं शुभाम् ॥ ७ ॥

ओड्रे स्तनद्वये वापि श्रीमहाभैरवां सतीम् ।
त्रिशकुन्याह्वये नाभौ वायुवेगां मनोरमाम् ॥ ८ ॥

कोशले नासिकाग्रे वा सुराभक्षीं नमाम्यहम् ।
कलिङ्गे वदने रम्ये श्यामादेवीं सनातनीम् ॥ ९ ॥

लम्पाके कण्ठदेशे तु सुभद्रां वरसुन्दरीम् ।
काञ्चीप्रेतहृदये हयकर्णां मनोरमाम् ॥ १० ॥

हिमालये पुरे मेढ्रे नमस्यामि खगाननाम् ।
प्रेतपुर्यां तथा लिङ्गे कौबेर्यां शस्यनीश्वरीम् ॥ ११ ॥

गृहदेवता गुदे स्थाने खण्डरोहां मनोहराम् ।
सौराष्ट्रे ऊरुयुगले शौण्डिनीं सुखदायिनीम् ॥ १२ ॥

सुवर्णद्वीपे जंघायां संस्थितां चक्रवर्मिणीम् ।
नगरे चाङ्गुलीस्थाने सुवीरां वरयोगिनीम् ॥ १३ ॥

सिन्धौ च पादयोः पृष्ठे स्थितां देवीं महाबलाम् ।
मरौ चाङ्गुष्ठयुगले च संस्थितां चक्रवर्तिनीम् ॥ १४ ॥

कुलताजानुद्वये देवीं महावीर्यां नमाम्यहम् ।
खण्डकपालवीराद्यां स्वप्रज्ञाशिष्टविग्रहाम् ॥ १५ ॥

मम भक्त्या महावीरां कायवाक्चित्तचक्रगाम् ।
काकतुण्डीमुलूकास्यां श्वानास्यां शूकराननाम् ॥ १६ ॥

यमदाढीं यमदूतीं यमदंष्ट्रीं यमान्तिकाम् ।
एता देवीर्नमस्यामि दिग्विदिक्षु च संस्थिताः ॥ १७ ॥

वीरवीरेश्वरीनाथं हेरुकं परमेश्वरम् ।
स्तुत्वेदं देवतीचक्रं यन्मयोपार्जितं शुभम् ॥
तेन पुण्येन लोकोऽस्तु वज्रडाको जगद्गुरुः ॥ १८ ॥

श्रीचक्रसंवरस्य स्तुतिः समाप्ता ।

चण्डिकादण्डकस्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीचण्डिकायै

ऊं ऊं ऊं उग्रचण्डं चचकितचकितं चंचरा(ला) दुर्गनेत्रं
हूं हूं हूंकाररूपं प्रहसितवदनं खड्गपाशान् धरन्तम् ।
दं दं दं दण्डपाणिं डमरुडिमिडिमां डण्डमानं भ्रमन्तं
भ्रं भ्रं भ्रं भ्रान्तनेत्रं जयतु विजयते सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ १ ॥

घ्रं घ्रं घ्रं घोररूपं घुघुरितघुरितं घर्घरीनादघोषं
हुं हुं हुं हास्यरूपं त्रिभुवनधरितं खेचरं क्षेत्रपालम् ।
भ्रूं भ्रूं भ्रूं भूतनाथं सकलजनहितं तस्य देहा (?) पिशाचं
हूं हूं हूंकारनादैः सकलभयहरं सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ २ ॥

व्रं व्रं व्रं व्योमघोरं भ्रमति भुवनतः सप्तपातालतालं
क्रं क्रं क्रं कामरूपं धधकितधकितं तस्य हस्ते त्रिशूलम् ।
द्रुं द्रुं द्रुं दुर्गरूपं भ्रमति च चरितं तस्य देहस्वरूपं
मं मं मं मन्त्रसिद्धं सकलभयहरं सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ३ ॥

झं झं झंकाररूपं झमति झमझमा झंझमाना समन्तात्
कं कं कंकालधारी घुघुरितघुरितं धुन्धुमारी कुमारी ।
धूं धूं धूं धूम्रवर्णा भ्रमति भुवनतः कालपास्त्रिशूलं
तं तं तं तीव्ररूपं मम भयहरणं सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ४ ॥

रं रं रं रायरुद्रं रुरुधितरुधितं दीर्घजिह्वाकरालं
पं पं पं प्रेतरूपं समयविजयिनं सुम्भदम्भे निसुम्भे ।
संग्रामे प्रीतियाते जयतु विजयते सृष्टिसंहारकारी
ह्रीं ह्रीं ह्रींकारनादे भवभयहरणं सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ५ ॥

हूंकारी कालरूपी नरपिशितमुखा सान्द्ररौद्रारजिह्वे
हूंकारी घोरनादे परमशिरशिखा हारती पिङ्गलाक्षे ।
पङ्के जाताभिजाते चुरु चुरु चुरुते कामिनी काण्डकण्ठे
कङ्काली कालरात्री भगवति वरदे सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ६ ॥

ष्ट्रीं ष्ट्रीं ष्ट्रींकारनादे त्रिभुवननमिते घोरघोरातिघोरं
कं कं कं कालरूपं घुघुरितघुरितं घुं घुमा बिन्दुरूपी।
धूं धूं धूं धूम्रवर्णा भ्रमति भुवनतः कालपाशत्रिशूलं
तं तं तं तीव्ररूपं मम भयहरणं सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ७ ॥

झ्रौं झ्रौं झ्रौंकारवृन्दे प्रचरितमहसा वामहस्ते कपालं
खं खं खं खड्गहस्ते डमरुडिमडिमां मुण्डमालासुशोभाम्।
रुं रुं रुं रुद्रमालाभरणविभूषिता दीर्घजिह्वा कराला
देवि श्री उग्रचण्डी भगवति वरदे सिद्धिचण्डी नमस्ते ॥ ८ ॥

आरुणवर्णसङ्काशा खड्गफेटकबिन्दुका।
कामरूपी महादेवी उग्रचण्डी नमोऽस्तुते ॥ ९ ॥

श्री चण्डिकादण्डकस्तोत्रं समाप्तम्।

चतुःषष्टिसंवरस्तोत्रम्

श्रीहेरुकं महावीरं विशुद्धं कुलिशेश्वरम् ।
नमामि सर्वभावेन डाकिनीगणभूषितम् ॥ १ ॥

संवराय नमस्तुभ्यं द्वयाकाराय नमो नमः ।
चक्रस्थिताय देवाय चक्रसंवर ते नमः ॥ २ ॥

मेषवक्त्र नमस्तेऽस्तु शिवशक्तिस्वरूपिणे ।
महाक्रोधस्वरूपाय मेषसंवर ते नमः ॥ ३ ॥

अश्वाननाय देवाय रतिकर्मरताय च ।
भुक्तिमुक्तिप्रदात्रे च अश्वसंवर ते नमः ॥ ४ ॥

व्याघ्रास्याय नमस्तुभ्यं शक्तियुक्ताय वै नमः ।
सुरामांसरतो नित्यं व्याघ्रसंवर ते नमः ॥ ५ ॥

कूर्मास्याय नमस्तुभ्यं सुरते संरताय च ।
नमो देवाधिदेवाय कूर्मसंवर ते नमः ॥ ६ ॥

नमामि मत्स्यवक्त्राय मानवानां हिताय वै ।
नमो नमस्ते देवेश मत्स्यसंवर ते नमः ॥ ७ ॥

मकराकारवक्त्राय महाशक्तिधराय च ।
मनोवाञ्छाप्रदात्रे च मकरसंवर ते नमः ॥ ८ ॥

संवरायोष्ट्रवक्त्राय शक्तिकालिङ्गनाय च ।
मैथुने तत्परायाथ उष्ट्रसंवर ते नमः ॥ ९ ॥

नमामि गजवक्त्राय योनौ लिङ्गप्रदाय च ।
नमो भगवते तुभ्यं गजसंवर ते नमः ॥ १० ॥

मण्डूकानननाथाय त्रैलोक्येशाय ते नमः ।
नमो देवाधिदेवाय मण्डूकसंवराय च ॥ ११ ॥

नमामि चाविवक्त्राय नित्यं रतिरताय च ।
नमस्ते देवदेवेश अहिसंवर ते नमः ॥ १२ ॥

शुकाननाय देवाय द्वयाकाराकारशोभिने ।
नमो नमस्ते भीमाङ्ग शुकसंवर ते नमः ॥ १३ ॥

संवराय नमस्तेऽस्तु शक्तियुक्ताय वै नमः ।
सिंहाननाय वै नित्यं सिंहसंवर ते नमः ॥ १४ ॥

मर्कटाननदेवाय शक्तिचुम्बनरताय च ।
नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु हरिसंवर ते नमः ॥ १५ ॥

श्वानवक्त्र नमस्तेऽस्तु शक्तिचुम्बनकारिणे ।
नमस्ते भगवन् देव श्वानसंवर ते नमः ॥ १६ ॥

वराहास्यवरेवान भगक्रीडनकारक ।
नमामि शक्तियुक्ताय घृष्टिसंवर ते नमः ॥ १७ ॥

जम्बुकास्याय देवाय शक्तिकालिङ्गणाय च ।
सर्वपापहरायैव शिवासंवर ते नमः ॥ १८ ॥

नमामि गृध्रवक्त्राय दुःखनाशाय ते नमः ।
द्वयाकारसिद्धिदेवाय गृध्रसंवर ते नमः ॥ १९ ॥

काकाननाय शुद्धचक्ष शृङ्गाररूपधारिणे ।
नमो भगवते तुभ्यं काकसंवर ते नमः ॥ २० ॥

उलूकवक्त्रिणे तुभ्यं महासौख्यप्रदाय च ।
योनिमैथुनकृद्देवोलूकसंवर ते नमः ॥ २१ ॥

तार्क्ष्याननाय देवाय तारिणे भवसागरात् ।
नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमो गरुडसंवर ॥ २२ ॥

गोवक्त्राय नमस्तुभ्यं गोहत्यापापहारिणे ।
गोत्रवृद्धिप्रदात्रे च धेनुसंवर ते नमः ॥ २३ ॥

गर्दभाकारवक्त्राय गतागतक्षयाय ते ।
गणेश्वराय देवाय खरसंवर ते नमः ॥ २४ ॥

महिषास्याय देवाय महाप्रलयकारिणे ।
शक्तियुक्ताय देवाय नमो महिषसंवर ॥ २५ ॥

विडालास्य नमस्तुभ्यं मूत्रकुण्डप्रक्रीडिने ।
श्रेष्ठाय परमेशाय नमो मार्जारसंवर ॥ २६ ॥

नमामि शाल्ववक्त्राय द्व्यङ्गमेकेव शोभितम् ।
नमामि देवदेवेश नमः शरभसंवर ॥ २७ ॥

सिद्धाय सिद्धरूपाय गुणाय गुणवर्तिने ।
क्रौञ्चास्याय नमस्तुभ्यं क्रौञ्चसंवर ते नमः ॥ २८ ॥

उल्काननाय शुद्धाय उत्तमाय नमो नमः ।
उग्राय भीमरूपाय उल्कसंवर ते नमः ॥ २९ ॥

हंसवक्त्र नमस्तेऽस्तु हंसस्वरस्वरूपिणे ।
हंसःसोऽहंस्वरूपाय हंससंवर ते नमः ॥ ३० ॥

मृगवक्त्राय देवाय नमामि परमेश्वर ।
ऋद्धिसिद्धिप्रदात्रे च मृगसंवर ते नमः ॥ ३१ ॥

शक्तियुक्त नमस्तेऽस्तु चक्रवाकाननाय च ।
नमस्ते चकवाकाख्यसंवराय नमो नमः ॥ ३२ ॥

अजाननाय वीराय अविद्यानाशिने नमः ।
अपवर्गफलाप्त्यर्थमजसंवर ते नमः ॥ ३३ ॥

कुक्कुटास्याय देवाय कुलवृद्धिकराय च ।
नमस्ते कौटुकेशाय तुभ्यं कुक्कुटसंवर ॥ ३४ ॥

कृष्णसारसवक्त्राय नमस्ते कर्मसम्भव ।
कालनाशाय देवाय एणसंवर ते नमः ॥ ३५ ॥

मूषाननाय पूर्णाय ज्ञानदाय नमो नमः ।
सर्वदैत्यविनाशाय मूषसंवर ते नमः ॥ ३६ ॥

सालूकास्य नमस्तेऽस्तु मानादिवरदाय च ।
सिद्धिबुद्धिप्रदात्रे च नमः सालूकसंवर ॥ ३७ ॥

नमः कपोलवक्त्राय प्रज्ञोपायात्मरूपिणे ।
नमस्तेऽस्तु महावीर कपोतसंवराय च ॥ ३८ ॥

नमामि ग्राहवक्त्राय भुक्तिमुक्तिप्रदाय च ।
नमोऽस्तु सर्वभूतेश ग्राहसंवर ते नमः ॥ ३९ ॥

नमस्ते चिल्लवक्त्राय नमस्ते मैथुने रत ।
नमस्ते भगवन् देव चिल्लसंवर ते नमः ॥ ४० ॥

चटकास्याय देवाय नमस्तेऽस्तु जगद्गुरो।
नमस्तेऽस्तु गुणाधीश चटकसंवर ते नमः ॥ ४१ ॥

सारसास्य नमस्तुभ्यं नमस्ते गुणसागर।
नमो भगवते तुभ्यं सारससंवराय च ॥ ४२ ॥

खञ्जनास्याय देवाय महादेवाय ते नमः।
निर्वाणपददात्रे खञ्जरीटसंवराय च ॥ ४३ ॥

नमस्ते क्षेमकर्यास्य भुक्तिमुक्तिप्रदाय च।
नमो भगवते देव क्षेमकरिसंवराय ते ॥ ४४ ॥

शशकास्य नमस्तुभ्यं नमस्ते भुवनेश्वर।
कर्मप्रदाय ते नित्यं नमः शशकसंवर ॥ ४५ ॥

नमो भल्लूकवक्त्राय रतिक्रीडापराय च।
कार्यसिद्धिप्रदात्रे च नमो भल्लूकसंवर ॥ ४६ ॥

पिकास्याय नमस्तुभ्यं मन्त्रसिद्धिकराय च।
त्रिलोकेशाय सर्वाय पिकसंवर ते नमः ॥ ४७ ॥

नमामि वकवक्त्राय शक्तियुक्तगणाधिप।
नमामि देवदेवेश वकसंवर ते नमः ॥ ४८ ॥

खड्गिवक्त्राय देवाय सर्वदा शिरसा नमः।
नमोऽस्तु परमेशाय खड्गिसंवर ते नमः ॥ ४९ ॥

कर्कटास्य नमस्तुभ्यं नमः संसारहेतवे।
पापपुञ्जविनाशाय नमः कर्कटसंवर ॥ ५० ॥

नमः शल्लकिवक्त्राय सर्वदोषनिवारिणे।
संसारपाशनाशाय नमः शल्लकिसंवर ॥ ५१ ॥

वृश्चिकास्य नमस्तुभ्यं बलकल्याणदाय च।
नमो नमस्ते देवाय नमो वृश्चिकसंवर ॥ ५२ ॥

अलिवक्त्राय देवाय अलिमोदाय ते नमः।
अलिलोकविनाशाय अलिसंवर ते नमः ॥ ५३ ॥

जाहकास्य नमस्तेऽस्तु जनमोहकृताय वै।
जयकल्याणदात्रे च नमो जाहकसंवर ॥ ५४ ॥

चमरीवक्त्र ते नित्यं चातुर्यफलदायिने ।
चतुर्वर्गप्रदात्रे च नमश्चमरिसंवर ॥ ५५ ॥

सीम्निवक्त्रनमस्तुभ्यं सिद्धित्वफलदायिने ।
नमो भगवते नित्यं सीम्निसंवर ते नमः ॥ ५६ ॥

नमामि गोधवक्त्राय नमस्ते भीमविक्रम ।
नमस्ते दिव्यनेत्राय गोधासंवर ते नमः ॥ ५७ ॥

चकोरास्य नमस्तुभ्यं चाञ्चल्यदोषनाशक ।
नमो भगवते तुभ्यं चकोरसंवराय च ॥ ५८ ॥

गोधिकास्याय सततं सृष्टिसंहारकरिणे ।
नमस्ते परमानन्द गोधिकासंवराय च ॥ ५९ ॥

मधुमाक्षिकवक्त्राय नमस्ते मानदायक ।
सर्वज्ञाय परेशाय नमो माक्षिकसंवर ॥ ६० ॥

पतङ्गवक्त्र ते नित्यं परमेश नमः सदा ।
दिव्याय दिवसेशाय नमः पतङ्गसंवर ॥ ६१ ॥

नरवक्त्राय देवाय नरकघ्नाय ते नमः ।
नानारूपदधानाय नरसंवर ते नमः ॥ ६२ ॥

सृष्टिरूप जगद्धाम सृजते सर्वभूतकम् ।
नमो नमस्ते सततं सृष्टिसंवर ते नमः ॥ ६३ ॥

स्थितिरूपाय देवाय गुणाय गुणवर्तिने ।
नमः सारविनाशाय स्थितिसंवर ते नमः ॥ ६४ ॥

सर्वलोकस्य संहारकर्त्रे ते परमेश्वर ।
तस्मादहं नमस्यामि नमः प्रलयसंवर ॥ ६५ ॥

ज्योतिर्वक्त्र परं धाम नमस्ते जगदीश्वर ।
परात्परतरं सूक्ष्म ज्योतिःसंवर ते नमः ॥ ६६ ॥

इतीदं संवरस्तोत्रं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ।
परात्परतरं स्तोत्रं चतुःषष्टिप्रमाणकम् ॥ ६७ ॥

चतुःषष्टिप्रमाणेषु आद्यमाद्यं तु वक्त्रितम् ।
भूयो ग्रन्थमयाच्चात्र आद्यमात्रं प्रचोदितम् ॥ ६८ ॥

कन्यार्थी लभते कन्यां धनार्थी लभते धनम् ।
विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी मोक्षमाप्नुयात् ॥ ६९ ॥

वशीकरणमुच्चाटं मारमोहनस्तम्भनम् ।
आकर्षणं च विद्वेषं धातुवादं रसायनम् ॥ ७० ॥

गुटिकां पादुकासिद्धिं खड्गसिद्धिं तथैव च ।
खेचरीसिद्धि वैद्याङ्गं मन्त्रसिद्धि च वाक्पटुः ॥ ७१ ॥

परकायप्रवेशं च द्रव्याकर्षणमेव च ।
लभते स्तोत्रराजेन सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥ ७२ ॥

दुर्भिक्षं चापदि पाठं कुरुते शुभमाप्नुयात् ।
अतिवृष्टावनावृष्टौ महामारीसमुद्भवे ॥ ७३ ॥

राज्यभ्रंशे ज्ञानभ्रंशे स्त्रीभ्रंशे च धनक्षये ।
कलहे च विवादे च पठते स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ७४ ॥

भिक्षुकेभ्यः सहस्रेभ्यः तुल्यं दानकृतं फलम् ।
बहुनात्र किमुक्तेन ब्रह्माण्डदानजं फलम् ॥ ७५ ॥

श्रीसंवरागमे महातन्त्रे अमिताभवैरोचनसंवादे
श्रीचक्रसंवरादिचतुःषष्टिसंवरस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

चैत्यवन्दनास्तोत्रम्

जातिं बोधिं प्रबलमतुलं धर्मचक्रमरण्ये
चैत्ये चार्यं त्रिभुवननमितं श्रीमतं प्रातिहार्यम् ।
स्थाने चैत्ये गिरिनगरनिभे देवदेवावतारं
वन्दे भक्त्या प्रणमितशिरसा निर्वृता येन बुद्धाः ॥ १ ॥

वैशाल्यां धर्मचक्रे प्रथितजिनवरे पर्वते गृध्रकूटे
श्रावस्त्यां लुम्बिकायां कुशिनगरवरे कापिलाख्ये च स्थाने ।
कौशल्यां स्थूलकूटे मधुरवरपुरे नन्दगोपासराते
ये चान्ये धातुचैत्या दशबलबलिना तान् नमस्यामि बुद्धान् ॥ २ ॥

कैलाशे हेमकूटे हिमवति निलये मन्दरे मेरुशृङ्गे
पाताले वैजयन्ते धनपतिनिलये सिद्धगन्धर्वलोके ।
ब्रह्माण्डे विष्णुभूम्यां पशुपतिनगरे चन्द्रसूर्यातिरेके
ये चान्ये धातुचैत्या दशबलवलिता तान् नमस्यामि बुद्धान् ॥ ३ ॥

काश्मीरे चीनदेशे खसतवरपुरे बल्कले सिंहले वा
राताद्ये सिंहपोटे सततमविरतं वल्लखे कापिलाख्ये ।
नेपाले कामरूपे कुवसवरपुरे कान्तिशोभासराते
ये चान्ये धातुचैत्या दशबलवलिता तान् नमस्यामि बुद्धान् ॥ ४ ॥

ये च स्युर्धातुगर्भा दशबलतनुजाः कुम्भसंज्ञाश्च चैत्याः
अङ्गाराः क्षारस्थाने हिमरजतनुमास्तूपरत्नप्रकाशम् ।
पाताले ये च भूम्यां गिरिशिखरगता ये च वित्ताः समन्ताद्
बुद्धानां ये च विम्बाः प्रतिदिनसुकृतस्तान् नमस्यामि बुद्धान् ॥ ५ ॥

श्री चैत्यवन्दना समाप्ता ।

(आर्य) तारानमस्कारैकविंशतिस्तोत्रम्

ॐ नमो भगवत्यै आर्यश्री-एकविंशतितारायै

नमस्तारे तुरे वीरे क्षणद्युतिनिभेक्षणे ।
त्रैलोक्यनाथवक्त्राब्जविकसत्कमलोद्भवे ॥ १ ॥

नमः शतशरच्चन्द्रसंपूर्णेव वरानने ।
तारासहस्रकिरणैः प्रहसत्किरणोज्ज्वले ॥ २ ॥

नमः कनकनीलाब्ज-पाणिपद्मविभूषिते ।
दानवीर्यतपःशा(क्षा)न्तितितिक्षाध्यानगोचरे ॥ ३ ॥

नमस्तथागतोष्णीषविजयानन्तचारिणि ।
शेषपारमिताप्राप्तजिनपुत्रनिषेविते ॥ ४ ॥

नमस्तुतारहुंकारपूरिताशादिगन्तरे ।
सप्तलोकक्रमाक्का[न्ते] अशेषकरुणा(णे)क्षणे ॥ ५ ॥

नमः शक्रानलब्रह्ममरुद्विश्वेश्वरार्चिते ।
भूतवेतालगन्धर्वगणयक्षपुरस्कृते ॥ ६ ॥

नमः स्त्रदिति फट्कार परजत्र(यन्त्र)प्रमर्दिनि ।
प्रत्यालीढपदन्यासे शिखी(खि)ज्वालाकुलोज्ज्वले ॥ ७ ॥

नमस्तुरे महाघोरे मालवीरविनाशिनि ।
भृकुटीकृतवक्त्राब्जसर्वशत्रुनिसुन्दनी(षूदिनि) ॥ ८ ॥

नमः स्त्रीरत्नमुद्राङ्कहृदयाङ्गुलिभूषिते ।
भूषिताशेषदिक्चक्रनिकरस्वकराकुले ॥ ९ ॥

नमः प्रमुदिताशेषमुक्ताक्षीरप्रसारिणि ।
हसत्प्रहसतुत्तारे मारलोलवशङ्करि ॥ १० ॥

नमः समन्तभूपालपत(ट)लाकर्षण(णे)क्षणे ।
चरभृकुटिहूँकारसर्वापदविमोचनी(चिनि) ॥ ११ ॥

नमः श्रीखण्डखण्डेन्दु[सु]मुक्ताभरण(णो)ज्ज्वले ।
अमिताभजिताभारभासुरे किरणोद्ध्रुवे(द्धुरे) ॥ १२ ॥

नमः कल्पान्तहुतभुग्ज्वालामालान्तरे(र)स्थिते ।
आलीढमुदि(द्रि)ताबद्धरिपुचक्रविनाशिनी(नि) ॥ १३ ॥

नमः करतरा(ला)घाट(त)चरणाहतभूतले ।
भृकुटीकृतहुँकारसप्तपातालभेदिनी(नि) ॥ १४ ॥

नमः शिवे शुभे शान्ते शान्तनिर्वाणगोचरे ।
स्वाहाप्रणवसंयुक्ते महापातकनाशनी(शिनि) ॥ १५ ॥

नमः प्रमुदिताबद्धरिगात्रप्रभेदिनि ।
दशाक्षरपदन्यासे विद्याहुंकारदीपिते ॥ १६ ॥

नम[स्तारे] तुरे पादघातहुंकारवीजिते ।
मेरुमंण्डलकैलाशभुवनंत्रयचारिणी(णि) ॥ १७ ॥

नमः सुरे स(श)राकारहरिणाङ्ककरे(र)स्थिते ।
हरिद्विरुक्तफट्कार(रे) अशेषविषनाशिणी(नि) ॥ १८ ॥

नमः सुरासुरगणयक्षकिन्नरसेविते ।
अबुद्धमुदिताभोगकरी(रि) दुःस्वप्ननाशिनी(नि) ॥ १९ ॥

नमश्चन्द्रार्कसम्पूर्णनयनद्युतिभास्वरे ।
तारांद्विरुक्ततुत्तारे विषमज्वल(र)नाशिनि ॥ २० ॥

नमः स्त्रीतत्त्वविन्यासे शिवशक्तिसमन्विते ।
ग्रहवेतार(ल)यक्षोष्मनाशिनि प्रवरे तुरे ॥ २१ ॥

मन्त्रमूलमिदं स्तोत्रं नमस्कारैकविंशतिः(ति) ।
यः पठेत्प्रातः(पठेत् प्रयतः)धीमान् देव्याभक्तिसमन्विते (तः)॥२२॥

सायं वा प्रातरुत्थाय स्मरेत् सर्वभयप्रदम् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वदुर्गतिनाशनम् ॥ २३ ॥

अभिषिक्तो भवेत् तूर्णं सप्तभिर्जिनकोटिभिः ।
मासमात्रेण चैवासौ सुखं बौद्धपदं व्रजेत् ॥ २४ ॥

विषं तस्य महाघोरं स्थावरं चाथ जङ्गमम् ।
स्मरणान्न पदं याति खादितं पि(पी)तमेव वा ॥ २५ ॥

ग्रहजो(जा)लविषार्तानां परस्त्रीविषनाशनम् ।
अन्येषां चैव सत्त्वानां द्विसप्तमभिर्वर्तितम् ॥ २६ ॥

पुत्रकामो लभेत् पुत्रं धनकामो लभेद्धनम् ।
सर्वकामानवाप्नोति न विघ्नैः प्रतिहन्यते ॥ २७ ॥

इति श्रीसम्यक्संबुद्धवैलो(रो)चनभाषितं भगवत्यार्यतारादेव्या नमस्कारैकविंशतिनामाष्टोत्तरशतकं बुद्धभाषितं परिसमाप्तम् ।

(आर्य)ताराष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ॐ नमः श्री आर्यतारायै ।

श्रीमत्पोतलके रम्ये नानाधातुविराजिते ।
नानाद्रुमलताकीर्णे नानापक्षिनिकूजिते ॥ १ ॥

नानानिर्झरझाङ्कारैर्नानामृगसमाकुले ।
नानाकुसुमजातीभिः समन्तादधिवासिते ॥ २ ॥

नानाहृद्यफलोपेतषट्पदोद्गीतनिःस्वनैः ।
किन्नरैर्मधुरोद्गीतैर्मत्तवारणसंकुलैः ॥ ३ ॥

सिद्धविद्याधरगणैर्गन्धर्वैश्च निनादिते ।
मुनिभिर्वीतरागैश्च सततं सुनिषेविते ॥ ४ ॥

बोधिसत्त्वगणैश्चान्यैर्दशभूमीश्वरैरपि ।
आर्यतारादिभिर्देवैर्विद्याराज्ञीसहस्रकैः ॥ ५ ॥

क्रोधराजगणैश्चान्यैर्हयग्रीवादिभिर्वृते ।
सर्वसत्त्वहिते युक्तो भगवानवलोकितः ॥ ६ ॥

व्याजहार ततः श्रीमान् पद्मगर्भासने स्थितः ।
महता तपसा युक्तो मैत्र्या च कृपयान्वितः ॥ ७ ॥

धर्मं दिदेश तस्यां च महत्यां देवपर्षदि ।
तत्रापविद्धमागम्य वज्रपाणिर्महाबलः ॥ ८ ॥

परया कृपया युक्तः पप्रच्छ चावलोकितम् ।
तस्करोरगसिंहोग्रगजव्याघ्रादिसंकुले ॥ ९ ॥

सीदन्त्यमी मुने सत्त्वा मग्नाः संसारसागरे ।
बद्धाः सांसारिकैः पाशै रागद्वेषतमोमयैः ॥ १० ॥

मुच्यन्ते येन सत्त्वास्ते तन्मे ब्रूहि महामुने ।
एवमुक्तो जगन्नाथः स श्रीमानवलोकितः ॥ ११ ॥

उवाच मधुरां वाणीं वज्रपाणिं प्रबोधिनीम् ।
शृणु गुह्यकराजेन्द्र अमिताभस्य तायणीः(णीम्) ॥ १२ ॥

प्रणिधानवशोत्पन्नां ममाज्ञां लोकमातरम् ।
महाकरुणयोपेतां जगदुद्धरणोद्धताम् ॥ १३ ॥

उदितादित्यसंकाशां पूर्णेन्दुवदनप्रभाम् ।
भाषयन्तीमिमां तारां सदेवासुरमानुषान् ॥ १४ ॥

कम्पयन्तीं च त्रीन् लोकान् त्रासयन्तीं यक्षराक्षसान् ।
नीलोत्पलकरां देवीं मा भैर्मा भैरिति ब्रुवन् ॥ १५ ॥

जगत्संरक्षणार्थायाहमुत्पादिता जिनैः ।
कान्तारे शस्त्रसंपाते नानाभयसमाकुले ॥ १६ ॥

स्मरणादेव नामानि सत्त्वान् रक्षाम्यहं सदा ।
तारयिष्याम्यहं सत्त्वान् नानाभयमहार्णवात् ॥ १७ ॥

तेन तारेति मां लोके गायन्ति मुनिपुंगवाः ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा ततः सादरसाध्वसः ॥ १८ ॥

ज्वलयत्यन्तरिक्षे तामिदं वचनमब्रवीत् ।
नामाष्टशतकं ब्रूहि यत्पुरा कीर्तितं जनैः ॥ १९ ॥

दशभूमीश्वरैर्नाथैर्बोधिसत्त्वैर्महर्द्धिकैः ।
सर्वपापहरं पुण्यं माङ्गल्यं कीर्तिवर्द्धनम् ॥ २० ॥

धनधान्यकरं चैव आरोग्यं पुष्टिवर्धनम् ।
आयुरारोग्यजनकं सर्वसत्त्वसुखावहम् ॥ २१ ॥

लक्ष्म्याः श्रियः स्थापकं च सर्वसत्त्वविवर्द्धनम् ।
मैत्रीमालम्ब्य सत्त्वानां तत्कीर्तय महामुने ॥ २२ ॥

एवमुक्ते जगन्नाथः प्रहसन्नवलोकितः ।
व्यवलोक्य दिशः सर्वा मैत्रीस्फरणया दृशा ॥ २३ ॥

दक्षिणं करमुद्धृत्य पुण्यलक्षणमण्डितम् ।
तमुवाच महाप्राज्ञः साधु साधु महातप ॥ २४ ॥

नामानि शृणु महाभाग सर्वसत्त्वैकवत्सरे।
यानि संकीर्त्य मनुजा सम्पदा स्युर्धनेश्वराः॥ २५॥

सर्वव्याधिविनिर्मुक्ताः सर्वैश्वर्यगुणान्विताः।
अकालमृत्युनिर्दग्धाश्च्युता यान्ति सुखावतीम्॥ २६॥

तान्यहं सम्प्रवक्ष्यामि देवसंघाः शृणुत मे।
अनुमोदध्वमेतद्वा भविष्यध्वं सुनिर्वृताः॥ २७॥

ॐ लोचने सुलोचने तारे तारोद्भवे सर्वसत्त्वानुकम्पिनि सर्वसत्त्वतारिणि सहस्रभुजे सहस्रनेत्रे। ॐ नमो भगवते अवलोकय अवलोकय मां सर्वसत्त्वांश्च हुं हुँ फट् फट् स्वाहा। ॐ शुद्धे विशुद्धे सुगतात्मजे मैत्रीहृदये निर्मले श्यामे श्यामरूपि महाप्राज्ञे प्रबलवरभूषिते। अपराजिता महारौद्री विश्वरूपी महाबला। ॐ सुश्रिये॥ २८॥

ॐ कल्याणी महातेजा लोकधात्री महायशाः।
सरस्वती विशालाक्षी प्रज्ञा श्रीर्बुद्धिवर्धिनी॥ २९॥

धृतिदा पुष्टिदा स्वाहा ॐकारा कामरूपिणी।
सर्वसत्त्वहितोद्युक्ता संग्रामोत्तारिणी जया॥ ३०॥

प्रज्ञापारमिता देवी आर्यतारा मनोरमा।
दुन्दुभी शङ्खिनी पूर्णा विद्याराज्ञी प्रियम्वदा॥ ३१॥

चन्द्रानना महागौरी अजिता पीतवाससा।
महामाया महाश्वेता महाबलपराक्रमा॥ ३२॥

महारौद्री महाचण्डी दुष्टसत्त्वनिषूदिनी।
प्रशान्ता शान्तरूपा च विजया ज्वलनप्रभा॥ ३३॥

विद्युन्मारी ध्वजी खड्गी चक्री चापोद्यतायुधा।
जम्भनो स्तम्भनी काली कालरात्रिर्निशाचरी॥ ३४॥

रक्षणी मोहनी शान्ता कान्तारी द्रावणी शुभा।
ब्रह्माणी वेदमाता च गुह्या च गुह्यवासिनी॥ ३५॥

माङ्गल्या शाङ्करी सौम्या जातवेदा मनोजवा।
कपालिनी महावेगा सन्ध्या सत्याऽपराजिता॥ ३६॥

सार्थवाहकृपादृष्टिर्नष्टमार्गप्रदर्शिनी ।
वरदा शासनी शास्त्री सुरूपाऽमृतविक्रमा ॥ ३७ ॥

शर्वरी योगिनी सिद्धा चण्डारी(ली)अमृता ध्रुवा ।
धन्या पुण्या महाभागा शुभगा प्रियदर्शना ॥ ३८ ॥

कृतान्तत्रासिनी भीमा उग्रा उग्रमहातपा ।
जगद्धिते सदोद्युक्ता शरण्या भक्तवत्सला ॥ ३९ ॥

वागीश्वरी शिवा सूक्ष्मा नित्या सर्वक्रमानुगा ।
सर्वार्थसाधनी भद्रा गोप्त्री धात्री धनप्रदा ॥ ४० ॥

अभया गौतमी पुण्या श्रीमल्लोकेश्वरात्मजा ॥ इति ॥(१०८)
तारानामगुणानन्ता सर्वाशापरिपूरका ॥ ४१ ॥

ॐ तारे कृपावरे श्रीक्लेशश्रवणीये स्वाहा ।
नाम्नामष्टोत्तरशतं ह्येतद्यत्कीर्तितं मया ।
रहस्यभूतं गुह्यं च देवानामपि दुर्लभम् ॥ ४२ ॥

सौभाग्यभोगकरणं सर्वकिल्विषनाशनम् ।
सर्वव्याधिप्रशमनं सर्वसत्त्वसुखावहम् ॥ ४३ ॥

त्रिकालं यः पठेद्धीमान् शुचिस्थाने समाहितः ।
सोऽचिरेणैव कालेन राज्यश्रियमवाप्नुयात् ॥ ४४ ॥

दुःखी स्यात्तु सुखी नित्यं दरिद्रो धनवान् भवेत् ।
पुत्रो भवेन्महाप्राज्ञो मेधावी च न संशयः ॥ ४५ ॥

बन्धनान्मुच्यते बद्धो व्यवहारे जयो भवेत् ।
शत्रवो मित्रतां यान्ति शृङ्गिणः शुनका अपि ॥ ४६ ॥

संग्रामे संकटे दुर्गे नानाभयसमुच्छ्रिते ।
स्मरणादेव नामानि सर्वान्भयानपोहति ॥ ४७ ॥

नाकालमृत्युर्भवति प्राप्नोति विपुलाशयम् ।
मानुष्ये सफलं जन्म तस्यैकस्य महात्मनः ॥ ४८ ॥

यश्चेदं प्रातरुत्थाय मानवः कीर्तयिष्यति ।
स दीर्घकालमायुष्मान् श्रियं च लभते नरः ॥ ४९ ॥

देवा नागास्तथा यक्षा गन्धर्वा कठपूतनाः।
पिशाचा राक्षसा भूता मातरो रौद्रतेजसाः॥ ५०॥

डाकिन्यस्तारकाः प्रेताः स्कन्दोमाद्या महाग्रहाः।
छायापस्मारकाश्चैव खेटका खार्दकादयः॥ ५१॥

वेतालाश्चिचका प्रेष्या ये चान्ये दुष्टचेतसः।
छायामपि न लङ्घन्ति किं पुनस्तस्य विग्रहम्॥ ५२॥

दुष्टसत्त्वा न बाधन्ते व्याधयो नाक्रमन्ति च।
सर्वैश्वर्यगुणैर्युक्तो वंशवृद्धिश्च जायते॥ ५३॥

जातिस्मरो भवेद् धीमान् कुलीनः प्रियदर्शनः।
प्रीतिमांश्च महावाग्मी सर्वशास्त्रविशारदः॥ ५४॥

कल्याणमित्रसंसेवी बोधिचित्तविभूषितः।
सदाऽविरहितो बुद्धैर्यत्र यत्रोपपद्यते॥ ५५॥

श्रीआर्यताराभट्टारिकाया नामाष्टोत्तरशतं बुद्धपरिभाषितं परिसमाप्तम्।

(आर्य) तारास्तुतिः

आचार्य चन्द्रदासकृता

नमस्तारायै

सुखदचक्रचारुचूडामणिरुचिरमरीचिसंचय-
प्रचुरशिखाप्रचारपरिचुम्बितचर्चितचरणचन्द्रके ।
जगति चराचरेऽपि साचीकृतचकितकृपालुलोचने
स्तुतिवचनोपचारमुचिताचरतिं रचयामि देवि ते ॥ १ ॥

नखरकठोरकोटिकुट्टितकरिकटतटपाटनोत्कटाः
प्रविकटरुधिरपटलपटपालिता अटवीविलुण्ठकाः ।
विकटसटाट्टहासघटितावटतटघटनोद्भटास्त्वज्जुषि
झटिति यान्ति सटिनः कुण्ठादपि कुण्ठशक्तिताम् ॥ २ ॥

मलिनमहाकपोलतलविगलितमदजलमलनविह्वलाः
स्खलदलिजालबहलकोलाहललसितविलासलासिनः ।
विचलितकर्णतालपवनाहतललितविलेपधूलयः
पथि न गजाश्चलन्ति कुलशैलतुलास्तव ला(ना)मलालिताः ॥ ३ ॥

मारुतघातजातरभसोच्छलदनलशिखाकदम्बक-
प्रतिहतपुरपुरन्ध्रिहाहारवत्वरितदिगन्तभैरवः ।
उद्धतधूम्रधूमधूलिधुतबद्धघनान्धकारकं
त्वन्नतिनीतिगतिरेति शमं बहुशो हुताशनः ॥ ४ ॥

चलितलतावितानकुटिलोद्गमदुर्गमगहनवर्तिनः
सपदि पुरो नरस्य तारेति मनागपि नामधारिणः ।
स्फीतफणौघघोरफूत्कारपरिस्फुरतानलस्फुट-
स्फुरदुरुविस्फुलिङ्गविस्फारिणि फणिनि विषं विनश्यति ॥ ५ ॥

क्षणकृतकोपकम्पकरकर्षितखरकरवालनिर्मल-
व्यतिकरकरकरवालविकरालमहाबलभुजार्गलः ।
प्रस्थितपथिकनिकटकटविघटनपटुरतिनिष्ठुराशयो
भगवति भक्तिवन्तमुपसर्पति तव न वनेऽपि तस्करः ॥ ६ ॥

योऽपि नरेन्द्रवीरहुङ्कारकचग्रहनिग्रहो
ग्रहग्रस्त इव रज्जुहिञ्जीरवजर्जरिताङ्गपञ्जरः ।
प्रतिपदखनखनायमानमुखरीकृतखरखरशृङ्खलावलि-
स्त्वच्चरणारविन्दमभिवन्द्य स नन्दति मुक्तबन्धनः ॥ ७ ॥

कलकलकलिललोलकल्लोलजलोल्ललत्कालिकानिला-
स्फालितविपुलबहलवेलाकुलकूलतमालपल्लवात् ।
सरभसमकरनिकरखरनखरसुदुस्तरतोऽपि सागरात्
तारिणि तरलतारतरतारकमातुरमेत्य रक्षसि ॥ ८ ॥

सूक्ष्मविरावसारसरघोत्करनिर्भरघोरघर्घरघ्राणा
घृणाङ्घ्रिपाण्यस्रविस्रीकृतक्वथितशरीरपञ्जरा ।
यत्क्षणमहाप्रसादावेशत्वत्प्रणता तारिणि कामरूपिणा
तत्क्षणलब्धलोलकिरणमणिकुण्डलमण्डितगण्डमण्डला ॥ ९ ॥

यूकविकीर्णशीर्णपटकर्पटकटितटवेष्टनोद्भटः
संकटपेटपूरमात्रार्जनपरपुरपिण्डतर्कणः ।
यदि तव नामकं हृदि करोति हि राक्षसंकक:
प्रौढवधूविधूतचामीकरखचितविचित्रचामरम् ॥ १० ॥

श्रीचन्द्रदासविरचिताऽऽर्यतारास्तुतिः समाप्ता ।

●

(आर्य)तारास्रग्धरास्तोत्रम्

आचार्य सर्वज्ञमित्रविरचितम्

नमस्तारायै

बालार्कालोकताम्रप्रवरसुरशिरश्चारुचूडामणिश्री-
सम्पत्संपर्करागानतिचिररचितालक्तकव्यक्तभक्ती ।
भक्त्या पादौ तवार्ये करपुटमुकुटाटोपभुग्नोत्तमाङ्ग-
स्तारिण्यापच्छरण्ये नवनुतिकुसुमस्रग्भिरभ्यर्चयामि ॥ १ ॥

दुर्लङ्घ्ये दुःखवह्नौ विनिपतिततनुर्दुर्भगः कांदिशीकः
किं किं मूढः करोमीत्यसकृदपि कृतारम्भवैयर्थ्यखिन्नः ।
श्रुत्वा भूयः परेभ्यः क्षतनयन इव व्योम्नि चन्द्रार्कलक्ष्मी-
मालोकाशानिबद्धः परगतिगमनस्त्वां श्रये पापहन्त्रीम् ॥ २॥

सर्वस्मिन् सत्त्वमार्गे ननु तव करुणा निर्विशेषं प्रवृत्ता
तन्मध्ये तद्ग्रहेण ग्रहणमुपगतं मादृशस्याप्यवश्यम् ।
सामर्थ्यं च द्वितीयं सकलजगदघध्वान्ततिग्मांशुबिम्बं
दुःख्येवाहं तथापि प्रतपति धिगहो दुष्कृतं दुर्विदग्धम् ॥ ३ ॥

धिग्धिङ् मां मन्दभाग्यं दिवसकररुचाप्यप्रणूतान्धकारं
तृष्यन्तं कूलकच्छे हिमशकलशिलाशीतळे हैमवत्याः ।
रत्नद्वीपप्रतोल्या विपुलमणिगुहागेहगर्भे दरिद्रं
नाथीकृत्याप्यनाथं भगवति भवतीं सर्वलोकैकधात्रीम् ॥ ४ ॥

मातापि स्तन्यहेतोर्विरुवति तनये खेदमायाति पुत्रे
क्रोधं धत्ते पितापि प्रतिदिवसमसत्प्रार्थनासु प्रयुक्तः ।
त्वं तु त्रैलोक्यवाञ्छाविपुलफलमहाकल्पवृक्षाग्रवल्ली
सर्वेभ्योऽभ्यर्थितार्थान् विसृजसि न च ते विक्रिया जातु काचित् ॥५॥

यो यः क्लेशौघवह्निज्वलिततनुरहं तारिणी तस्य तस्ये-
त्यात्मोपज्ञं प्रतिज्ञां कुरु मयि सफलां दुःखपातालमग्ने ।
वर्धन्ते यावदेते परुषपरिभवाः प्राणिनां दुखवेगाः
सम्यक्संबुद्धयाने प्रणिधिधृतधियां तावदेवानुकम्पा ॥ ६ ॥

इत्युच्चैरूर्ध्ववाहौ नदति नुतिपदव्याजमाक्रन्दनादं
नार्हत्यन्योऽप्युपेक्षां जननि जनयितुं किं पुनर्यादृशी त्वम् ।
त्वत्तः पश्यन् परेषामभिमतविभवप्रार्थना: प्राप्तकामा
दह्ये सह्येन भूयस्तरमरतिभुवा सन्तातान्तर्ज्वरेण ॥ ७ ॥

पापी यद्यस्मि कस्मात्त्वयि मम महती बर्द्धने भक्तिरेषा
श्रुत्या स्मृत्या च नाम्नाप्यपहरसि हठात्पापमेका त्वमेव ।
त्यक्तव्यापारभारा तदसि मयि कथं कथ्यतां तथ्यकथ्ये
पथ्यं ग्लाने मरिष्यत्यपि विपुलकृपः किं भिषग् रोरुधीति ॥ ८ ॥

मायामात्सर्यमानप्रभृतिभिरधमैस्तुल्यकालक्रमाच्च
स्वैर्दोषैर्वाह्यमानो मठकरभ इवानेकसाधारणांशः ।
युष्मत्पादाब्जपूजां न क्षणमपि लभे यत्तदर्थे विशेषा-
देषा कार्पण्यदीनाक्षरपदरचना स्यान्ममावन्ध्यकामा ॥ ९ ॥

कल्पान्तोद्भ्रान्तवातभ्रमितजलचलल्लोलकल्लोलहेला-
संक्षोभोत्क्षिप्तवेलातटविकटचटत्स्फोटमोट्टाट्टहासात् ।
मज्जद्भिर्भिन्ननौकैः सकरुणरुदिताक्रन्दनिष्पन्दमन्दैः
स्वच्छन्दं देवि सद्यस्त्वदभिनुतिपरैस्तीरमुत्तीर्यतेऽब्धेः ॥ १० ॥

धूमभ्रान्ताभ्रगर्भोद्भवगगनगृहोत्सङ्गरिङ्गत्स्फुलिङ्ग-
स्फूर्जज्ज्वालाकरालज्वलनजवविशद्वेश्मविश्रान्तशय्याः ।
त्वय्याबद्धप्रणामाञ्जलिपुटमुकुटा गद्गदोद्गीतयाच्ञाः
प्रोद्यद्विद्युद्विलासोज्ज्वलजलदजवैराध्रियन्ते क्षणेन ॥ ११ ॥

दानाम्भःपूर्यमाणोभयकटकटकालम्बिरोलम्बमाला-
हूङ्काराहूयमानप्रतिगजजनितद्वेषवह्नेर्द्विपस्य ।
दन्तान्तोत्तुङ्गदोलातलतुलिततनुस्त्वामनुस्मृत्य मृत्युं
प्रत्याचष्टे प्रहृष्टः पृथुशिखरशिरःकोटिकोट्टोपविष्टः ॥ १२ ॥

प्रौढप्रासप्रहारप्रहतनरशिरःशूलवल्ल्युत्सवायां
शून्याटव्यां कराग्रग्रहविलसदसिस्फेटकस्फीतदर्पान् ।
दस्यून् दास्ये नियुङ्क्ते सभ्रूकुटिकुटिलभ्रूकटाक्षेक्षिताक्षां-
श्चिन्तालेखन्यखिन्नस्फुटलिखितपदं नामधाम श्रियां ते ॥ १३ ॥

वज्राक्रूरप्रहारप्रखरनखमुखोत्खातमत्तेभकुम्भ-
श्च्योतत्सान्द्रास्त्रधौतस्फुटविकटसटासङ्कटस्कन्धसन्धिः ।
क्रुध्यन्नापित्सुरारादुपरि मृगरिपुस्तीक्ष्णदंष्ट्रोत्कटास्य-
स्त्रस्यन्नावृत्य याति त्वदुचितरचितस्तोत्रदिग्धार्थवाचः ॥ १४ ॥

धूमावर्तान्धकाराकृतिविकृतफणिस्फारफूत्कारपूर-
व्यापारव्याप्तवक्त्रस्फुरदुरुरसनारज्जुकोनाशपाशैः ।
पापात्सम्भूय भूयस्तवगुणगणनातत्परस्त्वत्परात्मा
धत्ते मत्तालिमालावलयकुवलयस्रग्विभूषां विभूतिम् ॥ १५ ॥

भर्तृभ्रूभेदभीतोद्भटकटकभटाकृष्टदुःश्लिष्टकेश-
श्चश्वद्वाचाटचेटोत्कटरटितकटुग्रन्थिपाशोपगूढः ।
क्षुत्तृट्क्षामोपकण्ठस्त्यजति स सपदि व्यापदं तां दुरन्तां
यो यायादार्यताराचरणशरणतां स्निग्धबन्धूज्झितोऽपि ॥ १६ ॥

मायानिर्माणकर्मक्रमकृतविकृतानेकनेपथ्यमिथ्या-
रूपारम्भानुरूपप्रहरणकिरणाडम्बरोड्डामराणि ।
त्वत्तन्त्रोद्धार्यमन्त्रस्मृतिहृतदुरितस्यावहन्त्यप्रधृष्यां
प्रेतप्रोतान्त्रतन्त्रीनिचयविरचितस्रञ्जि रक्षांसि रक्षाम् ॥ १७ ॥

गर्जज्जीमूतमूर्तित्रिमदमदनदीबद्धधारान्धकारे
विद्युद्द्योतायमानप्रहरणकिरणे निष्पतद्बाणवर्षे ।
रुद्धः सङ्ग्रामकाले प्रबलभुजबलैर्विद्विषद्भिर्द्विषद्भि-
स्त्वद्दत्तोत्साहपुष्टिः प्रसभमरिमहीमेकवीरः पिनष्टि ॥ १८ ॥

पापाचारानुबन्धोद्धृतगदविगलत्पूतिपूयास्रविस्र-
त्वङ्मांसासक्तनाडीमुखकुहरगलज्जन्तुजग्धक्षताङ्गाः ।
युष्मत्पादोपसेवागदवरगुटिकाभ्यासभक्तिप्रसक्ता
जायन्ते जातरूपप्रतिनिधिवपुषः पुण्डरीकायताक्षाः ॥ १९ ॥

विश्रान्तं श्रौतपात्रे गुरुभिरुपहृतं यस्य नाम्नायभैक्ष्यं
विद्वद्गोष्ठीषु यश्च श्रुतधनविरहान्मूकतामभ्युपेतः ।
सर्वालङ्कारभूषाविभवसमुदितं प्राप्य वागीश्वरत्वं
सोऽपि त्वद्भक्तिशक्त्या हरति नृपसभे वादिसिंहासनानि ॥ २० ॥

भूशय्याधूलिधूम्रः स्फुटितकटितटीकर्पटोद्द्योतिताङ्गो
यूकायूंषि प्रपिषन् परपुटपुरतः कर्परे तर्पणार्थी ।
त्वामाराध्याध्यवस्यन् वरयुवतिवहच्चामरस्मेरचार्वी-
मुर्वीं धत्ते मदान्धद्विपदशनघनामुद्धृतैकातपत्राम् ॥ २१ ॥

सेवाकर्मान्तशिल्पप्रणयविनिमयोपायपर्यायखिन्नाः
प्राग्जन्मोपात्तपुण्योपचितशुभफलं वित्तमप्राप्नुवन्तः ।
दैवातिक्रामणीं त्वां कृपणजनजनन्यर्थमभ्यर्थ्य भूमे-
र्भूयो निर्वान्तिचामीकरनिकरनिधीन् निर्धनाः प्राप्नुवन्ति ॥ २२ ॥

वृत्तिच्छेदे विलक्षः क्षतनिवसनया भार्यया भर्त्स्यमानो
दूरादात्मम्भरित्वात् स्वजनसुतसुहृद्बन्धुभिर्वर्ज्यमानः ।
त्वय्यावेद्य स्वदुःखं तुरगखुरमुखोत्खातसीम्नां गृहाणा-
मीष्टे स्वान्तःपुरस्त्रीवलयझणझणाजातनिद्राप्रबोधः ॥ २३ ॥

चङ्क्रद्दिक्चक्रचुम्बिस्फुरदुरुकिरणा लक्षणालङ्कृता स्त्री-
षट्दन्तो दन्तिमुख्यः शिखिगलकरुचिश्यामरोमा वराश्वः ।
भास्वद्भास्वन्मयूखो मणिरमलगुणः कोषभृत् स्वर्णकोषः
सेनानीर्वीरसैन्यो भवति भगवति त्वत्प्रसादांशलेशात् ॥ २४ ॥

स्वच्छन्दं चन्दनाम्भःसुरभिमणिशिलादत्तसङ्केतकान्तः
कान्ताक्रीडानुरागादभिनवरचिताऽऽतिथ्यतथ्योपचारः ।
त्वद्विद्यालब्धसिद्धिर्मलयमधुवनं याति विद्याधरेन्द्रः
खड्गांशुश्यामपीनोन्नतभुजपरिघप्रोल्लसत्पारिहार्यः ॥ २५ ॥

हाराक्रान्तस्तनान्ताः श्रवणकुवलयस्पर्द्धमानाऽऽयताक्ष्यो
मन्दारोदारवेणीतरुणपरिमलामोदमाद्यद्द्विरेफाः ।
काञ्चीनादानुबन्धोद्धततररचरणोदारमञ्जीरतूर्या-
स्त्वन्नाथान् प्रार्थयन्ते स्मरमदमुदिताः सादरा देवकन्याः ॥ २६ ॥

रत्नच्छन्नान्तवापीकनककमलिनीवक्त्रकिञ्जल्कमाला-
मुन्मज्जत्पारिजातद्रुममधुपवधूधूतधूलीवितानाम् ।
वीणावेणुप्रवीणामरपुररमणीदत्तमाधुर्यतूर्यां
कृत्वा युष्मत्सपर्यामनुभवति चिरं नन्दनोद्यानयात्राम् ॥ २७ ॥

कर्पूरैलालवङ्गत्वगगुरुनलदक्षोदगन्धोदकायां
कान्ताकन्दर्पदर्पोल्कटकुचकुहरावर्तविश्रान्तवीच्याम् ।
मन्दाकिन्याममन्दच्छटसलिलसरित्क्रीडया सुन्दरीभिः
क्रीडन्ति त्वद्गतान्तःकरणपरिणतोत्तप्तपुण्यप्रभावाः ॥ २८ ॥

गीर्वाणग्रामणीभिर्विनयभरनमन्मौलिभिर्वन्दिताज्ञः
स्वर्गोत्सङ्गेऽधिरूढः सुरकरिणि झणद्भूषणोद्भासिताङ्गे ।
शच्या दोर्दामदोलाविरलवलयितोद्दामरोमाञ्चमूर्तिः
पूतस्त्वद्दृष्टिपातैरवति सुरमहीं हीरभिन्नप्रकोष्ठः ॥ २९ ॥

चूडारत्नावतंसासनगतसुगतव्योमलक्ष्मीवितानं
प्रोद्यद्बालार्ककोटीपटुतरकिरणापूर्यमाणत्रिलोकम् ।
प्रौढालीढैकपादक्रमभरविनमद्ब्रह्मरुद्रेन्द्रविष्णुं
त्वद्रूपं भाव्यमानं भवति भवभयच्छित्त्यै जन्मभाजाम् ॥ ३० ॥

पश्यन्त्येके सकोपं प्रहरणकिरणोद्गीर्णदोर्दण्डखण्ड-
व्याप्तव्योमान्तरालं वलयफणिफणादारुणाहार्यचर्यम् ।
द्विष्टव्यत्रासिहासोड्डमरडमरुकोड्डामरास्फालवेला-
वेतालोत्तालतालप्रमदमदमहाकेलिकोलाहलोग्रम् ॥ ३१ ॥

केचित्त्वेकैकरोमोद्गमगतगगनाभोगभूभूतलस्थ-
स्वस्थब्रह्मेन्द्ररुद्रप्रभृतिनरमरुत्सिद्धगन्धर्वनागम् ।
दिक्चक्राक्रामिधामस्थितसुगतशतानान्तनिर्माणचित्तं
चित्रं त्रैलोक्यवन्द्यं स्थिरचररचिताशेषभावस्वभावम् ॥ ३२ ॥

लाक्षासिन्दूररागारुणतरकिरणादित्यलौहित्यमेके
श्रीमत्सान्द्रेन्द्रनीलोपलदलितदलक्षोदनीलं तथान्ये ।
क्षीराब्धिक्षुब्धदुग्धाधिकतरधवलं काञ्चनाभं च केचित्
त्वद्रूपं विश्वरूपं स्फटिकवदुपधायुक्तिभेदाद् विभिन्नम् ॥ ३३ ॥

सार्वज्ञज्ञानदीपप्रकटितसकलज्ञेयतत्त्वैकसाक्षी
साक्षाद्वेत्ति त्वदीयां गुणगणगणनां सर्ववित् तत्सुतो वा ।
यस्तु व्यादाय वक्त्रं वलिभुजरटित्तं मादृशो रारटीति
व्यापत् सा तीव्रदुःखज्वरजनितरुजश्चेतसो हास्यहेतुः ॥ ३४ ॥

यन्मे विज्ञाप्यमानं प्रथमतरमदस्त्वं विशेषेण वेत्त्री
तद्व्याहारातिरेकश्रमविधिरबुधस्वान्तसन्तोषहेतुः ।
किन्तु स्निग्धस्य बन्धोर्विषमिव पुरतो दुःखमुद्गीर्य वाचां
ज्ञातार्थस्यापि दुःखी हृदयलघुतया स्वस्थतां विन्दतीव ॥ ३५ ॥

कल्याणानन्दसिन्धुप्रकटशशिकले शीतलां देहि दृष्टिं
पुष्टिं ज्ञानोपदेशैः कुरु घनकरुणे ध्वंसय ध्वान्तमन्तः ।
त्वत्स्तोत्राम्भःपवित्रीकृतमनसि मयि श्रेयसः स्थानमेकं
दृष्टं यस्मादमोघं जगति तवगुणस्तोत्रमात्रं प्रजानाम् ॥ ३६ ॥

संस्तुत्य त्वद्गुणौघावयवमनियतेयत्तमाप्तं मया यत्
पुण्यं पुण्यार्द्रवाञ्छाफलमधुररसास्वादमामुक्तिभोग्यम् ।
लोकस्तेनार्यलोकेश्वरचरणतलस्वस्तिकस्वस्तिचिह्ना-
मह्नायायं प्रयायात् सुगतसुतमहीं तां सुखावत्युपाख्याम् ॥ ३७ ॥

श्री सर्वज्ञमित्रविरचितमार्यतारास्रग्धरास्तोत्रं समाप्तम् ।

दशभूमीश्वरो नाम
महायानसूत्ररत्नराजस्तोत्रम्

शमदमनिरतानां शान्तदान्ताशयानां
खगपथसदृशानामन्तरीक्षसमानाम् ।
खिलमलविधुतानां मार्गज्ञानस्थितानां
शृणुत वरविशेषं बोधिसत्त्वांश्च श्रेष्ठान् ॥ १ ॥

कुशलशतसहस्रं संचितं कल्पकोट्या
सुबुद्धशतसहस्रं पूजयित्वा गृहीतम् ।
प्रत्येकजिनवरान्वै पूजयित्वा त्वनन्तान्
सकलजगद्धिताय जायते बोधिचित्तम् ॥ २ ॥

उत तपतपितानां क्षान्तिपारंगतानां
हृतश्रितचरितानां पुण्यज्ञानोद्गतानाम् ।
विपुलगतिमतीनां पुण्यज्ञानाशयानां
दशबलसमतुल्यं जायते बोधिचित्तम् ॥ ३ ॥

प्रमुदितसुमतीनां दानधर्मे रतानां
सकलजगद्धितार्थं नित्यमेवोद्यतानाम् ।
जिनगुणनिरतानां सत्त्वरक्षाव्रतानां
त्रिभुवनहितकर्तृ जायते बोधिचित्तम् ॥ ४ ॥

अकुशलविरतानां शुद्धमार्गे स्थितानां
व्रतनियमरतानां शान्तसौम्येन्द्रियाणाम् ।
जिनशरणगतानां बोधिचर्याशयानां
त्रिभुवनहितसाध्यं जायते बोधिचित्तम् ॥ ५ ॥

अनुगतकुशलानां क्षान्तिस्वारस्यभाजां
विदितगुणरसानां त्यक्तमानोत्सवानाम् ।
निहितशुभमतीनां दानसौम्याशयानां
सकलहितविधानं जायते बोधिचित्तम् ॥ ६ ॥

प्रचलति शुभकार्ये धोरवीर्याः सहाया
निखिलजनहितार्थं प्रोद्यते मानसिंहः।
अविरतगुणसाध्या निर्जितक्लेशसंघा
झटिति मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ ७॥

सुसमवहितचित्ता ध्वस्तमोहान्धकारा
विगलितमदमाना त्यक्तसंक्लिष्टमार्गाः।
समसुखनिरता ये त्यक्तसंसारसंगा
झटिति मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ ८॥

विमलखसमचित्ता ज्ञानविज्ञानविज्ञा
निहतनमुचिमारा वान्तक्लेशाभिमानाः।
जिनपदशरणस्था लब्धतत्त्वार्थकाये
सपदि मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ ९॥

त्रिभुवनशिवसाध्योपायविज्ञानधीराः
करिबलपरिहारोपायविदृद्धिमन्तः ।
सुगतगुणसमीहा ये च पुण्यानुरागा
सपदि मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ १०॥

त्रिभुवनहितकामा बोधिसंभारपूर्त्यै
प्रणिहितमनसा ये दुष्करेऽपि चरन्ति।
अविरतशुभकर्म प्रोद्यतां बोधिसत्त्वाः
सपदि मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ ११॥

दशबलगुणकामा बोधिचर्यानुरक्ता
विजितकरिबलौघास्त्यक्तमानानुषङ्गाः ।
अनुगतशुभमार्गा लब्धधर्मार्थकामा
झटिति मनसि तेषां जायते बोधिचित्तम् ॥ १२॥

इति गणितगुणांशा बोधिचर्याश्चरन्तु
जिनपदप्रणिधाना सत्समृद्धिं लभन्तु।
त्रिभुवनपरिशुद्धा बोधिचित्तं लभन्तु
त्रिशरणपरिशुद्धा बोधिसत्त्वा भवन्तु ॥ १३॥

दशपारमिताः पूर्य दशभूमीश्वरो भवेत् ।
भूयोऽपि कथ्यते ह्येतच्छृणुतैवं समासतः ॥ १४ ॥

बोधिचित्तं यदासाद्य संप्रदानं करोति यः ।
तदा प्रमुदितां प्राप्तो जम्बूद्वीपेश्वरो भवेत् ॥ १५ ॥

तत्रस्थः पालयेत् सत्त्वान् यथेच्छप्रतिपादनैः ।
स्वयं दाने प्रतिष्ठित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ॥ १६ ॥

सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य संपूर्णदानपारगः ।
एतत्कर्मानुभावेन संवरं समुपाचरेत् ॥ १७ ॥

सम्यच्छीलं समाधाय संवरं कुशली भवेत् ।
ततः स विमलां प्राप्तश्चातुर्द्वीपेश्वरो भवेत् ॥ १८ ॥

तत्रस्थः पालयेत् सत्त्वानकुशलं निवारयेत् ।
स्वयं शीले प्रतिष्ठित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ॥ १९ ॥

सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य सम्पूर्णकुशली भवेत् ।
एतद्धर्मविपाकेन क्षान्तिव्रतमुपाश्रयेत् ॥ २० ॥

सम्यक् क्षान्तिव्रतं धृत्वा क्षान्तिभृत् कुशली भवेत् ।
ततः प्राभाकरीं प्राप्तस्त्रयस्त्रिंशाधिपो भवेत् ॥ २१ ॥

तत्रस्थः पालयेत् सत्त्वान् क्लेशमार्गनिवारणैः ।
स्वयं क्षान्तिव्रते स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ॥ २२ ॥

सत्त्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य शान्तिपारंगतो भवेत् ।
एतत्पुण्यविपाकेन वीर्यबलमुपाश्रयेत् ॥ २३ ॥

सम्यग् वीर्यं समाधाय वीर्यभृत्कुशली भवेत् ।
ततश्चार्चिष्मतीं प्राप्य सुधामाधिपतिर्भवेत् ॥ २४ ॥

तत्रस्थः पालयन् सर्वान् कुदृष्टीः संनिवारयेत् ।
सम्यग्दृष्टौ प्रतिष्ठाप्य बोधयित्वा प्रयत्नतः ॥ २५ ॥

स्वयं ध्यानव्रते स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य ध्यानपारंगतो भवेत् ॥ २६ ॥

एतत्पुण्यविपाकेन ध्यानपारं समारभेत् ।
सर्वक्लेशान् विनिर्जित्य समाधिसुस्थितो भवेत् ॥ २७ ॥

सम्यग्ध्यानं समाधाय समाधिकुशली भवेत् ।
ततः सुदुर्जयां प्राप्तः स तुषिताधिपो भवेत् ॥ २८ ॥

तत्रस्थः पालयेत्सत्त्वांस्तीर्थ्यमार्गनिवारणैः ।
सत्त्वधर्मं प्रतिष्ठाप्य बोधयित्वा प्रयत्नतः ॥ २९ ॥

स्वयं ध्यानव्रते स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य ध्यानपारंगतो भवेत् ॥ ३० ॥

एतत्पुण्यविपाकेन प्रज्ञाव्रतमुपाश्रयेत् ।
सर्वान्मारान् विनिर्जित्य प्रज्ञाभिज्ञासमृद्धिमान् ॥ ३१ ॥

सम्यक् प्रज्ञां समाधाय स्वाभिज्ञाकुशली भवेत् ।
ततश्चाभिमुखीं प्राप्तः सुनिर्मिताधिपो भवेत् ॥ ३२ ॥

तत्रस्थः पालयेत् सत्त्वानभिमाननिवारणैः ।
शून्यतां सुप्रतिष्ठाप्य बोधयित्वा प्रयत्नतः ॥ ३३ ॥

स्वयं प्रज्ञाव्रते स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य प्रज्ञापारंगतो भवेत् ॥ ३४ ॥

एतत्पुण्यविपाकैश्च समुपायव्रतं चरेत् ।
सर्वंदुष्टान् विनिर्जित्य सद्धर्मकुशली सुधीः ॥ ३५ ॥

समुपायविधानेन सत्त्वान् बोधौ नियोजयेत् ।
ततो दूरङ्गमां प्राप्तो वशवर्तीश्वरो भवेत् ॥ ३६ ॥

तत्रस्थः पालयेत्सत्त्वानभिसमयबोधनैः ।
बोधिसत्त्वनियामेषु प्रतिष्ठाप्य प्रबोधयेत् ॥ ३७ ॥

तत्रोपाये स्वयं स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बौधौ प्रतिष्ठाप्य उपायपारगो भवेत् ॥ ३८ ॥

एतत्पुण्यानुभावश्च सुप्रणिधीनुपाश्रयेत् ।
मिथ्यादृष्टिं विनिर्जित्य सम्यग्दृष्टिः कृतो बुधैः ॥ ३९ ॥

सुप्रतिष्ठितचित्तेन सम्यग्बोधौ प्रतिष्ठितः ।
ततश्चाप्यचलां प्राप्तो बुद्ध्या साहस्रिकाधिपः ॥ ४० ॥

तत्रस्थः पालयेत्सत्त्वान् त्रिपानं संपिबेत् शनैः ।
लोकधातौ परिज्ञाने प्रतिष्ठाप्य प्रबोधयेत् ॥ ४१ ॥

सुप्रणिधौ स्वयं स्थित्वा परांश्चापि नियोजयेन् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य प्राणिषु पारगो भवेत् ॥ ४२ ॥

एतत्पुण्यानुसारैंश्च बलव्रतमुपाश्रयेत् ।
सर्वंदुष्टान् विनिर्जित्य सम्बोधिकृतनिश्चयः ॥ ४३ ॥

सम्यग्यत्नसमुत्साहैः सर्वतीर्थ्यान् विनिर्जयेत् ।
ततः साधुमतीं प्राप्तो महाब्रह्मा भवेत् कृती ॥ ४४ ॥

तत्रस्थः पालयन् सत्त्वान् बुद्धयानोपदेशनैः ।
सत्त्वासमपरिज्ञाने सम्यग्बोधौ प्रबोधयेत् ॥ ४५ ॥

स्वयं बले प्रतिष्ठित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य बलपारंगतो भवेत् ॥ ४६ ॥

एतत्पुण्यविपाकैश्च ज्ञानव्रतमुपाश्रयेत् ।
चतुर्मारान् विनिर्जित्य बोधिसत्त्वगुणाकरः ॥ ४७ ॥

सम्यग्ज्ञानं समाधाय सद्धर्मकुशलो भवेत् ।
धर्ममेघां ततः प्राप्तो महेश्वरो भवेत् कृती ॥ ४८ ॥

तत्रस्थः पालयन् सर्वान् सर्वाकारानुबोधनैः ।
सर्वाकारवरे ज्ञाने प्रतिष्ठाप्य प्रबोधयेत् ॥ ४९ ॥

स्वयं ज्ञाने प्रतिष्ठित्वा परांश्चापि नियोजयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य ज्ञानपारंगतो भवेत् ॥ ५० ॥

एतत्पुण्यानुभावैश्च दशभूमीश्वरो जिनः ।
सर्वाकारगुणाधारः सर्वज्ञो धर्मलाभवित् ॥ ५१ ॥

इति मत्वा भुवभिश्च सम्बुद्धपदलब्धये ।
दशपारमितारूपे चरितव्यं समाहितैः ॥ ५२ ॥

तथा बोधिं शिवां प्राप्य चतुर्मारान् विनिर्जयेत् ।
सर्वान् बोधौ प्रतिष्ठाप्य निर्वृतिं समवाप्स्यथ ॥ ५३ ॥

एतज्ज्ञात्वा परिच्छायां चरध्वं बोधिशासने ।
निर्विघ्नं बोधिमासाद्य लभध्वं सौगतं पदम् ॥ ५४ ॥

एतास्ता खल्वाह जिनपुत्रो दशबोधिसत्त्वभूमयः समासतो निर्दिष्टाः सर्वाकारवरोपेताः सर्वज्ञानानुगता द्रष्टव्याः । तस्यां वेलायामयं त्रिसाहस्रलोकधातुषड्विकारं प्राकम्पत विविधानि च पुण्यानि वियत्तो न्यपतन् । दिव्यमानुषकाणि च भूतानि संप्रवादितान्यभूवन्, अनुमोदनांशगेन च यावदकनिष्ठभुवनं विज्ञप्तमभूत् ॥

श्रीबोधिसत्त्वचर्याप्रस्थानाद् दशभूमीश्वरो नाम
महायानसूत्ररत्नराजस्तोत्रं समाप्तम् ।

धर्मधातुनामस्तवः

वं कारं वज्रसत्त्वं च वज्रासनसदास्थितम् ।
वारुणमण्डलव्यापि वैरोचन नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

अकारमादिस्वभावमाकाशे व्यापितं तथा ।
अर्कनीलसमस्तेज अक्षोभ्यश्री नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

रकारं लक्ष्मीस्वभावं नानारत्नमनेकधा ।
रं व्यापितं च पृथ्वीं रत्नसंभव नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

अकारमस्थिरं भावं पद्मनागसमप्रभम् ।
अग्नितेजःसमाधिस्थं अमिताभ नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

अकारं तत्स्वभावं च गन्धवाहसमप्रभम् ।
अकारविश्ववज्रं च अमोघसिद्धि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

धकारं धर्मस्वभावं धर्मसंघस्वरूपकम् ।
धात्वष्टकं कीर्तितं च धर्मधातु नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

सकारं सर्वसम्पत्तिः सर्वमङ्गलमर्थनम् ।
सर्वसिद्धिस्त्वमेवाथ सिद्धिवज्र नमोऽस्तुते ॥ ७ ॥

श्री धर्मधातुनामस्तवः समाप्तः ।



धर्मधातुवागीश्वरमण्डलस्तोत्रम्

मञ्जुश्रियं महावीरं सर्वमारविनाशनम् ।
सर्वसिद्धीश्वरं नाथं वागीश्वरं नमाम्यहम् ॥ १ ॥

मञ्जुघोषं महावीरं सर्वमारविनाशनम् ।
सर्वाकारप्रदातारं धर्मधातुं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

महोष्णीषं सितच्छत्रं तेजोराशिं जयोदितम् ।
विकिरणोद्गतं चैव महोग्रतेजसं नमे ॥ ३ ॥

अक्षोभ्यं च महाबोधिं वज्रसत्त्वं नमाम्यहम् ।
वज्रराजं वज्ररागं वज्रसाधुं नमाम्यहम् ॥ ४ ॥

श्रीरत्नसम्भवं नाथं वज्ररत्नं नमाम्यहम् ।
वज्रसूर्यं वज्रकेतुं वज्रहासं नमे सदा ॥ ५ ॥

अमिताभं महाराजं वज्रधर्मं नमाम्यहम् ।
वज्रतीक्ष्णं महाकेतुं वज्रभाषं नमे नमे ॥ ६ ॥

अमोघसिद्धिं सिद्धेशं वज्रकर्मं नमाम्यहम् ।
वज्ररक्षं वज्रयक्षं वज्रसन्धि नमे सदा ॥ ७ ॥

लोचनाख्यां महादेवीं पाण्डराख्यां नमाम्यहम् ।
मामकीं चैव देवीं तां तारादेवीं नमे नमे ॥ ८ ॥

वज्राङ्कुशं महावीरं वज्रपाशं महत्प्रभम् ।
वज्रस्फोटं महानाथं वज्रावेशं नमे नमे ॥ ९ ॥

अधिमुक्तीश्वरीं भूमिं प्रमुदितां नमाम्यहम् ।
विमलाख्यां महाभूमिं प्रभाकरीं नमे नमे ॥ १० ॥

अर्चिष्मतीं सुदुर्जयां चाभिमुखीं नमाम्यहम् ।
दूरङ्गमामचलाख्यां साधुमतीश्वरीं नमे ॥ ११ ॥

धर्ममेघां महामेघां समताख्यां प्रभां नमे ।
रत्नपारमितां देवीं दानपारमितां नमे ॥ १२ ॥

शीलपारमितां देवीं क्षान्तिपारमितां नमे ।
वीर्यपारमितां देवीं ध्यानपारमितां श्रये ॥ १३ ॥

प्रज्ञापारमितां देवीम् उपायाख्यं नमाम्यहम् ।
प्रणिधानबलं चैव ज्ञानपारमितां सदा ॥ १४ ॥

कर्मपारमितां देवीं नमामि सततं तथा ।
आयुश्चित्तपरिष्कारं कर्मोपपत्तिकां नमे ॥ १५ ॥

ऋद्ध्याख्यामधिमुक्तिं च प्रणिधानां नमाम्यहम् ।
ज्ञानाख्यवशितां देवीं धर्माख्यवशितां नमे ॥ १६ ॥

तथतां च महादेवीं बुद्धबोधिं नमाम्यहम् ।
वसुमतीं महालक्ष्मीं रत्नज्वालां नमे नमे ॥ १७ ॥

उष्णीषविजयां देवीं मारीचीं पर्णशाबरीम् ।
जाङ्गुलिं धारणीं वन्दे अनन्तमुखधारणीम् ॥ १८ ॥

चुन्दां प्रज्ञां च पद्मां च सर्वावरणशोधनीम् ।
अक्षयज्ञानकारण्डं धर्मकायवतीं नमे ॥ १९ ॥

धर्मप्रतिविदं देवमर्थं च प्रतिसंविदम् ।
निरुक्तिसंविदं देवं प्रतिभानाख्यसंविदम् ॥ २० ॥

वज्रलास्यां वज्रमालां वज्रगीतां नमे सदा ।
वज्रनृत्यां महादेवीं नमामि सततं मुदा ॥ २१ ॥

समन्तभद्रं बोधीशमक्षयतां मतिं नमे ।
क्षितिगर्भं खगर्भं च बोधिसत्त्वं नमाम्यहम् ॥ २२ ॥

गगणगञ्जनाथेशं रत्नपाणिं नमे नमे ।
सागरमतिं बोधीशं वज्रगर्भं नमाम्यहम् ॥ २३ ॥

लोकेश्वरं महासत्त्वं स्थानप्राप्तं नमाम्यहम् ।
चन्द्रप्रभं महातेजं वन्देऽहं जालिनीप्रभम् ॥ २४ ॥

अमितप्रभबोधीशं श्रीपतिं भानुकूटकम् ।
सर्वशोकतमोद्घाटविष्कम्भिनं नमाम्यहम् ॥ २५ ॥

यमान्तकं महावीरं प्रज्ञान्तकं नमे नमे।
पद्मान्तकं महावीरं विघ्नान्तकं नमाम्यहम् ॥ २६ ॥

त्रैलोक्यविजयं वीरं वज्रज्वालां नमाम्यहम्।
हेरुकं वज्रवीरेशं परमेशं नमाम्यहम् ॥ २७ ॥

चक्रवर्त्तीश्वरं वन्दे सुम्भराजं नमाम्यहम्।
पुष्पां धूपां महादीपां गन्धां देवीं नमाम्यहम् ॥ २८ ॥

वज्ररूपां वज्रशब्दां रसवज्रां नमाम्यहम्।
वज्रस्पर्शां महादेवीं विश्ववर्णां नमे सदा ॥ २९ ॥

इन्द्रयमजलेशांश्च कुबेरमीश्वरं नमः।
अग्निं नैर्ऋत्यनाथं च वायुराजं नमाम्यहम् ॥ ३० ॥

ब्रह्माणं विष्णुदेवं च महेश्वरं कुमारकम्।
ब्रह्माणीं च महादेवीं रुद्राणीं वैष्णवीं नमे ॥ ३१ ॥

कौमारीं रक्तवर्णां च महेन्द्राणीं नमाम्यहम्।
वाराहीं कालिकां चण्डीं भृङ्गिणं गणनायकम् ॥ ३२ ॥

महाकालं महाभीमं नन्दिकेशं रविं नमे।
चन्द्रं भौमं बुधं वन्दे गुरुं शुक्रं शनैश्चरम् ॥ ३३ ॥

राहुं केतुं बलभद्रं जयकरं नमे सदा।
मधुकरं वसन्तं च अनन्तं वासुकिं नमे ॥ ३४ ॥

तक्षं कर्कोटकं पद्मं महापद्मं नमाम्यहम्।
शङ्खपालं च कुलिकं वेमचित्रं वलिं नमे ॥ ३५ ॥

प्रह्लादं च महादैत्यं वैरोचनं नमे सदा।
गरुडेन्द्रं सुम्भराजं पंचशिखं नमाम्यहम् ॥ ३६ ॥

सर्वार्थसिद्धिं विघ्नेशं पूर्णभद्रं नमाम्यम्।
मणिभद्रं महायक्षं धनदं च महेश्वरम् ॥ ३७ ॥

वैश्रवणं महावीरं चिविकुण्डलिनं नमाम्यहम्।
केलिमालिं सुखेन्द्रं च चलेन्द्रं च नमाम्यहम् ॥ ३८ ॥

हारतीं यक्षिणीं देवीं बहुपुत्रवतीं नमे ।
अश्विनीं भरणीं तारां कृत्तिकां रोहणीं तथा ॥ ३९ ॥

मृगशीर्षां तथैवार्द्रां पुनर्वसुं नमाम्यहम् ।
पुष्यमाश्लेषकातारां मघां च पूर्वाफाल्गुनीम् ॥ ४० ॥

उत्तराफाल्गुनीं हस्तं चित्रां स्वातिं विशाखकाम् ।
अनुराधां तथा ज्येष्ठां मूलतारां नमाम्यहम् ॥ ४१ ॥

पूर्वाषाढोत्तराषाढां श्रवणां च नमाम्यहम् ।
धनिष्ठां शतभिषां च पूर्वोत्तराभाद्रपदाम् ॥ ४२ ॥

रेवतीं च महाताराम् अभिजितं नमाम्यहम् ।
वज्राङ्कुशं महावीरं वज्रपाशं नमाम्यहम् ॥ ४३ ॥

वज्रस्फोटं महाभीमं वज्रांशं वै नमे नमे ।
वागीश्वरं महाबोधिं सर्वविघ्नविनाशकम् ॥ ४४ ॥

सर्वज्ञं ज्ञानदातारं धर्मधातुं नमाम्यहम् ।
मञ्जुश्रियं महाज्ञानं सर्वविद्याप्रदेश्वरम् ।
सर्वाकारस्वरूपं च वादिराजं नमाम्यहम् ॥ ४५ ॥

श्री धर्मधातुवागीश्वरमण्डलस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

नरकोद्धारस्तोत्रम्

दारिद्र्यपङ्कसंमग्नं संसाराख्यमहोदधौ ।
प्रतिज्ञातं समुत्पादे त्राहि मां हि तथागत ॥ १ ॥

तिमिरागारसंविष्टमनर्थदुःखवेदिनम् ।
बन्धुवर्गैः परित्यक्तं त्राहि मां हि तथागत ॥ २ ॥

मातापितृभगिन्यादि पुत्रदारसुहृज्जनाः ।
इन्द्रजालसमा दृष्टास्त्राहि मां हि तथागत ॥ ३ ।

मया अरिजनस्यार्थे सुकृतं कर्म दुष्कृतम् ।
एकाकी तं हि भोक्ष्यामि त्राहि मां हि तथागत ॥ ४ ॥

जीर्णकूपे महाघोरे अनवगाहसागरे ।
अन्धीभूतोऽस्म्यहं नाथ त्राहि मां हि तथागत ॥ ५ ॥

जीर्णनौकासमारूढो महासागरलंघने ।
दुर्लङ्घ्यं च मया दृष्टं त्राहि मां हि तथागत ॥ ६ ॥

धर्माधर्मं न विज्ञातं गम्याऽगम्यं न वेदितम् ।
अचेतनोऽस्म्यहं नाथ त्राहि मां हि तथागत ॥ ७ ॥

मातृघातादिकं पञ्चानन्तर्यं वा मया कृतम् ।
पच्यामि नरके घोरे त्राहि मां हि तथागत ॥ ८ ॥

कृतं मया स्तूपभेदं संघकार्यं विनाशितम् ।
कृता मया सत्त्वहिंसा त्राहि मां हि तथागत ॥ ९ ॥

इहलोके सुखैर्हीनं परलोके न वेदनम् ।
वेष्टितं कर्मसूत्रेण त्राहि मां हि तथागत ॥ १० ॥

काशपुष्पं यथाऽऽकाशे भ्रमते वायुना हृतम् ।
ईदृशं जीवितं लोके त्राहि मां हि तथागत ॥ ११ ॥

अटवी कंटकाच्छन्ना बहुवृक्षसमाकुला ।
पन्थानं नात्र पश्यामि त्राहि मां हि तथागत ॥ १२ ॥

अनपराधाः कुपितेन मयाऽकाण्डे हता मृगाः।
राजहत्यां तदा मन्ये त्राहि मां हि तथागत॥ १३॥

नरके पच्यमानस्य कश्चित् त्राता भविष्यति।
गच्छामि शरणं कस्य त्राहि मां हि तथागत॥ १४॥

वैद्यानां वैद्यराजस्त्वं सर्वव्याधिचिकित्सकः।
लोकनाथ भवत्राता त्रैलोक्ये सचराचरे॥ १५॥

नरकोद्धारस्तोत्रं समाप्तम्।

निरौपम्यस्तवः

निरौपम्य नमस्तुभ्यं निःस्वभावार्थवादिने ।
यस्त्वं दृष्टिविपन्नस्य लोकस्यैव हितोद्यतः ॥ १ ॥

न च नाम त्वया किञ्चिद् दृष्टं बौद्धेन चक्षुषा ।
अनुत्तरा च ते नाथ दृष्टिस्तत्त्वार्थदर्शिनी ॥ २ ॥

न बोद्धा न च बोद्धव्यमस्तीह परमार्थतः ।
अहो परमदुर्बोधां धर्मतां बुद्धवानसि ॥ ३ ॥

न त्वयोत्पादितः कश्चिद् धर्मो नापि निरोधितः ।
समतादर्शनेनैव प्राप्तं पदमनुत्तमम् ॥ ४ ॥

न संसारात्प्रकर्षेण त्वया निर्वाणमीप्सितम् ।
शान्तिस्तेऽधिगता नाथ संसारानपराधितः ॥ ५ ॥

त्वं विवेदैकरसतां संक्लेशव्यवदानयोः ।
धर्मधात्वविनिर्भेदाद् विशुद्धश्चासि सर्वतः ॥ ६ ॥

नोदाहृतं त्वया किञ्चिदेकमप्यक्षरं विभो ।
कृत्स्नश्च वैनेयजनो धर्मवर्षेण तर्पितः ॥ ७ ॥

न तेऽस्ति सक्तिः स्कन्धेषु न धात्वायतनेषु च ।
आकाशसमचित्तस्त्वं सर्वधर्मेषु निश्रितः ॥ ८ ॥

सत्त्वसंज्ञा च ते नाथ सर्वथा न प्रवर्तते ।
दुःखार्तेषु च सत्त्वेषु त्वमतीव कृपात्मकः ॥ ९ ॥

सुखदुःखात्मनैरात्म्यनित्यानित्यादिषु प्रभो ।
इति नानाविकल्पेषु बुद्धिस्तव न सज्जते ॥ १० ॥

न गतिर्नागतिः काचिद्धर्माणामिति ते मति ।
न क्वचिद्राशितः प्रोक्तो धर्मार्थिंपरमार्थवित् ॥ ११ ॥

सर्वत्रानुगतश्चासि न च यातोऽसि कुत्रचित् ।
जन्मधर्मशरीराभ्यामचिन्त्यस्त्वं महामुने ॥ १२ ॥

एकत्वान्यत्वरहितं प्रतिश्रुत्कोपमं जगत् ।
संक्रान्तिनाशाय गतं बुद्धवान् त्वमनिन्दित ॥ १३ ॥

शाश्वतोच्छेदरहितं लक्ष्यलक्षणवर्जितम् ।
संसारमवबुद्धस्त्वं स्वप्नमायादिवत् प्रभो ॥ १४ ॥

वासनामूलपर्यन्तक्लेशनद्यो विनिर्जिताः ।
क्लेशप्रकृतितश्चैव त्वयामृतमुपार्जितम् ॥ १५ ॥

अलक्षणं त्वया धीरं दृष्टं रूपमरूपवत् ।
लक्षणोज्ज्वलगात्रश्च दृश्यसे रूपगोचरे ॥ १६ ॥

न च रूपेण दृष्टेन दृष्ट इत्यभिधीयसे ।
धर्मदृष्ट्या सुदृष्टोऽसि धर्मता न च दृश्यते ॥ १७ ॥

शौषीर्यो नास्ति ते कायो मांसास्थिरुधिरो न च ।
इन्द्रायुधमिव कायं विना दर्शितवानसि ॥ १८ ॥

नामयो नाशुचिः काये क्षुत्तृष्णासम्भवो न च ।
त्वया लोकानुवृत्त्यर्थं दर्शिता लौकिकी क्रिया ॥ १९ ॥

कर्मावरणदोषश्च सर्वथाऽनघ नास्ति ते ।
त्वया लोकानुकम्पायै कर्मप्लोतिः प्रदर्शिता ॥ २० ॥

धर्मधातोरसंभेदाद् यानभेदोऽस्ति न प्रभो ।
यानत्रितयमाख्यातं त्वया सत्त्वावतारतः ॥ २१ ॥

नित्यो ध्रुवः शिवः कायस्तव धर्ममयो जिन ।
विनेयजनहेतोश्च दर्शिता निर्वृतिस्त्वया ॥ २२ ॥

लोकधातुष्वसंख्येषु त्वद्भक्तैः पुनरीक्षसे ।
च्युतिजन्माभिसंबोधिचक्रनिर्वृतिलालसैः ॥ २३ ॥

न तेऽस्ति मन्यना नाथ न विकल्पो न चेञ्जना ।
अनाभोगेन ते लोके बुद्धकृत्यं प्रवर्तते ॥ २४ ॥

इति सुगतमचिन्त्यमप्रमेयं
गुणकुसुमैरवकीर्य मया प्राप्तम् ।
कुशलमिह भवन्तु तेन सत्त्वाः
परमगभीरमुनीन्द्रधर्मभाजनाः ॥ २५ ॥

निरौपम्यस्तवः समाप्तः ।

नैरात्माष्टकस्तोत्रम्

निरालम्ब-निराकार-निर्विकल्पस्वरूपिणी ।
नैरात्मा वरदा देवी नित्यमेव नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

एकवक्त्रां ! त्रिनेत्रां च ऊर्ध्वपिङ्गलमूर्धजाम् ।
करे कर्तिकपालां च नमामि विश्वमातरीम् ॥ २ ॥

नवनृत्यभूषितां च सहस्रमुखरूपिणीम् ।
योगेश्वरीं योगगम्यां नमामि ज्ञानरूपिणीम् ॥ ३ ॥

शवारूढां महातेजां सर्वदुष्टनिकृन्तनीम् ।
सर्वपापहरां देवीं नमामि जगदीश्वरीम् ॥ ४ ॥

गौरीं चौरीं च वेतालीं घस्मरीं पुक्कसीं तथा ।
शबरीं चाण्डालीं डोम्बीं नमामि चाष्टयोगिनीम् ॥ ५ ॥

ब्रह्माविष्णुशिवशक्रचतुर्मारविनाशिनीम् ।
त्रैलोक्यमोहिनीं देवीं नमामि सुरसुन्दरीम् ॥ ६ ॥

अक्षमालविभूषाङ्गीम् अकारबीजसम्भवाम् ।
नित्यं ध्यानरतां देवीं नमामि विश्वमातरीम् ॥ ७ ॥

सर्वभूतप्रियां देवीं सर्वमन्त्रप्रबोधिनीम् ।
सर्वमन्त्रमयीं मातर्नैरात्मां त्वां नमाम्यहम् ॥ ८ ॥

नैरात्माष्टकस्तोत्रं समाप्तम् ।



पञ्चतथागतस्तुतिगाथा

ॐ नमः श्रीपञ्चभूतान्ताय ।

नमस्ते वरदराजाग्र भूतकोटि नमोस्तु ते ।
नमस्ते शून्यतागर्भ बुद्धबोधि नमोऽस्तु ते ॥ १॥

बुद्धराग नमस्तेऽस्तु बुद्धकाम नमोऽस्तु ते ।
बुद्धप्रीति नमस्तेऽस्तु बुद्धमोद नमो नमः ॥ २ ॥

बुद्धस्मित नमस्तुभ्यं बुद्धहास नमो नमः ।
बुद्धवाच नमस्तेऽस्तु बुद्धभाव नमो नमः ॥ ३ ॥

अभवोद्भव नमस्तेऽस्तु नमस्ते बुद्धसंभव ।
गगनोद्भव नमस्तेऽस्तु नमस्ते ज्ञानसंभव ॥ ४ ॥

मायाजाल नमस्तुभ्यं नमस्ते बुद्धनायक ।
नमस्ते सर्वसर्वेभ्यो ज्ञानकाय नमोऽस्तु ते ।

श्री पञ्चतथागतस्तुतिगाथा समाप्ता ।

•

पञ्चतथागतस्तोत्रम्

श्रीबुद्ध बुद्धाधिप बुद्धरूप बुद्धान्वितान् बोधयसे विबुद्धः ।
बुद्ध्या समस्तान् खलु बुद्धपुत्र सन्तोष्य योगेन तु बुद्धमेघाम् ॥ १ ॥

श्रीवज्र वज्रामल जातवज्र वज्रेण दीप्तेन प्रदीप्य लोकम् ।
ददन् योगेन तु वज्रसंवर्षं वज्रात्मभावं कुरुषे सुवज्र ॥ २ ॥

श्रीरत्न रत्नाकर रत्नमेघ रत्नेन रत्नं रमसे सुरत्न ।
विदार्य दारिद्र्यघनं जनानां सुतेजसा रत्नमहाध्वजेन ॥ ३ ॥

श्रीपद्म पद्मोत्तम पद्मसत्त्व पद्मान्समस्तान् खलुपद्मजालैः ।
विबोध्य पद्मोद्भव पद्मतोयैः पद्मे कुले स्थापयसे सुपद्म ॥ ४ ॥

श्रीविश्व विश्वाविश विश्वज्ञानं विश्वेन विश्वविषयेन लिप्त ।
विश्वेन सत्त्वान् विनयेषु विश्वं विद्यां सुविद्यां सुखपाचितामिति ॥५॥

श्रीपञ्चतथागतस्तोत्रं समाप्तम् ।

•

पञ्चरक्षादेवीस्तोत्राणि

१ महाप्रतिसरास्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीमहाप्रतिसरायै

तथागताद्यास्तथतां तत्त्वमापुर्महत्तरम् ।
धारणीधारणाद्यस्याः प्रतिसरां नमामि ताम् ॥ १ ॥

रणे शक्रोऽजयद्दैल्यान् धारणीध्वजधृग् बहून् ।
संग्रामजयदां भीमां प्रतिसरां नमामि ताम् ॥ २ ॥

यत्प्रभावाद् ब्रह्मदत्तोऽलभद् राज्यमकण्टकम् ।
सार्वभौमप्रदां देवीं प्रतिसरां नमामि ताम् ॥ ३ ॥

बह्वपराधोऽपि यद्भक्तो राज्याधिकारमाप्तवान् ।
शस्त्रादिभीतिसंहर्त्रीं प्रतिसरां नमामि ताम् ॥ ४ ॥

रत्नान्यवापुर्वणिजो यां स्मृत्वोदधिनिर्गताः ।
सर्वबाधाप्रशमनीं प्रतिसरां नमामि ताम् ॥ ५ ॥

श्रीमहाप्रतिसरारक्षादेवीस्तोत्रं समाप्तम् ।

२ महामन्त्रानुसारिणीस्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीमहामन्त्रानुसारिण्यै

बुद्धाधिष्ठानतो बुद्धाभयदां भयनाशिनीम् ।
भवाम्बुधिनिमग्नानां नमो मन्त्रानुसारिणीम् ॥ १ ॥

यन्मन्त्रोच्चारणादेव षडीतयः सुदारुणाः ।
नाशं प्रयान्ति वरदां नमो मन्त्रानुसारिणीम् ॥ २ ॥

मन्त्रानुसारिणो लोकान् नान्ये मन्त्रादयो ग्रहाः ।
पीडयन्ति प्रियांश्चापि नमो मन्त्रानुसारिणीम् ॥ ३ ॥

बुद्धोऽभ्यभाषद् गाथास्ता यन्मन्त्रकथनान्तरम् ।
याभिः सर्वत्र स्वस्ति स्यान्नमो मन्त्रानुसारिणीम् ॥ ४ ॥

कलौ बुद्धविहीनेऽस्मिन् लोकानां हितमाचरेत् ।
पापोत्पातप्रशमनीं नमो मन्त्रानुसारिणीम् ॥ ५ ॥

श्री महामन्त्रानुसारिणीस्तोत्रं समाप्तम् ।

३ महामायूरीस्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीमहामायूर्यै

दुष्टं कृष्णभुजङ्गं च नरः स्वान्तिकं पालयेत् ।
यस्या मन्त्रानुभावेन मायूरीं प्रणमामि ताम् ॥ १ ॥

ब्रह्मादयो लोकपाला यद्धारण्या समाप्नुवन् ।
स्वानि स्वान्यधिकाराणि मायूरीं प्रणमामि ताम् ॥ २ ॥

स्वर्णावभासं शिखिनं नालभञ्जपिनं कुधीः ।
अमोघेनापि पाशेन मायूरीं प्रणमामि ताम् ॥ ३ ॥

यन्मन्त्रजपतो जीवाः प्राजीवञ्छुष्कपादपाः ।
मृतसंजीविनीं देवीं मायूरीं प्रणमामि ताम् ॥ ४ ॥

यन्मन्त्रिसङ्गात् पवनो महोपद्रवशान्तिकृत् ।
बुद्धानां बोधिदां नित्यं मायूरीं प्रणमामि ताम् ॥ ५ ॥

श्रीमहामायूरीरक्षादेवीस्तोत्रं समाप्तम् ।

४ महाशीतवतीरक्षादेवीस्तोत्रम्

ॐ नमो महाशीतवत्यै

यद्धारणीमनुजपन् राहुलो भद्रमाप्तवान् ।
विहेठितो ग्रहैः सर्वैः शीतवतीं नमाम्यहम् ॥ १ ॥

पापतापे शीतकरीं शीतलाद्युपसर्गतः ।
शीतोष्णदुःखशमनीं शीतवतीं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

मन्त्रग्रन्थितसूत्राणां धारणाल्लक्षयोजनम् ।
पथिकानां पालयित्रीं शीतवतीं नमाम्यहम् ॥ ३ ॥

श्मशानस्थेन मुनिना या समुच्चारिता पुरा ।
ग्रहोपद्रवशान्त्यर्थं शीतवतीं नमाम्यहम् ॥ ४ ॥

ग्रहाभिभूतवातानां ग्रन्थिपदविधारिणाम् ।
ग्रहभीतिप्रशमनीं शीतवतीं नमाम्यहम् ॥ ५ ॥

श्री महाशीतवतीरक्षादेवीस्तोत्रं समाप्तम् ।

५ महासाहस्रप्रमर्दिनीस्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीमहासाहस्रप्रमर्दिन्यै

महासाहस्रिके लोके साहस्रहितकारिणाम् ।
सहस्रसत्त्वजननीं नौमि साहस्रमर्दिनीम् ॥ १ ॥

सोपद्रवायां वैशाल्यां महोत्सवो यतः सदा ।
महोपसर्गशमनीं नौमि साहस्रमर्दिनीम् ॥ २ ॥

यक्षराक्षसभूतानां दमनीं दुष्टचेतसाम् ।
दुरितोपद्रवहतां नौमि साहस्रमर्दिनीम् ॥ ३ ॥

यद्धारणीपठनतो रक्षितः शाक्यकेशरी ।
विषतो विषदिग्धां तां नौमि साहस्रमर्दिनीम् ॥ ४ ॥

मधुमिश्रितभैषज्यं सर्वरोगनिवारणम् ।
मृतसञ्जीवनं लोके नौमि साहस्रमर्दिनीम् ॥ ५ ॥

श्रीमहासाहस्रमर्दिनीरक्षादेवीस्तोत्रं समाप्तम् ।

पञ्चाक्षरस्तोत्रम्

नमो बुद्धाय

न जातो न मृतश्चैव न रूपो नापि रूपवान् ।
न संसारे न निर्वाणे न कारस्तेन सूच्यते ॥ १ ॥

मोहध्वंसकरो नित्यं मोक्षसौख्यप्रदायकः ।
मोहनं सर्वमाराणां मोकारस्तेन सूच्यते ॥ २ ॥

बुद्धानामुदितं ध्यानं बुद्धानां जनमेलकम् ।
बुद्धनिःक्लेश संबुद्ध बुकारस्तेन सूच्यते ॥ ३ ॥

धार्यते बोधिसत्त्वैः स धर्मधातुगतिः सदा ।
धर्माणां परमो धर्मः धकारस्तेन सूच्यते ॥ ४ ॥

यथा नास्ति तथा नास्ति यथा नास्ति तथास्ति यः ।
यथावादी तथाकारी यकारस्तेन सूच्यते ॥ ६ ॥

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
ये पठन्ति दिवारात्रौ ते यान्ति परमां गतिम् ॥ ६ ॥

श्री पञ्चाक्षरस्तोत्रं समाप्तम् ।

परमार्थस्तवः

कथं स्तोष्यामि ते (तं) नाथमनुत्पन्नमनालयम् ।
लोकोपमामतिक्रान्तं वाक्पथातीतगोचरम् ॥ १ ॥

तथापि यादृशो वाऽसि तथतार्थेषु गोचरः ।
लोकप्रज्ञप्तिमागम्य स्तोष्येऽहं भक्तितो गुरुम् ॥ २ ॥

अनुत्पन्नस्वभावेन उत्पादस्ते न विद्यते ।
न गतिर्नागतिर्नाथ अभावाय नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

न भावो नाप्यभावोऽसि नोच्छेदो नापि शाश्वतः ।
न नित्यो नाप्यनित्यस्त्वमद्वयाय नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

न ह्येको हरितमाञ्जिष्ठो वर्णस्ते नोपलभ्यते ।
न पीतः शुक्लः कृष्णो वा अवर्णाय नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

न महान् नापि ह्रस्वोऽसि न दीर्घः परिमण्डलः ।
अप्रमाणगतिं प्राप्तोऽप्रमाणाय नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

न दूरे नापि वासन्ने नाकाशे नापि वा क्षितौ ।
न संसारे न निर्वाणे अस्थिताय नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

अस्थितः सर्वधर्मेषु धर्मधातुगतिं गतः ।
परां गम्भीरतां प्राप्तो गम्भीराय नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

एवं स्तुते स्तुतो भूयादथवा किं वत स्तुतः ।
शून्येषु सर्वधर्मेषु कः स्तुतः केन वा स्तुतः ॥ ९ ॥

कस्त्वां शक्नोति संस्तोतुमुत्पादव्ययवर्जितम् ।
यस्य नान्तो न मध्यं वा ग्राह्यग्राहो न विद्यते ॥ १० ॥

न गतं नागतं स्तुत्वा सुगतं गतिवर्जितम् ।
तेन पुण्येन लोकोऽयं व्रजतां सौगतीं गतिम् ॥ ११ ॥

श्री परमार्थस्तवः समाप्तः ।

पीठस्तवः

१

ब्रह्माणी तत्त्वरूपा विविधघनरवा घोरचण्डी च रौद्री
कौमारी कीर्तिकामा पिबति मधुमदं वैष्णवी गायमाना ।
वाराही वादयन्ती पटुतरपटहान् नृत्यमाना तथैन्द्री
चामुण्डा चापि लक्ष्मीर्हरगणसहिता मातरो वः पुनन्तु ॥ १ ॥

२

गणपतिं च हेरम्बं विघ्नराजं विनायकम् ।
देवपुत्रं महावीर्यं महाबलपराक्रमम् ॥ २ ॥

महोदरं महाकायमेकदन्तं गजाननम् ।
श्वेतवर्णं महादीप्तिं त्रिनेत्रं गणनायकम् ॥ ३ ॥

अक्षमाला [च] वरदं दक्षिणकरसंस्थितम् ।
परशुर्मुण्डपात्रं च वामहस्तविधारणम् ॥ ४ ॥

नानापुष्परतं देवं नानागन्धावलेपनम् ।
नागयज्ञोपवीताङ्गं नानाविघ्नविनाशनम् ॥ ५ ॥

देवासुरमनुष्यैश्च सिद्धगन्धर्वकिन्नरैः ।
पूजितं विघ्नहन्तारं मूषकाटं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

३

ब्रह्माणी ब्रह्मसावित्री ब्रह्मतत्त्वविवेदिनी ।
चतुर्भुजा चतुर्वक्त्रा चतुर्देवपरायणा ॥ ७ ॥

चतुर्देशे चिरं व्यापी चतुर्युगोपकारिणी ।
हंसयुक्तविमानस्था सौम्यरूपा पितामही ॥ ८ ॥

पुस्तकं पुष्पमालां च वरदाभयधारिणी ।
पीतपुष्परता देवो पीताङ्गा पीतसन्निभा ॥ ९ ॥

पीतोपहारसंयुक्ता पीतगन्धानुलेपिनी ।
उदुम्बरद्रुमस्था च प्रयागक्षेत्रवासिनी ॥ १० ॥

पूर्वपीठे स्थिता नित्यं ब्रह्मशक्तिर्नमोऽस्तु ते ।

४

माहेश्वरी महादेवी मोहमायानिरंज(क्रांत)नी ॥ ११ ॥

महावृषसमारूढा महाहुंकारनादिनी ।
हेममुक्त(क्ता)निभदेहा कपालशशिशेखरा ॥ १२ ॥

त्रिलोचना त्रिशूली च अक्षसूत्रकमण्डलू ।
नानालङ्कारसर्वाङ्गी दक्षिणेन वरप्रदा ॥ १३ ॥

सृष्टिस्थितिविनाशानां सर्वथापीश्वरेश्वरी ।
श्वेतपुष्परता देवी श्वेतगन्धानुलेपिनी ॥ १४ ॥

श्वेतवस्त्रपरीधाना मुद्राभरणभूषिता ।
वाराणस्यां महाक्षेत्रे तार(ल)वृक्षनिवासिनी ॥ १५ ॥

उत्तरे संस्थिता पीठे माहेश्वरी नमोऽस्तु ते ।

५

बालभावे महारौद्री कौमारी रक्तलोचनी ॥ १६ ॥

रक्तवर्णधरा देवी सिन्दूरारुणविग्रहा ।
चतुर्भुजा शक्तिसूत्रसिद्धपात्रधरा शुभा ॥ १७ ॥

कौमारी परमा शक्तिर्मयूरखरवाहिनी ।
रक्तवस्त्रपरीधाना रक्तमांसावसायिनी ॥ १८ ॥

कोलापुरमहाक्षेत्रे वटवृक्षनिवासिनी ।
अग्निपीठस्थिता नित्यं कौमारी ते नमो नमः ॥ १९ ॥

६

वैष्णवी विष्णुमाया च दैत्यदुर्दान्तनाशिनी ।
हरितश्यामवर्णाङ्गी गरुडोपरि संस्थिता ॥ २० ॥

शङ्खचक्रगदाहस्ता चतुर्बाहुविभूषिता ।
रक्तज्वाला महाक्रीडा नानाभरणभूषिता ॥ २१ ॥

हरितपुष्पगन्धा च हरितवस्त्रधारिणी ।
अट्टहासे महाक्षेत्रे कदम्बवृक्षवासिनी ॥ २२ ॥

स्वर्गे मर्त्ये च पाताले स्थितिरूपेण संस्थिता।
तिष्ठन्ती पीठनैर्ऋत्ये नारायणी नमोऽस्तु ते ॥ २३ ॥

७

वाराही घोररक्ताङ्गी रक्तकेशी महोदरी।
दंष्ट्रावादिनी गम्भीरा रक्तनेत्रा त्रिलोचनी ॥ २४ ॥

कपालमालिका माला विचित्रपुष्पशोभिता।
महाशूकसमारूढा ज्वलिताग्निसमप्रभा ॥ २५ ॥

अङ्कुशकर्तिकादण्डहाडाभरणभूषिता ।
त्रिनेत्रा ज्वलितदेहा च दुष्टदर्पविनाशिनी ॥ २६ ॥

जयन्तीक्षेत्रसंस्थाना निम्बवृक्षसमाश्रिता।
याम्यपीठे स्थिता नित्यं कोलरूपी नमोऽस्तु ते ॥ २७ ॥

८

शक्रेश्वरी सहस्राक्षी कुङ्कुमारुणविग्रहा।
सुरेश्वरी देवदेवी सर्वालङ्कारभूषिता ॥ २८ ॥

चतुर्भुजा विशालाक्षी छत्रघण्टाविधारणी।
महावज्रधरा देवी स्थिता चैरावते गजे ॥ २९ ॥

नानापुष्परता देवी नानारत्नविभूषिणी।
नानागन्धविलिप्ताङ्गी नानावस्त्रविराजिनी ॥ ३० ॥

चीर(न)क्षेत्रे महाक्षेत्रे करञ्जवृक्षसंस्थिता।
नागपीठस्थिता नित्यं शक्रेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥ ३१ ॥

९

चामुण्डा चण्डिका चण्डी प्रचण्डसुरसुन्दरी।
चण्डाट्टहासा चण्डाक्षी प्रचण्डचण्डनाशिनी ॥ ३२ ॥

दंष्ट्राकराला रक्ताङ्गी कपिलकेशी महोदरी।
कृषा(पा)णी भीषणी रौद्री जिह्वाललनभीषणा ॥ ३३ ॥

महाप्रेतासनारूढा भुजाष्टकसुशोभिनी।
असिचर्मयुता हस्तैः डमरुखट्वाङ्गधारिणी ॥ ३४ ॥

कर्तिकपालहस्ता च वरदाभयभूषिता ।
हाडालङ्कारसर्वाङ्गी अरिप्रत्थसुदा प्रिया ॥ ३५ ॥

सहस्रसूर्यसंकाशा रोपकूपं प्रति प्रति ।
ज्वालामालाकुला देहे [सूर्य]कोटिसमप्रभा ॥ ३६ ॥

भूतवेतालडाकिन्यः परिवाराश्च राक्षसाः ।
एकमक्षमहाक्षेत्रे अश्वत्थवृक्षवासिनी ।
पीठे मरुत्तसंस्थाने चामुण्डायै नमोऽस्तु ते ॥ ३७ ॥

१०

महालक्ष्मीर्महादेवी भोगाढ्या गुणसुन्दरी ।
वैदूर्यपादुकारूढा सिंहासनस्थिता सुधीः ॥ ३८ ॥

चतुर्भुजा विशालाक्षी खड्गखेटकधारिणो ।
पात्रबिन्दुधरा देवी हार्धयुक्(हारार्धयुग)कुण्डली ॥ ३९ ॥

रत्नखचितसर्वाङ्गी चूडामणिविभूषिता ।
विचित्रपुष्परत्ना च वस्त्रगन्धानुलेपना ॥ ४० ॥

त्रैलोक्यव्यापिनी देवी सर्वस्था सचराचरा ।
सिद्धगन्धर्वनमिता विद्याधरसुरार्चिता ॥ ४१ ॥

देवीकोटमहाक्षेत्रे प्लक्षसंस्था वरा बला ।
ईशानपीठसंस्थाना महालक्ष्मोः नमोऽस्तु ते । ४२ ॥

११

जननी सर्वबुद्धानां सर्वसन्तोषकारिणी ।
त्वमेव सर्वरूपा च त्वमेव विश्वरूपिणी ॥ ४३ ॥

भैरवं भीषणं रौद्रं घोरगम्भोररूपिणम् ।
निरञ्जननिभं देहं सर्वकाममहोत्सवम् ॥ ४४ ॥

नानाभुजसमाकीर्णा नानावस्त्रधरा शुभा ।
बभ्रुरर्धशिरोरूहा दावाग्निसमतेजसा ॥ ४५ ॥

त्रिलोचना महातेजा अग्निसूर्यसमप्रभा ।
त्रिशूलं मुण्डं खट्वाङ्गं डमरुं तर्जनीं ध्वजम् ॥ ४६ ॥

१२

प्रज्ञां तत्पुस्तकं चैव खड्गचर्मधरा शुभा ।
पाशाङ्कुशधरं देवं वज्रसूचीमहाधरम् ॥ ४७ ॥

कपालकर्तिकं चक्रं गजचर्मावगुण्ठितम् ।
दंष्ट्राकरालवदनं व्याघ्रचर्मकटीवृतम् ॥ ४८ ॥

सालङ्कारेण सर्वाङ्गं नरास्थिपुष्पशोभितम् ।
शीर्षमालाधरा देवी कापालिकोटरं शुभम् ॥ ४९ ॥

चूडामणिं महातेजं कपालं चन्द्रभूषितम् ।
महाप्रेतासनं नित्यं नीयमाना सदा प्रिया ॥ ५० ॥

१३

सहस्रसूर्यसंकाशा छत्रबिन्दुसमन्विता ।
चतुष्पीठस्थिता नित्यम् अष्टक्षेत्रनिवासिनी ॥ ५१ ॥

अष्टमूर्तिस्थिता देवी अष्टकयोगिनीप्रिया ।
भद्रपीठे स्थिता नित्यं भद्रकालीसमावृता ॥ ५२ ॥

१४

भद्रकारणकर्ता त्वं वीरभद्र नमोऽस्तु ते ।
असिताङ्गो रुरुश्चैव चण्डोऽथ क्रोधभैरवः ॥ ५३ ॥

उन्मत्तभैरवश्चैव कपाली भीषणस्तथा ।
संहारभैरवश्चाष्टभैरवाय नमोऽस्तु ते ॥ ५४ ॥

१५

स्वस्थाना स्वाधिकारा च स्वस्वरूपा स्ववीरका ।
स्वस्वच्छवृक्षतानं न दिव्याक्षं चैव भूमिगाः ॥ ५५ ॥

दशदिक्क्षेत्रपालं च क्षेत्राणि च चतुर्दश ।
पञ्चाशक्षेत्रपालं च क्षेत्रपाल नमोऽस्तु ते ॥ ५६ ॥

१६

नाथनाथ महानाथ आदिनाथ महामते ।
श्रीनाथ सिद्धनाथ मीननाथ नमोऽस्तु ते ॥ ५७ ॥

क्षेत्रनाथ पीठनाथ द्वीपनाथ महात्मने ।
प्रेतनाथ भूतनाथ बढ़नाथ नमोऽस्तु ते ॥ ५८ ॥

त्रिनाथं नवनाथं च षोडशनाथमुत्तमम् ।
सप्तविंशतिपञ्चाशचतुरशीति नमोऽस्तु ते ॥ ५९ ॥

सर्वेषां नाथसिद्धानां मतं चक्षुस्त्वमव्ययम् ।
पोतसद्म तथा वीरस्ततः सर्व नमोस्तु ते ॥ ६० ॥

१७

एकवारं द्विवारं च त्रिवारं यः पठेन्नरः ।
शतमावर्तयेद् येन प्राप्नोति फलमुत्तमम् ॥ ६१ ॥

नाशयेच्छोकचिन्तादि नाशयेद् विघ्नमण्डलम् ।
नाशयेद् रोगकलहान् नाशयेद् दुःखदुष्करम् ॥ ६२ ॥

नाशयेद् भयदारिद्र्यं नाशयेद् रिपुजं भयम् ।
नाशयेदग्निचौरादि नाशयेद् राजकोपजम् ॥ ६३ ॥

नाशयेद् विग्रहं घोरं परकृताभिचारकम् ।
नाशयेद् द्वेषरागादि नाशयेत् सर्वपातकम् ॥ ६४ ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यधनधान्यप्रवर्धनम् ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां यशःसौभाग्यवर्धनम् ॥ ६५ ॥

ऋद्धि सिद्धि श्रियं लक्ष्मीं विद्यां ज्ञानं सुतादि च ।
बुद्धि प्रजां सुमित्राणि वर्धयेच्च दिने दिने ॥ ६६ ॥

नाकाले मरणं चैव उत्पातं नाशयेत् सदा ।
सर्वे रोगाः प्रशाम्यन्ति दीर्घमायुरवाप्यते ॥ ६७ ॥

श्रीपीठस्तवस्तोत्रं समाप्तम् ।

पोतलकाष्टकम्

जय सिद्धसुरासुरलोकगुरुं
कमलासनसंस्थितपादयुगम् ।
दशपारमितादिकपद्मधरं
प्रणमामि सदा वरकारुणिकम् ॥ १ ॥

बहुकोटिनराधिपलब्धवरं
जय सुस्थितसुस्थितनाथमुनिम् ।
भवसागरपारगताधिकरं
शरणागतसत्त्वहितार्थकरम् ॥ २ ॥

कमलासनचारुसुरूपधरं
अमिताभतथागतमौलिधरम् ।
कमलोज्ज्वलभूषितगात्रवरं
नवभास्करशोभनदीप्तिकरम् ॥ ३ ॥

मृदुताम्रनखाङ्गुलिशोभमुखं
शशिबिम्बसमप्रभसौम्यमुखम् ।
षडभिज्ञगुणाकरवन्द्यतनुं
वरसुस्थितनूपुरहारयुतम् ॥ ४ ॥

मणिकुण्डलमण्डितगण्डयुगं
घनगर्जिततुल्यगभीररुतम् ।
गिरिगह्वरद्योतनिवासकृतं
वृषवाहनहंसमृगायुशतम् ॥ ५ ॥

ऋषिदेवगणाधिपसंस्तुतिकं
जिनरूपधरात्मकबोधिपरम् ।
द्विपदोत्तमनाथसुराधिपतिं
बहुसत्त्वविमोचनमुक्तिकरम् ॥ ६ ॥

ध्वजछत्रसुशोभितवामकरं
मलयागिरिचन्दनधूपरतिम् ।
कमलोत्पलपाटलिदामधरं
प्रणमाम्यथ पाटलिवृद्धिकरम् ॥ ७ ॥

ज्वररोगविवर्जितकुष्ठहरं
बहुबोधिमनाघनभद्रकरम् ।
नवदुर्गतिनाशनमार्गप्रदं
करुणा-तथताद्वयविश्वपतिम् ॥ ८ ॥

श्रीआर्यावलोकितेश्वरस्य पोतलकाष्टकं समाप्तम् ।



प्रज्ञापारमितास्तुतिः

ॐ नमः श्रीप्रज्ञापारमितायै

निर्विकल्पे निरालम्बे निरवद्ये निरंजने ।
नित्यानिल्ये निर्विकारे प्रज्ञे देवि नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

बुद्धानां जननीशानि बोधिसत्त्वपितामहि ।
प्रपितामहि सत्त्वानां प्रज्ञे देवि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

मातर्मातर्जगन्मातरिति संजपतां नृणाम् ।
मनोरथप्रदे शुद्धे प्रज्ञे देवि नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

लक्ष्मीस्त्वमसि कल्याणि श्रीर्धीः श्रद्धा धृतिः स्मृतिः ।
सर्वस्वरूपे सर्वेशि प्रज्ञे देवि नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

लोकोत्तरे लौकिके च प्रज्ञापारमितेऽमिते ।
दश पारमिताकारे प्रज्ञे देवि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

श्रीप्रज्ञापारमितास्तुतिः समाप्ता ।

प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्

लक्षा भगवतीकृतम्

ॐ नमः श्रीप्रज्ञापारमितायै

निर्विकल्पे नमस्तुभ्यं प्रज्ञापारमितेऽमिते ।
या त्वं सर्वानवद्याङ्गि निरवद्यैर्निरीक्ष्यसे ॥ १ ॥

आकाशमिव निर्लेपां निष्प्रपञ्चां निरक्षराम् ।
यस्त्वां पश्यति भावेन स पश्यति तथागतम् ॥ २ ॥

तव चार्ये गुणाढ्याया बुद्धस्य च जगद्गुरोः ।
न पश्यन्त्यन्तरं सन्तश्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव ॥ ३ ॥

कृपात्मकां प्रपद्य त्वां बुद्धधर्मपुरस्सराम् ।
सुखेनायान्ति मांहात्म्यमतुलं भक्तवत्सले ॥ ४ ॥

सकृदप्याशये शुद्धे यस्त्वां विधिवदीक्ष्यते ।
तेनापि नियतं सिद्धिः प्राप्यतेऽमोघदर्शने ॥ ५ ॥

सर्वेषामपि वीराणां परार्थे नियतात्मनाम् ।
व्यापिका जगतीमेनां माता त्वमसि वत्सला ॥ ६ ॥

ये बुद्धा लोकगुरवः पुत्रास्तव कृपालवः ।
तेन त्वमसि कल्याणि सर्वसत्त्वपितामही ॥ ७ ॥

सर्वपारमिताभिस्त्वं निर्मलाभिरनिन्दिता ।
चन्द्रलेखेव ताराभिरनुप्रोताऽसि सर्वतः ॥ ८ ॥

विनेयजनमासाद्य तत्र तत्र तथागतैः ।
बहुरूपा त्वमेवैका नानानामभिरीक्ष्यसे ॥ ९ ॥

प्रभां प्राप्येव दीप्तांशोरवश्यायोदविन्दवः ।
त्वां प्राप्य प्रलयं यान्ति दोषावादाश्च वादिनाम् ॥ १० ॥

त्वमेव त्रासजननी बालानां भीमदर्शना ।
आश्वासजननी चापि विदुषां सौम्यदर्शना ॥ ११ ॥

यस्य त्वय्यप्यभिष्वङ्गस्त्वन्नाथस्य न विद्यते ।
तस्याम्ब ! कथमन्यत्र रागद्वेषौ भविष्यतः ॥ १२ ॥

नागच्छसि कुतश्चित्त्वं कुत्रचिन्न च गच्छसि।
स्थानेष्वपि च सर्वेषु विद्वद्भिर्नोपलभ्यसे ॥ १३ ॥

ये त्वामेव न पश्यन्ति प्रपद्यन्ते च भावतः।
प्रपद्य च विमुच्यन्ते तदिदं महदद्भुतम् ॥ १४ ॥

त्वामेव बध्यते पश्यन्नपश्यन्न विबध्यते।
त्वामेव मुच्यते पश्यन्नपश्यन्न विमुच्यते ॥ १५ ॥

अहो विस्मयनीयासि गम्भीरासि यशस्विनी।
सुदुर्बोधासि मायेव दृश्यसे न च दृश्यसे ॥ १६ ॥

बुद्धैः प्रत्येकबुद्धैश्च श्रावकैश्च निषेविते।
मार्गस्त्वमेको मोक्षस्य नास्त्यन्य इति निश्चयः ॥ १७ ॥

व्यवहारं पुरस्कृत्य प्रज्ञप्त्यर्थं शरीरिणाम्।
कृपया लोकनाथैस्त्वमुच्यसे च न चोच्यसे ॥ १८ ॥

शक्तः कस्त्वामिह स्तोतुं निर्निमित्तां निरञ्जनाम्।
सर्वेषां विषयातीता या त्वं क्वचिदनिश्रिता ॥ १९ ॥

सत्येवमपि संवृत्या वाक्यार्थैर्वयमीदृशैः।
त्वामस्तुत्यामपि स्तुत्वा तुष्टुवन्तः सुनिर्वृताः ॥ २० ॥

प्रज्ञापारमितां स्तुत्वा यन्मयोपचितं शुभम्।
तेनास्त्वाशु जगत् कृत्स्नं प्रज्ञापारपरायणम् ॥ २१ ॥

श्रीलक्षाभगवती कृतं प्रज्ञापारमितास्तोत्रं समाप्तम्।

प्रतिसरास्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीप्रतिसरायै

प्रतिसरे ! अमरौघैः पूजितां त्वां नतोऽस्मि
प्रतिपदजनरक्षाकारिणीं सर्वकालम् ।
भृगुदहनसमुद्रापातदुःखे सुरक्षां
रिपुविषभयहर्त्रीं राज्यभोगादिकर्त्रीम् ॥ १ ॥

परिवृतनिजवर्गान् भक्तदत्तापवर्गान्
कलितदुरितवर्गान् मोक्षलाभैकमार्गान् ।
कृतनरसुरसर्गान् कारितानङ्गभङ्गान्
स्तुतिकृतमुनिगर्गान् सर्वरक्षैकसङ्गान् ॥ २ ॥

प्रहृतसकलविघ्ने सर्वलोकैकमान्ये
दशबलकृतधन्ये पञ्चदेवीवरेण्ये ।
विषमपदशरण्ये सर्वदा त्वां नमस्ये
वसित इव अरण्ये दावदग्धे विरस्ये ॥ ३ ॥

सकलजनसुवाञ्छापूरणे कामधेनु-
मभिलषितफलाप्त्यै कल्पवृक्षाग्रवल्लीम् ।
असुरसुरनराद्यैर्वन्दिताङ्घ्र्यब्जयुग्मा-
मुरसि ललितनानारत्नमालादियुक्ताम् ॥ ४ ॥

उडुपतिशतदीप्तां शङ्खकुन्दावदातां
ग्रहभयपरिशान्तां वज्रसत्त्वात्मिकां ताम् ।
श्रवणललितलोले कुण्डले संवहन्तीं
मुकुटमणिशिखाभिः काशितां तां नमामि ॥ ५ ॥

जननि सकलदुःखात्तारणी त्वं प्रसीद
सपदि विगतरक्षां रक्ष मे मातरं च ।
सकरुणरुदितं मां त्वद्दयास्वस्थभूतं
कृतसरसिनिपातां त्वं गतिस्त्वं गतिर्नौ ॥ ६ ॥

पठति प्रतिसरायाः स्तोत्रमेतत्सदा यो
ज्वलनजलविषाणां चोरशार्दूलकानाम् ।
सगदनिधनकानां भीतया नाशयन्ती
प्रतिपदमलभग्नं कामुना धैर्यलाभम् ॥ ७ ॥

निजजनपरियुक्ता धर्मकामार्थवृद्धा
रिपुगणपरिमुक्ता सौख्यमेव प्रभुक्ता ।
ददति विपुलभोग्यं कामदा सर्वदाऽसौ
निहतसकलपापं मोक्षमायान्ति चान्ते ॥ ८ ॥

विगलितनयनाम्बुः साञ्जलिः संविलापी
स्तुतिमिति प्रचकार त्रैभवानां जनन्याः ।
भवतु मम तु संपत् सर्वभावा कृशानो
तनु कुशलसुरक्षा इत्थमेवं सुचित्तः ॥ ९ ॥

विपचतु मयि सर्वं मादृशं कर्म भोग्यं
ससुरनरचयानां भ्रातृमातृद्रुहाणाम् ।
कुरुत कुरुत धैर्यं येन मोक्षं सुलभ्यं
जठरनिलयवासं मास्तु पापं कदाचित् ॥ १० ॥

उदरनरकवासं ये तदा सावतारं
सततशुभसुचेताः साधयिष्यामि बोधिम् ।
कृतजगति सुरक्षां येन कैवल्यप्राप्तिः
इति मुदितसुचेताः कर्मणा दिग्धचित्तः ॥ ११ ॥

प्रतिसर अवतार्यां साम्बिकां मा विलम्ब
अनिशमितिवदन् सो निन्दयन् वै स्वकर्म ।
प्रतिभयविषदिग्धस्तस्थिवानर्भकः सन्
मुहुरिह हि शरण्यां तां स्मरन् सर्वरक्षाम् ॥ १२ ॥

अहो सुधन्या जगदेकमाता प्रक्रान्तदैवा रिपुवर्गभीता ।
यस्याः प्रभावाद्विहितात्यपापात् प्रयाति वह्निर्जलशीतलत्वम् ॥ १३ ॥

प्रभावताहो पुनरेव तस्याः
वह्निं जलं चापि गिरिं स्थलं वै ।
यस्याः स्मृतेनैव सविस्मतीयान्
वैश्वानरः प्राप द्विधाकृतिं ताम् ॥ १४ ॥

गोपाशरीरं ह्लदपातशीतं शैतं त्वनाशार्थमिवाधिकोष्णाम् ।
दैवादिदत्ताभिजने समन्तान्नितान्तदूरादतिपापदत्ताम् ॥ १५ ॥

श्रीभद्रकल्पावदानोद्धृतं यशोधरागर्भस्थबालकृतं
प्रतिसरास्तोत्रं समाप्तम् ।

बुद्धगण्डीस्तवः

आचार्य-अश्वघोषकृतः

यः पूर्वं बोधिमूले रविगमनपथे मारगान्नृत्यगीतान्
गंगौ गंगौ गगंगौ घघनघनमृदुद्वन्द्वमन्त्रैरजस्त्रैः ।
यः स्त्रीभिर्दिव्यरूपैरुपरतरभितुं दूदुभिर्दुभिर्दूभिः
क्षोभं नैवाभियातः सुरनरनमितः पातु वः शाक्यसिंहः ॥ १ ॥

यः कन्दर्पाङ्गनानां कककहकहकहा हाहहेति प्रहासै-
र्यैः स्फीताडम्बराणां तटिति तटतटा तातटीति प्रलापैः ।
कुत्कुद् बुद्बुद् कुंकूचित् कुकुहकुहकुहैः किङ्कराणां च वाग्भि-
र्नो त्रस्तः सोऽस्तु सौम्यः श्रुतसकलमलः शान्तये वो मुनीन्द्रः ॥ २ ॥

भ्रूक्षेपापाङ्गभङ्गैः स्मरशरविलसत्पक्ष्मताराक्षिपातैः
प्रौढानङ्गाङ्गनानां ललितभुजलतालास्यलीलायिताङ्गैः ।
सव्रीडैः सस्मितोक्तैः कलमृदुमधुरामोदरम्यैर्वचोभि-
र्भ्रान्तिं चेतो न चित्रं स्मरबलजयिनो यस्य तस्मै नमोऽस्तु ॥ ३ ॥

उर्वीं सञ्चालयन्तः खरशरनिकरैश्छादयन्तोऽन्तरीक्षं
ज्वालाभिः क्रोधवह्नेर्ज्वलितदशदिशः क्षोभयन्तोऽम्बुराशिम् ।
हेलोत्खातासिचक्रक्रकचपटुरवाराविणो मारवीराः
मैत्रीशस्त्रेण येन प्रसभमभिजिताः पातु वः सो मुनीन्द्रः ॥ ४ ॥

विस्फूर्जज्जातकोपप्रकटितविकटाटोपनिर्घोषघोरं
गर्जज्जीमूतजालप्रकटगजघटाटोपबद्धान्धकारम् ।
कन्दर्पोद्दामवह्निस्फुरदसिकिरणोद्भासिताशेषविश्वं
पुष्पेषोः सैन्यमुच्चैर्झटिति विघटितं येन बुद्धः स वोऽव्यात् ॥ ५ ॥

दिव्यैराकर्णपूरैः कमलदलनिभैः पक्ष्मलैर्लोलतारै-
र्भाविस्निग्धैर्विदग्धैः प्रचलितललितैः सस्मितैर्भ्रूविलासैः ।
नेत्रैर्माराङ्गनानां परिगतवलयैर्लोहितान्तैरशान्तै-
र्नाकृष्टः सर्वथा यस्तमहमृषिवरं वान्तदोषं नमामि ॥ ६ ॥

नोद्भ्रान्तं यस्य चित्तं स्फुटविकटसटान्तोत्कटैर्लोलजिह्वै-
र्मारैः शूलाग्रहस्तैर्गजतुरगमुखैः सिंहशार्दूलवक्त्रैः।
प्रद्युम्नः कामदेवस्तृणवदगणितो येन संरम्भभीरुः
संबुद्धः पातु युष्मान् व्यपगतकलुषो लोकनाथो मुनीन्द्रः ॥ ७ ॥

अक्षोभ्या यस्य बुद्धिर्धरणिनगनदीसागराम्भोधरद्भि-
र्गर्जद्भिर्मारवीरैर्विविधमुखशतैर्घोररूपैरनन्तैः ।
येनासौ पुष्पकेतुस्तृणवदगणितः सर्वविद् वीतरागः
स श्रीमान् बुद्धवीरः कलुषभयहरः पातु वो वीतरागः ॥ ८ ॥

मारानीकैर्महोग्रैरसिपरशुधनुःशक्तिशूलाग्रहस्तै-
रुल्कापातैरनेकैर्गहनपटुरवैर्भीषणैर्भीमनादैः ।
न क्षुब्धं यस्य चित्तं गिरिसममचलं गाढपर्यङ्कबन्धं
तं वन्दे वन्दनीयं त्रिभवभयहरं बुद्धवीरं प्रवीरम् ॥ ९ ॥

उच्चैरट्टाट्टहासैः प्रकटपटुभटाबद्धघण्टै रणद्भिः
साटोपास्फोटटङ्कस्फुटजटिलजटैः किङ्करैः कोटराक्षैः ।
भग्नं कर्तुं न शक्ताः पटुपटहपटस्फालनैर्यस्य बोधौ
दृप्तानां गृध्रकूटे पटुपटहपटुः सोऽस्तु वो बुद्धवीरः ॥ १० ॥

कोकण्डं रामकण्डं प्रतिभयकुहरं दर्पदर्पं रणाण्डं
डिम्बं डिम्बं डडिम्बं डुहु डुहुक डुहं तृंखलस्तृंखलस्तृम् ।
झिम्बं झिम्बं झझिम्बं खमु खमु खमुखं मंखु मंखुः खुमंखु-
रेभिर्ध्वनिर्नैर्भीतः सुरवरनमितः पातु वः शाक्यसिंहः ॥ ११ ॥

यं माराङ्गारधाराधरसमयसमारम्भसंरम्भयुक्तं
नक्तं माराङ्गनानां मुखकमलवनश्रीविपक्षैकपक्षा ।
सम्यक्संबोधिलक्ष्मीः शशिनमिव शरत्कौमुदी संप्रपेदे
तस्येयं धर्मदूती ध्वनति भगवतो धर्मराजस्य गण्डी ॥ १२ ॥

निघ्नन्नप्राप्तदृष्टिः क्षणमपि च चिरादन्तको यद् दुरन्तं
तस्मिन्निक्षिप्तचित्ताः कुरुत सुचरितेष्वादरं सर्वकाले ।
इत्थं रत्नत्रयाज्ञामिव वदति मुहुः प्राणिनां यस्य सैषा-
मेषा शब्दायमाना प्रथितमुखरदिङ्मण्डला धर्मगण्डी ॥ १३ ॥

मार्तण्डमण्डलमिवोडुगणं विजित्य
भातीह तीर्थिकजनं जिनशासनं च ।
रंरम्यते धरणिमण्डलमण्डनस्य
गण्डी यमस्य जयडिण्डिमवत्प्रचण्डा ॥ १४ ॥

यस्यात्यन्तं दृढत्वं जमि जमि डुडुभं रञ्जितेनालिनालिं
डिम्बं डिम्बं डिडिम्बं डुभडुभडुडुभं नाडिवन्नाडिभण्डम् ।
रुण्डं रुण्डं रुरुण्डं यरलव खखुमं मंखुमंखुः खुमंखुः
पश्य त्वं जीवलोके दशबलबलिनः पीड्यते मारसैन्यम् ॥ १५ ॥

भूकम्पोत्कम्पजाता प्रचलितवसुधा कम्पते मेरुराज
उत्त्रस्ता देवसंघा ग्रहगणसहिता नागराजाः समस्ताः ।
श्रुत्वा गण्डीं प्रचण्डां विविधभयकरीं त्रासनीं तैर्थिकानां
बौद्धानां शान्तिहेतोः प्रतिरणति महीं रावयन्तीव सद्यः ॥ १६ ॥

एषा विहारशिखरे प्रविरौति गण्डी
मेघस्वनेन कुरुते च मनोज्ञघोषान् ।
मातेव वत्सलतया सुबहिर्गतांश्च
पुत्रान् समाह्वयति भोजनकालगण्डी ॥ १७ ॥

संसारचक्रपरिवर्तनतत्परस्य
बुद्धस्य सर्वगुणरत्नविभूषितस्य ।
नादं करोति सुरदुन्दुभितुल्यघोषा
गण्डी समस्तदुरितानि निवारयन्ती ॥ १८ ॥

एषा हि गण्डी रणते नराणां
संबोधिनी देवनरासुराणाम् ।
भद्राः शृणुध्वं सुगतस्य गण्डी-
मापूरितां भिक्षुगणैः समग्रैः ॥ १९ ॥

नागैः संवर्तकालक्षुभितजलधराकारवद् व्योम्नि कीर्णैः
क्वास्मिन् विध्वंसशङ्का भयचकितजनैस्तत्प्रतीकारहेतोः ।
कुर्वन्त्यद्यापि यस्या ध्वनिमुपशमिताशेषतीर्थ्यावलेपं
सा गण्डी पातु युष्मान् सकलमुनिवरैः स्थापिता धर्मवृद्ध्यै ॥ २० ॥

एषा सुरासुरमहोरगसत्कृतस्य
शान्तिं परामुपगतस्य तथागतस्य ।
गण्डी रणत्यमरदुन्दुभितुल्यघोषान्
कृत्वान्यतीर्थ्यहृदयानि विदारयन्ती ॥ २१ ॥

पुण्ये तत्परमानसा भवत भोः स्वर्गापवर्गप्रदे
पापं दुर्गतिदायकं कुरुत मा लोकाश्चलं जीवितम् ।
इत्थं मध्यविलीनभृङ्गविरुतं यत्नान्निवार्यं मया
मारारेश्चरणाब्जयोर्विनिहितः पुष्पाञ्जलिः पातु वः ॥ २२ ॥

मुञ्चद्भिः कुसुमानि तूर्यरणितैरापूरयद्भिर्दिशो
जोजोकारपुरःसरैः सुरगणैः शक्रादिभिः सादरैः ।
स्वर्गाद् यस्य भुवं किलावतरतो दत्तानुयात्रा चिरं
तस्याव्यात् करुणानिधेर्भगवतो गण्डी प्रचण्डा जगत् ॥ २३ ॥

गत्वा सप्त पदानि मातुरुदरान्निष्क्रान्तमात्रः स्वयं
संसारश्चवसं ममेति वचनं प्रोवाच योऽनन्यधीः ।
यस्मिन्नात्मभुवे पुनस्त्रिभुवनं भ्राजिष्ण्वभिव्याहृतं
कुर्याद्वः सुगतस्य तस्य जयिनो गण्डी तमःखण्डिनी ॥ २४ ॥

जित्वा मारबलं महाभयकरं कृत्वा च दोषक्षयं
सर्वज्ञं पदमाप यत् सुरुचिरं तत्रैव रात्रौ बहिः ।
तस्याशेषगुणाकरस्य सुधियो बुद्धस्य शुद्धात्मनो
गण्डी खण्डितचण्डकिल्विषहरा भूयाद् विभूत्यै नृणाम् ॥ २५ ॥

ब्रह्मा जिह्म इवाभवत् सुरगुरुर्गर्वं जहौ सर्वथा
शर्वः खर्वमतिर्बभूव भगवान् विष्णुश्च तूष्णीं स्थितः ।
इत्थं यद्गुणकीर्तनेषु विबुधा याता ह्रिया मूकतां
गण्डी तस्य मुनेरियं जयति वः पायादपायाज्जगत् ॥ २६ ॥

ब्रह्मादित्यशशाङ्कशङ्करशताक्षोपेन्द्रयक्षादयो
गन्धर्वोरगकिन्नरासुरसमीरप्रेतपीडाम्बराः ।
ये तिष्ठन्त्यमरा नरा क्षितितले पाताललोकेषु च
श्रोतुं धर्ममिमं तथागतगुरोः सर्वे समायान्तु ते ॥ २७ ॥

यस्या जन्मनि दीनहीनमतयः प्रापुः शुचं तीर्थिकाः
हर्षोत्कर्षविशेषवर्धितधियो बौद्धा धृतिं लेभिरे ।
यामासाद्य गुणाः प्रयान्ति विर्तातं दोषा व्रजन्ति क्षयं
सा गण्डी कलिकालकल्मषहरा भूयाद् भवद्भूतये ॥ २८ ॥

यां नत्वा विधिवद् विशुद्धमतयो गच्छन्ति तुङ्गां गतिं
यस्याः क्षिप्रतरं प्रयान्ति विवशाः सर्वे विपक्षाः क्षयम् ।
ध्वस्तव्यस्तसमस्तमोहपटला सा धर्मगण्डी मुनेः
संभूयाद् भवभाविसाध्वसभिदे युष्माकमायुष्मताम् ॥ २९ ॥

श्रुत्वा यां पतिता महीतलमलं ब्रह्मादयः स्वर्भुवः
कम्पन्ते धरणीधराः क्षितिरपि क्षिप्रं गता क्ष्मातलम् ।
तीर्थ्यानां भयकारिणी परहितायारम्भशुद्धात्मनां
बौद्धानामुपशान्तये सपदि सा संताड्यतां गण्डिका ॥ ३० ॥

प्रौढालीढाभिरूढो गुरुतरचरणक्रान्तगौरीस्तनाग्रं
सर्वज्ञस्योत्तराङ्गं स्फुटविकटशता गर्जयन् वज्रमुख्या ।
ज्वालामालोज्ज्वलाङ्गं त्रिभुवनविवरव्याप्तहुंकारभीमो
बद्धव्याबद्धमौलिर्जयति सुरनरादित्यचन्द्रासुरेन्द्रः ॥ ३१ ॥

पीनोत्तुङ्गस्तनीनां हरिणदृशदृशां हंसलीलागतीनां
दं दं दं दं द दं दं तनि तनि तनितस्तालिका कामिनीनाम् ।
तुं तुं तुं तुं ततुं तुं नकटिनमभितो गीतितो गीतवाद्यैः
टुं टुं टुं टुं ट्टुटुं टुं टुमिति मितनता हन्यते गण्डिकेयम् ॥ ३२ ॥

बुद्धगण्डी समाप्ता ।

कृतिरियमाचार्यश्री-अश्वघोषपादानाम् ।



बुद्धभट्टारकस्तोत्रम्

ॐ नमो बुद्धाय

संबुद्धं पुण्डरीकाक्षं सर्वज्ञं करुणात्मकम् ।
समन्तभद्रं शास्तारं शाक्यसिंहं नमाम्यहम् ॥ १ ॥

श्रीघनं श्रीमतिं श्रेष्ठं शीतरश्मिं शिवंकरम् ।
श्रीमन्तं श्रीकरं शान्तं शान्तमूर्तिं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

नैरात्म्यवादिनमिन्दुं निरवद्यं निराश्रयम् ।
श्रुतिज्ञं निर्मलात्मानं निस्थूलकं नमाम्यहम् ॥ ३ ॥

निरोधकं नित्यज्ञानं निर्विकल्पं तथागतम् ।
नियतं निधिनाकेशं निष्प्रपञ्चं नमाम्यहम् ॥ ४ ॥

विश्वेश्वरं विमुक्तिज्ञं विश्वरूपं विनायकम् ।
विश्वब्रह्म सुसम्पन्नं वीतरागं नमाम्यहम् ॥ ५ ॥

विद्याचरणसंपन्नं विश्वेशं विमलप्रभम् ।
विनिमज्ञं सविष्टम्भं वीतमोहं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

दुर्दान्तदमकं शान्तं शुद्धं शौद्धोदनिं मुनिम् ।
सुगतं सुगतिं सौम्यं शुभ्रकीर्तिं नमाम्यहम् ॥ ७ ॥

योगेश्वरं दशबलं लोकज्ञं लोकपूजितम् ।
लोकाचार्यं लोकमूर्तिं लोकनाथं नमाम्यहम् ॥ ८ ॥

कनकमूर्तिं कर्माब्धिमकलङ्कं कलाधरम् ।
कान्तमूर्तिं दयापात्रं कनकाभं नमाम्यहम् ॥ ९ ॥

महामतिं महावीर्यं महाविज्ञं महाबलम् ।
महामहं महाधैर्यं महाबाहुं नमाम्यहम् ॥ १० ॥

आद्यं पवित्रं तद्ब्रह्मापराजितमद्भुतम् ।
आर्यं परहितं नाथममिताभं नमाम्यहम् ॥ ११ ॥

देवदेवं महादेवं दिव्यं वन्दितमव्ययम् ।
प्रमाणभूतं देवेशं दिव्यरूपं नमाम्यहम् ॥ १२ ॥

परमार्थं परज्योतिं परमं परमेश्वरम् ।
भावाभावकरं श्रेष्ठं भगवन्तं नमाम्यहम् ॥ १३ ॥

चतुर्मारादिविजितं तत्त्वज्ञं शंकरं शिवम् ।
तत्त्वसारं सदाचारं सार्थवाहं नमाम्यहम् ॥ १४ ॥

जितेन्द्रियं जितक्लेशं जिनेन्द्रं पुरुषोत्तमम् ।
उत्तमं सत्पदं ब्रह्म पुण्यक्षेत्रं नमाम्यहम् ॥ १५ ।

एतैः स्तुत्वा मुनिश्रेष्ठं नरा विगतकल्मषाः ।
प्राप्नुवन्ति पदं मोक्षं दिव्यं त्वथ सनातनम् ॥ १६ ॥

यस्त्विदं पठते नित्यं प्रातरुत्थाय पण्डितः ।
नाम्नामष्टोत्तरशतं पवित्रं पापनाशनम् ॥ १७ ॥

लभते चेप्सितान् भोगान् सौमनस्येन वर्णितान् ।
व्याधयोऽपि न बाध्यन्ते पातकं च विनश्यति ॥ १८ ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यसर्वमोक्षसमन्वितः ।
मेधावी च तथा वाग्मी जायते जन्मजन्मनि ॥ १९ ॥

बुद्धभट्टारकस्य ब्रह्माविरचितं स्तोत्रं समाप्तम् ।

बुद्धस्तोत्रम्

ॐ नमो बुद्धाय

नमोऽस्तु बुद्धाय विशुद्धबोधये
विशुद्धधर्मप्रतिभासबुद्धये ।
सद्धर्मपुण्योपगतानुबुद्धये
भवाग्रशून्याय विशुद्धबुद्धये ॥ १ ॥

अहो अहो बुद्धमनन्ततेजसं
अहो अहो सागरमेरुगुल्मम् ।
अहो अहो बुद्धमनन्तगोचरम्
औदुम्बरं पुष्पमिवातिदुर्लभम् ॥ २ ॥

अहो महाकारुणिकस्तथागतः
अहो अहो शाक्यकुलस्य केतुः ।
अहो प्रणम्यः स नरेन्द्रसूर्यो
येनेदृशं भाषितसूत्रमुत्तमम् ॥ ३ ॥

अनुग्रहार्थं स हि सर्वसत्त्वान्
सद्धर्मचर्यामुपदिश्य नूनम् ।
शान्तेश्वरः शाक्यमुनिस्तथागतः
सत्त्वोत्तमः शान्तपुरं प्रविष्टः ॥ ४ ॥

गम्भीरशान्तं विरजासमाधि-
पदं प्रविष्टे जिनबुद्धगोचरे ।
शून्याश्च कायास्त्वथ श्रावकाणां
शून्या विहारा द्विपदोत्तमानाम् ॥ ५ ॥

ते सर्वधर्मा प्रकृतिश्च शून्या
सत्त्वा हि शून्या नहि जातु विद्यते ॥ ६ ॥

नित्यं च नित्यं च जिनं स्मरामि
नित्यं च शोचामि जिनस्य दर्शनम् ।
नित्यं च नित्यं प्रणिधिं करोमि
संबुद्धपूज्यस्य च दर्शनार्थम् ॥ ७ ॥

स्थाप्येह नित्यं धरणीषु जानु
शोकाभितप्तो जिनदर्शनाय ।
ओदन्तकारुण्यविनायकस्त्व-
मतीव तृष्णा सुगतस्य दर्शने ॥ ८ ॥

सतां वरो यद्विजहार नित्यं
ददाहि मे दर्शनतोयशीतलम् ।
सत्त्वाः सतृष्णास्तव रूपदर्शने
प्रह्लादयैनान् करुणाजलेन ॥ ९ ॥

कारुण्यभावं कुरु नाथ नायक
ददाहि मे दर्शनं सौम्यरूपम् ।
त्वं पाहि त्रातर्जगदेकदेशिता
शून्याश्च कायास्त्वथ श्रावकाणाम् ॥ १० ॥

आकाशतुल्या गगनस्वभावा
मायामरीच्योदकचन्द्रकायाः ।
सर्वे च सत्त्वाः सुखितस्वभावा
भवन्तु भो नायक त्वत्प्रसादात् ॥ ११ ॥

बोधिसत्त्वसमुच्चयानाम कुलदेवताविरचितं
बुद्धस्तोत्रं समाप्तम् ॥

●

भद्रचरीप्रणिधानस्तोत्रम्

अथ खलु समन्तभद्रो बोधिसत्त्वो महासत्त्वः एवमेव लोकधातुपरम्परानभि-लाप्यानभिलाप्य बुद्धक्षेत्रपरमाणुरजःसमान् कल्पान् कल्पप्रसरानभिद्योत्यमानो भूयस्या मात्रया गाथाभिगीतेन प्रणिधानमकार्षीत्—

यावत केचि दशद्दिशि लोके सर्वत्रियध्वगता नरसिंहाः।
तानहु वन्दमि सर्वि अशेषान् कायतु वाच मनेन प्रसन्नः ॥ १ ॥

क्षेत्ररजोपमकायप्रमाणैः सर्वजिनान करोमि प्रणामम्।
सर्वजिनाभिमुखेन मनेन भद्रचरीप्रणिधानबलेन ॥ २ ॥

एकरजाग्रि रजोपमबुद्धा बुद्धसुतान निषण्णकु मध्ये।
एवमशेषत धर्मतधातुं सर्वधिमुच्यमि पूर्णजिनेभि ॥ ३ ॥

तेषु च अक्षयवर्णसमुद्रान् सर्वस्वराङ्गसमुद्ररुतेभिः।
सर्वजिनान गुणान् भणमानस्तान् सुगतान् स्तवमी अहु सर्वान् ॥ ४ ॥

पुष्पवरेभि च माल्यवरेभिर्वाद्यविलेपनछत्रवरेभिः।
दीपवरेभि च धूपवरेभिः पूजन तेष जिनान करोमि ॥ ५ ॥

वस्त्रवरेभि च गन्धवरेभिश्चूर्णपुटेभि च मेरुसमेभिः।
सर्वविशिष्टवियूहवरेभिः पूजन तेष जिनान करोमि ॥ ६ ॥

या च अनुत्तरपूज उदारा तानधिमुच्यमि सर्वजिनानाम्।
भद्रचरी अधिमुक्तिबलेन वन्दमि पूजयमी जिनसर्वान् ॥ ७ ॥

यच्च कृतं मयि पापु भवेय्या रागतु द्वेषतु मोहवशेन।
कायतु वाच मनेन तथैव तं प्रतिदेशयमो अहु सर्वम् ॥ ८ ॥

यच्च दशद्दिशि पुण्य जगस्य शैक्ष अशैक्षप्रत्येकजिनानाम्।
बुद्धसुतानथ सर्वजिनानां तं अनुमोदयमी अहु सर्वम् ॥ ९ ॥

ये च दशद्दिशि लोकप्रदीपा बोधिविबुद्ध असंगतप्राप्ताः।
तानहु सर्वि अध्येषमि नाथान् चक्रु अनुत्तरु वर्तनतायै ॥ १० ॥

येऽपि च निर्वृति दर्शितुकामास्तानभियाचमि प्राञ्जलिभूतः ।
क्षेत्ररजोपमकल्प निहन्तु सर्वजगस्य हिताय सुखाय ॥ ११ ॥

वन्दनपूजनदेशनताय मोदनध्येषणयाचनताय ।
यच्च शुभं मयि संचितु किंचिद्बोधयि नामयमी अहु सर्वम् ॥ १२ ॥

पूजित भोन्तु अतीतक बुद्धा ये च ध्रियन्ति दशद्दिशि लोके ।
ये च अनागत ते लघु भोन्तु पूर्णमनोरथ बोधिविबुद्धाः ॥ १३ ॥

यावत केचि दशद्दिशि क्षेत्रास्ते परिशुद्ध भवन्तु उदाराः ।
बोधिद्रुमेन्द्रगतेभि जिनेभिर्बुद्धसुतेभि च भोन्तु प्रपूर्णाः ॥ १४ ॥

यावत केचि दशद्दिशि सत्त्वास्ते सुखिता सद भोन्तु अरोगाः ।
सर्वजगस्य च धर्मिकु अर्थो भोन्तु प्रदक्षिणु ऋध्यतु आशाः ॥ १५ ॥

बोधिचरिं च अहं चरमाणो भवि जातिस्मरु सर्वगतीषु ।
सर्वसु जन्मसु च्युत्युपपत्ती प्रव्रजितो अहु नित्यु भवेय्या ॥ १६ ॥

सर्वजिनाननुशिक्षयमाणो भद्रचरिं परिपूरयमाणः ।
शीलचरिं विमलां परिशुद्धां नित्यमखण्डमछिद्र चरेयम् ॥ १७ ॥

देवरुतेभि च नागरुतेभिर्यक्षकुम्भाण्डमनुष्यरुतेभिः ।
यानि च सर्वरुतानि जगस्य सर्वरुतेष्वहु देशयि धर्मम् ॥ १८ ॥

ये खलु पारमितास्वभियुक्तो बोधियि चित्तु न जातु विमुह्येत् ।
येऽपि च पापक आवरणायास्तेषु परिक्षयु भोतु अशेषम् ॥ १९ ॥

कर्मतु क्लेशतु मारपथातो लोकगतीषु विमुक्तु चरेयम् ।
पद्म यथा सलिलेन अलिप्तः सूर्यशशी गगनेव असक्तः ॥ २० ॥

सर्वि अपायदुखां प्रशमन्तो सर्वजगत् सुखि स्थापयमानः ।
सर्वजगस्य हिताय चरेयं यावत क्षेत्रपथा दिशतासु ॥ २१ ॥

सत्त्वचरिं अनुवर्तयमानो बोधिचरिं परिपूरयमाणः ।
भद्रचरिं च प्रभावयमानः सर्वि अनागतकल्प चरेयम् ॥ २२ ॥

ये च सभागत मम चर्यये तेभि समागमु नित्यु भवेय्या ।
कायतु वाचतु चेतनतो वा एकचरि प्रणिधान चरेयम् ॥ २३ ॥

येऽपि च मित्रा मम हितकामा भद्रचरीय निदर्शयितारः।
तेभि समागमु नित्यु भवेय्या तांश्च अहं न विरागयि जातु ॥ २४ ॥

संमुख नित्यमहं जिन पश्ये बुद्धसुतेभि परीवृतु नाथान्।
तेषु च पूज करेयु उदारां सर्वि अनागतकल्पमखिन्नः ॥ २५ ॥

धारयमाणु जिनान सद्धर्मं बोधिचर्रि परिदीपयमानः।
भद्रचर्रि च विशोधयमानः सर्वि अनागतकल्प चरेयम् ॥ २६ ॥

सर्वभवेषु च संचरमाणः पुण्यतु ज्ञानतु अक्षयप्राप्तः।
प्रज्ञउपायसमाधिविमोक्षैः सर्वगुणैर्भवि अक्षयकोशः ॥ २७ ॥

एकरजाग्रि रजोपमक्षेत्रा तत्र च क्षेत्रि अचिन्तियबुद्धान्।
बुद्धसुतान निषण्णकु मध्ये पश्यिय बोधिचर्रि चरमाणः ॥ २८ ॥

एवमशेषत सर्वदिशासु बालपथेषु त्रियध्वप्रमाणान्।
बुद्धसमुद्र थ क्षेत्रसमुद्रानोतरि चारिककल्पसमुद्रान् ॥ २९ ॥

एकस्वराङ्गसमुद्ररुतेभिः सर्वजिनान स्वराङ्गविशुद्धिम्।
सर्वजिनान यथाशयघोषान् बुद्धसरस्वतिमोतरि नित्यम् ॥ ३० ॥

तेषु च अक्षयघोषरुतेषु सर्वत्रियध्वगतान जिनानाम्।
चक्रनयं परिवर्तयमानो बुद्धिबलेन अहं प्रविशेयम् ॥ ३१ ॥

एकक्षणेन अनागतसर्वान् कल्पप्रवेश अहं प्रविशेयम्।
येऽपि च कल्प त्रियध्वप्रमाणास्तान् क्षणकोटिप्रविष्ट चरेयम् ॥ ३२ ॥

ये च त्रियध्वगता नरसिंहास्तानहु पश्यिय एकक्षणेन।
तेषु च गोचरिमोतरि नित्यं मायगतेन विमोक्षबलेन ॥ ३३ ॥

ये च त्रियध्वसुक्षेत्रवियूहास्तानभिनिर्हरि एकरजाग्रे।
एवमशेषत सर्वदिशासु ओतरि क्षेत्रवियूह जिनानाम् ॥ ३४ ॥

ये च अनागत लोकप्रदीपास्तेषु विबुध्यन चक्रप्रवृत्तिम्।
निर्वृतिदर्शननिष्ठ प्रशान्ति सर्वि अहं उपसंक्रमि नाथान् ॥ ३५ ॥

ऋद्धिबलेन समन्तजवेन ज्ञानबलेन समन्तमुखेन।
चर्यबलेन समन्तगुणेन मैत्रबलेन समन्तगतेन ॥ ३६ ॥

पुण्यबलेन समन्तशुभेन ज्ञानबलेन असङ्गगतेन।
प्रज्ञउपायसमाधिबलेन बोधिबलं समुदानयमानः॥ ३७॥

कर्मबलं परिशोधयमानः क्लेशबलं परिमर्दयमानः।
मारबलं अबलं करमाणः पूरयि भद्रचरीबल सर्वान्॥ ३८॥

क्षेत्रसमुद्र विशोधयमानः सत्त्वसमुद्र विमोचयमानः।
धर्मसमुद्र विपश्ययमानो ज्ञानसमुद्र विगाहयमानः॥ ३९॥

चर्यसमुद्र विशोधयमानः प्रणिधिसमुद्र प्रपूरयमाणः।
बुद्धसमुद्र प्रपूजयमानः कल्पसमुद्र चरेयमखिन्नः॥ ४०॥

ये च त्रियध्वगतान जिनानां बोधिचरिप्रणिधानविशेषाः।
तानहु पूरयि सर्वि अशेषात् भद्रचरीय बिबुध्यिय बोधिम्॥ ४१॥

ज्येष्ठकु यः सुतु सर्वजिनानां यस्य च नाम समन्ततभद्रः।
तस्य विदुस्य सभागचरीये नामयमी कुशलं इमु सर्वम्॥ ४२॥

कायतु वाच मनस्य विशुद्धिश्चर्यविशुद्ध्यथ क्षेत्रविशुद्धिः।
यादृशनामन भद्रविदुस्य तादृश भोतु समं मम तेन॥ ४३॥

भद्रचरीय समन्तशुभाये मञ्जुशिरिप्रणिधान चरेयम्।
सर्वि अनागत कल्पमखिन्नः पूरयि तां क्रिय सर्वि अशेषाम्॥ ४४॥

नो च प्रमाणु भवेय्य चरीये नो च प्रमाणु भवेय्य गुणानाम्।
अप्रमाणु चरियाय स्थिहित्वा जानमि सर्वि विकुर्वितु तेषाम्॥ ४५॥

यावत निष्ठ नभस्य भवेय्या सत्त्व अशेषत निष्ठ तथैव।
कर्मतु क्लेशतु यावत निष्ठा तावत निष्ठ मम प्रणिधानम्॥ ४६॥

ये च दशद्दिशि क्षेत्र अनन्ता रत्नअलंकृतु दद्यु जिनानाम्।
दिव्य च मानुष सौख्यविशिष्टां क्षेत्ररजोपम कल्प ददेयम्॥ ४७॥

यश्च इमं परिणामनराजं श्रुत्व सकृज्जनयेदधिमुक्तिम्।
बोधिवरामनुप्रार्थयमानो अग्रु विशिष्ट भवेदिमु पुण्यम्॥ ४८॥

वर्जित तेन भवन्ति अपाया वर्जित तेन भवन्ति कुमित्राः।
क्षिप्रु स पश्यति तं अमिताभं यस्यिमु भद्रचरि प्रणिधानम्॥ ४९॥

लाभ सुलब्ध सुजीवितु तेषां स्वागत ते इमु मानुषजन्म।
यादृशु सो हि समन्ततभद्रस्तेऽपि तथा नचिरेण भवन्ति॥ ५०॥

पापक पञ्च अनन्तरियाणि येन अज्ञानवशेन कृतानि।
सो इमु भद्रचरिं भणमानः क्षिप्रु परिक्षयु नेति अशेषम्॥ ५१॥

ज्ञानतु रूपतु लक्षणतश्च वर्णतु गोत्रतु भोतिरुपेतः।
तीर्थिकमारगणेभिरधृष्यः पूजितु भोति स सर्वत्रिलोके॥ ५२॥

क्षिप्रु स गच्छति बोधिद्रुमेन्द्रं गत्व निषीदति सत्त्वहिताय।
बुद्ध्यति बोधि प्रवर्तयि चक्रं धर्षति मारु ससैन्यकु सर्वम्॥ ५३॥

यो इमु भद्रचरिप्रणिधानं धारयि वाचयि देशयितो वा।
बुद्धविजानति योऽत्र विपाको बोधि विशिष्ट म काङ्क्ष जनेथ॥५४॥

मञ्जुशिरी यथ जानति शूरः सो च समन्ततभद्र तथैव।
तेषु अहं अनुशिक्षयमाणो नामयमी कुशलं इमु सर्वम्॥ ५५॥

सर्वत्रियध्वगतेभि जिनेभिर्या परिणामन वर्णित अग्रा।
ताय अहं कुशलं इमु सर्वं नामयनी वर भद्रचरीये॥ ५६॥

कालक्रियां च अहं करमाणो आवरणान् विनिर्वर्तिय सर्वान्।
संमुख पश्यिय तं अमिताभं तं च सुखावतिक्षेत्र व्रजेयम्॥ ५७॥

तत्र गतस्य इमि प्रणिधाना आमुखि सर्वि भवेय्यु समग्रा।
तांश्च अहं परिपूर्य अशेषान् सत्त्वहितं करियावत लोके॥ ५८॥

तहि जिनमंडलि शोभनिरम्ये पद्मवरे रुचिरे उपपन्नः।
व्याकरणं अहु तत्र लभेय्या संमुखतो अमिताभजिनस्य॥ ५९॥

व्याकरणं प्रतिलभ्य च तस्मिन् निर्मित कोटिशतेभिरनेकैः।
सत्त्वहितानि बहून्यहु कुर्यां दिक्षु दशस्वपि बुद्धिबलेन॥ ६०॥

भद्रचरिप्रणिधान पठित्वा यत्कुशलं मयि संचितु किंचित्।
एकक्षणेन समृध्यतु सर्वं तेन जगस्य शुभं प्रणिधानम्॥ ६१॥

भद्रचरिं परिणाम्य यदाप्तं पुण्यमनन्तमतीव विशिष्टम्।
तेन जगद्व्यसनौघनिमग्नं यात्वमिताभपुरिं वरमेव॥ ६२॥

श्री भद्रचरीप्राणिधानस्तोत्रं समाप्तम्।

मङ्गलषोडशस्तुतिः

ॐ नमः समन्तभद्राय

येन पुण्याटवीस्थेनानेके शासनवर्तिनः ।
दिवोदासादयो भूपाः स नो रक्षतु मारजित् ॥ १ ॥

लोकानां ग्रहबद्धानां रक्षार्थं पुण्यकानने ।
ग्रहानदमयद् यो वै स नो रक्षतु तद्भयात् ॥ २ ॥

काश्यपाद्यान् महर्षींस्तान् आनन्दाद्यांश्च ब्राह्मणान् ।
प्राव्राजयत् सुमुक्त्यर्थं स नो रक्षतु मुक्तिदः ॥ ३ ॥

सौवर्णधान्यदानेन दीनं विप्रमपालयत् ।
दुर्भिक्षभयतो नित्यं स नो रक्षतु शाक्यराट् ॥ ४ ॥

यो मैत्रकन्यको भूत्वा मातृद्रोहिणमत्यगात् ।
चक्रं दूरीकृतं येन स नो रक्षतु मातृवान् ॥ ५ ॥

सुप्रियो बदरद्वीपयात्राप्तमणिवृष्टिभिः ।
काशीयान् प्राकरोदाढ्यान् स नो रक्षतु काञ्चनैः ॥ ६॥

भूत्वा यः सुधनो नाम निधानं समदर्शयत् ।
दारिद्र्यदुःखतो नित्यं स नो रक्षतु सर्ववित् ॥ ७ ॥

कुष्ठादिरोगहरणे राजगृहमुपाविशत् ।
तत्तद्रोगभयान्नित्यं स नो रक्षतु धर्मराट् ॥ ८ ॥

यः कुशो भूपतिर्भूत्वाऽष्टमीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
प्रकाशयन्निजे देहे स नो रक्षतु धर्मवित् ॥ ९ ॥

सौदासं सत्यवचसा काश्यामस्थापयन्नृपान् ।
बन्धनान्मोचयामास स नो रक्षतु सर्ववित् ॥ १० ॥

गोपान् ररक्ष यो देव्याः प्रभावं संप्रकाशयन् ।
वह्निदाहारिभयतः स नो रक्षतु भीतिहा ॥ ११ ॥

योऽन्धीभूतां मातरं स्वां चूडारत्नं जले व्यधात् ।
दिव्यनेत्रान् जनान् कृत्वा स नो रक्षतु नेत्रदः ॥ १२ ॥

विरूपं प्राकरोत् पुत्रं छायासीनं सुसुन्दरम् ।
सर्वलक्षणसम्पन्नं स नो रक्षतु सर्वदः ॥ १३ ॥

सकलानन्दनामानं राज्ये यः प्राभ्यषेचयत् ।
सन्ततिस्थितिकुर्वाणः स नो रक्षतु स्थैर्यकृत् ॥ १४ ॥

विषदं भ्रातरं यश्चाक्षमद् भिक्षून् विषाशिनः ।
ररक्ष धारणीविज्ञः स नो रक्षतु निर्विषः ॥ १५ ॥

श्रीस्वयंभुदर्शनाय नैपालीयान् प्रयासितुम् ।
कपिलान् प्रस्थितो योऽसौ स नो रक्षतु सन्ततम् ॥ १६ ॥

भद्रकल्पावदानोद्धृता शाक्यसिंहस्य
मङ्गलषोडशस्तुतिः समाप्ता ।

●

मङ्गलाष्टकम्

मञ्जुश्रीर्लोकनाथो जिनवरमकुटो जम्भलो वज्रसत्त्वः
मैत्रेयो वज्रपाणिः सुखकरकमलो राहुलो भद्रपालः।
बुद्धो वैरोचनाद्यस्त्रिभुवननमितः क्षीणनिःशेषदोष-
स्तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ १॥

हृष्टो हूँकारवज्रः पशुपतिदमको वज्रघण्टा च हृष्टा
पीतो हालाहलास्यो रिपुगणमथनो टक्किराजो महात्मा।
अक्षोभ्यो रत्नकेतुः प्रतिदिनमचलो गण्डहस्तिर्यमारि-
स्तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ २॥

संघस्त्रैलोक्यबन्धुर्गुणगणनिलयो बोधिचित्तः सुचित्तः
बोधिश्चानन्दसिद्धो विजितकलिमलो हेरुको नीलदण्डः।
बुद्धः सारङ्गराजो विजितजिनगुणो सर्वसत्त्वानुकम्पी
तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ ३॥

प्रज्ञा चन्द्रावतारा तदनुजभृकुटी ज्ञानसंभारभारा
मारीची मारमारा सकलभयहरा पीतवर्णा त्रिवक्त्रा।
मायूरी मामकी च क्षपितरिपुगणा पाण्डरा रोचनाद्या-
स्तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ ४॥

गान्धारी जाङ्गुली च भुजगहृतफणा खड्गपाशाङ्कुशोग्रा
वाराही वज्रहस्ता असिपरशुधरा धर्मधात्वीश्वरी च।
केयूरी ज्ञानसारा ध्वजनिहितकरा षट्करा शाबरी च
तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ ५॥

वैण्या माल्या सुगीता प्रथितजिनवरे शाबरी धूपवज्रा
वैताली गन्धवज्रा प्रहसितवदना स्वर्गतिरार्यतारा।
लक्ष्मीर्बुद्धस्य बोधिः सकलभयहरा शारदा दीपवज्रा
तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः॥ ६॥

वैशाल्यां धर्मचक्रे प्रथितनिजबले पर्वते गृध्रकूटे
श्रावस्त्यां लुम्बिनीके क्षितिनिहितकरा कोंकणे बोधिवृक्षा ।
श्रीवत्साश्वत्थपत्रं सुरवरनमितं श्रीफलं शङ्खचक्रं
तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः ॥ ७ ॥

छत्रं दूर्वा च पद्मं ध्वजमपि निहितं लो(रो)चना मत्स्यकूर्मौ
वाराहः पूर्णकुम्भो मुनिवरवचनं वज्रघण्टानिनादः ।
बुद्धानां प्रातिहार्यं सुरवरनमितं हास्यलास्ये विलासा-
स्तुष्टाः सर्वार्थसिद्धिं ददतु समरसा मङ्गलं बोधिसत्त्वाः ॥ ८ ॥

मङ्गलाष्टकं समाप्तम् ।

मञ्जुवज्रस्तोत्रम्

मञ्जुगर्भकृतम्

नमः श्रीमञ्जुवज्राय

शशधरमिव शुभ्रं खड्गपुस्ताकपाणिं
सुरुचिरमलिशान्तं पञ्चचीरं कुमारम् ।
पृथुतरवरमोक्षं पद्मपत्रायताक्षं
कुमतिदहनदक्षं मञ्जुघोषं नमामि ॥ १ ॥

कृतमृगरिपुयानं दत्तभक्तप्रदानं
सुरदनुजनृयानं बोधिसत्त्वप्रधानम् ।
अखिलगुणनिधानं सर्वविद्यावितानं
करसरसिजबाणं मञ्जुघोषं नमामि ॥ २ ॥

विभृतसकलकोषं क्षालिताज्ञानदोषं
स्मरणभजनतोषं दूररागादिदोषम् ।
विहितससुरपोषं सिद्धिदाख्यानयोषं
कृतजडपरिशोषं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ३ ॥

गणपतिशरजन्मश्रीमहाकालसिंहैः
परिवृतमिव चन्द्राभाभमिन्दीवराक्षम् ।
असि-शर-जपमाला-पुस्तकं संवहन्तम्
उरसि ललितमालं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ४ ॥

सुरपतिशमनायाप्येष मित्राग्निरक्षः-
पवनप्रमथपालैः संवृतं स्मेरवक्त्रम् ।
खगपतिरथगात्रं ब्रह्मवन्द्यं रमोमा-
विहितचरणभक्तं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ५ ॥

यदसिकठिनधाराच्छेदमार्गाभिवाहा(हः)
सकलसलिलधारापातिताङ्गाङ्गमन्त्रः ।
बहुपरिचयस्थल्यां भूमिनद्यापि रेजे
बहुतरमहिमानं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ६ ॥

भवदभिनवनुत्या तोषिता गुह्यदेवी
निखिलनिगमसारा सुप्रकाशाऽतिरेजे ।
भवजलनिधिपारं दानकल्पद्रुमाग्रं
गलितबहुमहोग्रं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ७ ॥

विभजति जनलोको धर्मधातुं महेशं
दशशतदलपद्मे संस्थितं ज्योतिरैशम् ।
तदपि तव प्रशस्तं देवमाहात्म्यमीशं
विभजति भुजगेशं मञ्जुघोषं नमामि ॥ ८ ॥

पठति यदिदमिष्टं मालिनीपद्यबन्धं
स भवति कविराजो वादिसिंहासनस्थः ।
सकलकविसभासु प्रोज्ज्वलद्वाक्सुधारः
कलितसकलविद्यो भूषणो भव्यदक्षः ॥ ९ ॥

स्वयम्भूपुराणोद्धृतं मञ्जुगर्भविरचितं
मञ्जुवज्रस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

(आर्य)मञ्जुश्रीनामाष्टोत्तरशतकस्तोत्रम्

प्रणिपत्य मुनिं मूर्ध्ना सुप्रसन्नेन चेतसा ।
वक्ष्याम्यद्य च नामानि संबुद्धैरनुवर्णितम् ॥ १ ॥

सुरूपो रूपधारी च सर्वरूपो ह्यनुत्तरः ।
सर्वलक्षणसम्पूर्णो मञ्जुश्रीरुत्तमः श्रिया ॥ २ ॥

अचिन्त्यश्चिन्त्यविगतोऽचिन्त्योऽद्भुतविक्रमः ।
अचिन्त्यः सर्वधर्माणामचिन्त्यो मनसस्तथा ॥ ३ ॥

शून्यताभावितात्माकः शून्यधर्मसमन्वितः ।
शून्यस्त्वमधिमुक्तिश्च शून्यत्रिभवदेशकः ॥ ४ ॥

सर्वज्ञः सर्वदर्शी च सर्वभूमिपतिर्विभुः ।
मञ्जुश्रीवशवर्ती च पद्माक्षः पद्मसंभवः ॥ ५ ॥

पद्मकिञ्जल्कवर्णश्च पद्मपर्यङ्कवासनः ।
नीलोत्पलधरः पूतः पवित्रः शान्तमानसः ॥ ६ ॥

प्रत्येकबुद्धो बुद्धस्त्वमादिबुद्धो निरुच्यसे ।
ऋद्धिमान् वशिताप्राप्तश्चतुःसत्योपदेशकः ॥ ७ ॥

लोकपालः सहस्राक्ष ईश्वरस्त्वं प्रजापतिः ।
शिवस्त्वं सर्वभूतानां त्वं विभुर्गुणसागरः ॥ ८ ॥

ऋषिस्त्वं पुण्यःश्रेष्ठश्च ज्येष्ठो जातिस्मरस्तथा ।
विनायको विनेता च जिनपुत्रो जिनात्मजः ॥ ९ ॥

भानुः सहस्ररश्मिस्त्वं सोमस्त्वं च बृहस्पतिः ।
धनदो वरुणश्चैव त्वं विष्णुस्त्वं महेश्वरः ॥ १० ॥

अनन्तो नागराजस्त्वं स्कन्दः सेनापतिस्तथा ।
वेमचित्रासुरेन्द्रस्त्वं भौमः शुक्रो बुधस्तथा ॥ ११ ॥

सर्वदेवमयो वीरः सर्वदेवैर्नमस्कृतः ।
लोकधर्ममलातीतस्त्वं लोके चाग्रपुद्गलः ॥ १२ ॥

लोकज्ञो लोकविज्ञातो ज्ञानिनां प्रवरो वरः।
वरदो लयनं त्राणमधृष्यो मारकर्मिणाम् ॥ १३ ॥

गम्भीरश्चानवद्यश्च कल्याणमित्रसंपदः।
वैद्यस्त्वं शल्यहर्ता च नरदम्यः सुसारथिः ॥ १४ ॥

मतिमान् गतिमांश्चैव बुद्धिमांश्च विचक्षणः।
पुण्यवान् कल्पवृक्षश्च बोध्यङ्गपुष्पमण्डितः ॥ १५ ॥

विमुक्तिफलसंपन्न आश्रयः सर्वदेहिनाम्।
मनोहरो मनोज्ञश्च अनघो ब्रह्मचारिणाम् ॥ १६ ॥

केतुस्त्वं ग्रहश्रेष्ठश्च ऋषिभिर्मुनिपुङ्गवः।
युवराज्ञाभिषिक्तस्त्वं दशभूमीश्वरः प्रभुः ॥ १७ ॥

सार्थवाहो गणश्रेष्ठो निर्वाणोत्तमदेशकः।
खसमो मध्यकल्पस्त्वं त्वं तेजो वायुरेव च ॥ १८ ॥

चिन्तामणिस्त्वं सत्त्वानां सर्वाशापरिपूरकः।
नमोऽस्तु ते महाविद्य सर्वभूतनमस्कृत ॥ १९ ॥

श्रीआर्यमञ्जुश्रीनामाष्टोत्तरशतकस्तोत्रं समाप्तम्।



मञ्जुश्रीस्तोत्रम्

श्रीमञ्जुनाथकमलासनरत्नमौलि-
विद्याधिपो भुवनमण्डलचक्रवर्ती ।
ध्यानाधिपोचितविराजितसौम्यरूपो
वन्दामहे सुरनरासुरवन्दितार्थम् ॥ १ ॥

बालाकृतिः कुवलयोज्ज्वललोलहस्तः
केयूरहारमणिकुण्डलघृष्टगण्डः ।
खादंश्च षोडशरदं सुकुमाररूपं
वन्दामहे सुरवरार्चितमञ्जुघोषम् ॥ २ ॥

रोमाग्रकूपविवरे परिवर्तमानं
विश्वप्रपञ्चकरणं सुगतात्मजस्य ।
त्रैविद्यमन्त्र तव नाथ गुणार्णवेण
सूक्ष्माय बुद्धतनयाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ३ ॥

गम्भीरधर्मनयमार्गसुखप्रतिष्ठं
ज्ञानोदधिं निखिलसत्त्वकृतार्थकारम् ।
प्रज्ञानिधानगुणसागरमप्रमेयं
मञ्जुश्रियं जिनसुतं सततं नमामि ॥ ४ ॥

विदितसकलतत्त्वः क्षिप्तसन्तापसत्त्व-
स्त्रिभुवन उपकारी सर्वदुःखापहारी ।
मदनमथनवीरश्चारुरूपः सुचीर-
स्त्रिभुवनजनतोषः पातु मां मञ्जुघोषः ॥ ५ ॥

बालेन्दुरुचिराभासं वराभरणभूषितम् ।
प्रज्ञाब्जामलपत्राक्षं वन्दे मञ्जुश्रियं सदा ॥ ६ ॥

पात्रं वामकरे यस्य भ्रमन्नञ्जलिसंनिभम् ।
नाम्ना ते सर्वतो लक्ष्मीर्मञ्जुघोषं नमाम्यहम् ॥ ७ ॥

खड्गपुस्तकहस्ताय चन्द्रमण्डलवर्तिने ।
अज्ञानध्वान्तसूर्याय मञ्जुघोषाय ते नमः ॥ ८ ॥

ज्ञानोत्तरप्रभाकेतुं प्रणिधानमतिं तथा ।
शान्तेन्द्रियं मञ्जुघोषं भक्तितः प्रणमाम्यहम् ॥ ९ ॥

श्री मञ्जुश्रीस्तवस्तोत्रं समाप्तम् ।

मध्यमकशास्त्रस्तुतिः

आचार्य-चन्द्रकीर्तिकृता

यद्बुद्धैरिह शासनं नवविधं सूत्रादि संकीर्तितं
लोकानां चरितानुरोधनिपुणं सत्यद्वयापाश्रयम् ।
तस्मिन् रागनिराकृतौ नहि कथा द्वेषक्षये जायते
द्वेषस्यापि निराकृतौ नहि कथा रागक्षये जायते ॥ १ ॥

मानादेरपि यत् क्षयाय वचनं नान्यं मलं हन्ति तत्
तस्माद्व्यापितरं न तत्र च पुनस्तास्ता महार्थाः कथाः ।
मा मोहस्य परिक्षयाय तु कथा क्लेशानशेषानसौ
हन्यान्मोहसमाश्रिता हि सकलाः क्लेशा जिनैर्भाषिताः ॥ २ ॥

मोहस्यास्य परिक्षयाय च यतो दृष्टाः प्रतीत्यादय-
स्तत्त्वं तत् प्रतिपच्च सैव सुगतैः संकीर्तिता मध्यमा ।
कायो धर्ममयो मुनेः स च यतः सा शून्यतेत्युच्यते
बुद्धानां हृदयं स चापि महती विद्येति संकीर्त्यते ॥ ३ ॥

यस्मात्सर्वगुणाकरोऽयमुदितो बुद्धैरतस्तत्कथा
शास्त्रे मध्यमकेऽथ विस्तरतरा मुख्यात्मना वर्णिता ।
कारुण्यद्रुतचेतसा प्रवचनं बुद्ध्वा यथावस्थितं
बुद्धानां तनयेन तेन सुधिया नागार्जुनेनादरात् ॥ ४ ॥

गम्भीरं जिनशासनं न हि जनो यो वेत्ति तत्संविदे
मौनीन्द्राद् वचसः पृथङ्निगदितुं वाञ्छन्ति तत्त्वं च ये ।
अन्ये येऽपि कुबुद्धयः प्रवचनं व्याचक्षते चान्यथा
तेषां चापि निराकृतौ कृतमिदं शास्त्रं हतान्तर्द्वयम् ॥ ५ ॥

स्पष्टं राहुलभद्रपादसहितो नागार्जुनो तन्मतं
देवेनाप्यनुगम्यमानवचनः कालं चिरं दिष्टवान् ।
तच्छास्त्रप्रविवेकनिश्चितधियस्तीर्थ्यान् विजित्याखिलां-
स्तच्छिष्या अपि शासनं मुनिवरस्यादिष्टवन्तश्चिरम् ॥ ६ ॥

आयाताय शिरोऽर्थिने करुणया प्रोत्कृत्य दत्त्वा शिरः
संयाते तु सुखावतीं जिनसुते नागार्जुने तत्कृताः ।
ग्रन्थाः शिष्यगणाश्च तेऽपि बहुना कालेन नाशं गताः
तत्त्वार्केऽस्तमितेऽधुना न हि मतं स्पष्टं तदस्ति क्वचित् ॥ ७ ॥

उत्प्रेक्षा रचितार्थमात्रनिपुणे दूरंगते सत्पथाद्
उन्मत्तेऽथ निपीय तर्कमदिरां लोकेऽधुना भूयसा ।
सर्वज्ञोदिततत्त्वबोधरहिते बौद्धे मते व्याकुले
धन्योऽसौ क्षणमप्यपास्य विमतिं यः शून्यतां गाहते ॥ ८ ॥

भीत्या वस्तुनिबन्धनोपरचितैर्यैः शास्त्रपाशैर्वृत-
श्छित्त्वोत्प्लुत्य च याति वस्तुपरिखां चैको मृगोऽसौ महान् ।
तं प्रत्यद्य न चिन्तया मम गुणश्चैकस्तु यो नाधुना
तं प्रत्येव तदन्यशास्त्रमथनी वृत्तिः कृतेयं मया ॥ ९ ॥

दृष्ट्वा सूत्रसमुच्चयं परिकथां रत्नावलीं संस्तुती-
रभ्यस्यातिचिरं च शास्त्रगदितास्ताः कारिका यत्नतः ।
युक्त्याख्यामथ षष्टिकां सविडलां तां शून्यतासप्तति
या चासावथ विग्रहस्य रचिता व्यावर्तिनी तामपि ॥ १० ॥

दृष्ट्वा तच्छतकादिकं बहुविधं सूत्रं गभीरं तथा
वृत्तिं चाप्यथ बुद्धपालितकृतां सूक्ष्मां च यद्भाविना ।
पारम्पर्यसमागतं प्रविचयाच्चासादितं यन्मया
पिण्डीकृत्य तदेतदुन्नतधियां तुष्टौ समावेदितम् ॥ ११ ॥

चिन्तामण्डल एष तर्कमथनः साक्षादिहावस्थितान्
अर्थान् सम्यगनाकुलान् पटुधियां वागांशुभिर्भासयन् ।
वृत्तिं स्पष्टतरामिमां च विदधच्चन्द्रोऽधुना कीर्तिमान्
लोकानामुदितो निहन्ति विमतीः सान्द्रान्धकारैः सह ॥ १२ ॥

कृत्वा वृत्तिमिमामनाकुलपदां सत्प्रक्रियामादराद्
श्राद्धानां सुधियां च निश्चयविधौ युक्त्यागमापाश्रयाम् ।
यत्पुण्यं मम शून्यतेव विपुलं तेनैव लोकोऽखिल-
स्त्यक्त्वा दृष्टिगणं प्रयातु पदवीं सर्वप्रपञ्चच्छिदाम् ॥ १३ ॥

शास्तारं प्रणिपत्य गौतममहं तद्धर्मतावस्थितान्
सम्बुद्धान् सकलं जिनात्मजगणं धर्मं च तैर्भाषितम् ।
चक्षुर्भूतमनन्तबुद्धवचनस्यालोचने देहिनाम्
योऽमुं मध्यमकं चकार कृपया नागार्जुनस्तं नमे ॥ १४ ॥

श्री चन्द्रकीर्तिकृता मध्यमकशास्त्रस्तुतिः समाप्ता ।

महाकालस्तोत्रम्

नमस्यामि महाकालं सर्वसम्पत्तिदायकम् ।
खर्वं लम्बोदरं नीलमष्टनागविभूषितम् ॥ १ ॥
द्विभुजैकमुखं वीरं कपालकृतशेखरम् ।
व्याघ्रचर्मकटीवेष्टं शतार्धमुण्डमालिनम् ॥ २ ॥
भावाभावपरिच्छिन्नं जगत्संबोधकारकम् ।
सर्वभावात्मकं नाथं जगन्नाथ नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥
कृष्णवर्णं महातेजं सिद्धसाधकरक्षकम् ।
कर्तिकपालिनं नाथं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥
व्याघ्रचर्माम्बरधरं महाक्रोधस्वरूपिणम् ।
द्वादशादित्यसंकाशं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥
महादंष्ट्राकरालास्यं ललज्जिह्वं सभैरवम् ।
महारक्ताभनयनं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥
विभ्रन्नरशिरोमालां नागराजविभूषितम् ।
श्मश्रुतुन्दिलकं वन्द्यं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥
सभ्रूभङ्गं त्रिनेत्रं चैवोर्ध्वपिङ्गोर्ध्वकेसरम् ।
युगान्तानलपुञ्जाभं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥
त्रासकं सर्वदैत्याना[मस्थ्य]सृङ्मांसभक्षकम् ।
रक्षितारं भक्तिमतां महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥
सिद्धिसाधनमन्त्रस्य विहेठीज्यनराशनम् ।
युग्मस्याश्वासदातारं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥
संसारजलधेः पारं नौका यानैकगामिनी ।
नौकायाने स्वतेजास्त्वं महाकाल नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥
महाकालस्तवं चैतद् यः पठेद् भक्तिमान् नरः ।
भयार्तो मुच्यते भीतेररिचिन्ता निवर्तते ॥ १२ ॥
महाकालं नमस्कृत्य यथोक्तकुलजन्मतः ।
तेन सुजन्मा भवति सर्वसिद्धिपरायणः ॥ १३ ॥

श्रीमहाकालस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

महाचक्रवर्तिनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्

वज्रसत्त्व महावज्र वज्रनाथ सुसाधक।
वज्राभिषेक वज्राभ वज्रकेतु(तो) नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

हासवज्र महाधर्म वज्रकोश महावर।
सर्वमण्डलराजाग्र्य निष्प्रपञ्च नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

वज्रकर्म महारक्ष चण्डयक्ष महाग्रह।
वज्रमुष्टि महामुद्र सर्वमुद्र नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

बोधिचित्त महाबोधे बुद्ध सर्वतथागत।
वज्रयान महाज्ञान महायान नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

सर्वार्थ सर्वतत्त्वार्थ महासत्त्वार्थ सर्ववित्।
सर्वज्ञ सर्वकृत् सर्व सर्वदर्शि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

वज्रात्मक सुवज्राग्र्य वज्रवीर्य सुवज्रधृक्।
महासमय तत्त्वार्थ महासत्य नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

वज्राङ्कुश महाकाम सुरते सुमहाप्रभ।
वज्रप्रभ प्रभोद्योत बुद्धप्रभ नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

वज्रराजाग्र्य वज्राग्र्य विद्याग्र्याग्र्य नरोत्तम।
वज्रोत्तम महाग्र्याग्र्य विद्योत्तम नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

वज्रधातो महागुह्य वज्रगुह्य सुगुह्यधृक्।
वज्रसूक्ष्म महाध्यान वजकार्य नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

बुद्धाग्र्य बुद्धवज्राग्र्य बुद्धबोधे महाबुध।
बुद्धज्ञान महाबुद्ध बुद्धबुद्ध नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

बुद्धपूजा-महापूजा-सत्त्वपूजासुपूजक।
महोपाय महासिद्धे वज्रसिद्धि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

तथागत महाकाय तथागतसरस्वते।
तथागतमहाचित्त वज्रचित्त नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

बुद्धाधिप जिनाज्ञाकृद् बुद्धमित्र जिनाग्रज ।
महावैरोचन विभो शान्तरौद्र नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

तथागतमहातत्त्व भूतकोटे महानय ।
सर्वपारमिताज्ञान परमार्थ नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥

समन्तभद्र चर्याग्र्य मार मारप्रमदर्क ।
सर्वाग्र्य समताज्ञान सर्वत्रग नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥

वुद्धहुंकर हुंकार वज्रहुंकर दामक ।
विश्ववज्राङ्क वज्रोग्र वज्रपाणे नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥

वन्द्यः पूज्यश्च मान्यश्च सत्कर्तव्यस्तथागतैः ।
यस्माद् वज्रदृढं चित्तं वज्रसत्त्वस्त्वमुच्यसे ॥ १७ ॥

त्वदधीना हि संबोधिः पिता त्वं सर्वदर्शिनाम् ।
संभूताः संभविष्यन्ति त्वामासाद्य तथागताः ॥ १८ ॥

अनेन स्तोत्रराजेन यः स्तुयाद्वै सुभक्तितः ।
यो गायंस्तु स्तुयात् सोऽपि भवेद्वज्रधरोपमः ॥ १९ ॥

अध्येषयामस्त्वां नाथ सर्वबुद्धवशंकरम् ।
सर्वसत्त्वार्थकार्यार्थमुत्पादय स्वकं कुलम् ॥ २० ॥

महाचक्रवर्तिनामाष्टोत्तरशताध्येषणास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

•

महाप्रतिसरास्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीमहाप्रतिसरायै

यस्याः स्मरणमात्रेण सर्वे पापाः क्षयं गताः।
यया युक्तो वज्रकायो नमस्तस्यै नमो नमः॥ १॥

यां स्मरन् राक्षसः क्रूरो माठरं कुक्षिसंस्थितम्।
प्राक्षिपद् गोविषं नद्यां नमस्तस्यै नमो नमः॥ २॥

याऽरक्षत् वणिजः पुत्रं क्रूरसर्पाद् वधोद्यतात्।
विषदाहमुमूर्षुं च नमस्तस्यै नमो नमः॥ ३॥

ब्रह्मदत्तो महाराजो यया रक्षितमस्तकः।
रिपुं जित्वा विराजोऽभून्नमस्तस्यै नमो नमः॥ ४॥

भिक्षुर्दुःशीलको रोगी यया कण्ठे प्रबन्धितः।
प्राणान्मुक्त्वा ययौ स्वर्गं नमस्तस्यै नमो नमः॥ ५॥

समुद्रे पोतसंक्षुब्धे वणिजां प्राणरक्षकः।
यां स्मरन् सार्थवाहोऽभून्नमस्तस्यै नमो नमः॥ ६॥

यस्यां च प्रतिबद्धायां भार्यायां सुतमाप्तवान्।
प्रसारितभुजो राजा नमस्तस्यै नमो नमः॥ ७॥

दरिद्रो यां प्रति स्मृत्वा दीनारान् प्रददौ जिने।
राजाऽभीष्टप्रदाताऽभून्नमस्तस्यै नमो नमः॥ ८॥

यां प्रबद्ध्वाऽसुरैर्युद्धं शक्रश्चूडामणौ प्रभुः।
लब्धवान् विजयं वज्री नमस्तस्यै नमो नमः॥ ९॥

यस्या मन्त्रबलेनैव पूर्य पारमिताश्च षट्।
मारा जिता जिनैर्बुद्धैर्नमस्तस्यै नमो नमः॥ १०॥

अपधीरो वधार्होऽपि प्रक्षिप्तः सर्वसङ्कटे।
यां स्मृत्वा परिमुक्तोऽभून्नमस्तस्यै नमो नमः॥ ११॥

यया बन्धितकण्ठश्च मुक्तोऽभूत् पापसङ्कटात् ।
नगरे नायकोऽभूच्च नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १२ ॥

या चाऽपराजिता विद्या सर्वबुद्धैश्च धारिता ।
मुद्रिता भाषिता नित्यं पठिता परिदेशिता ॥ १३ ॥

लिखिता मोदिता सत्त्वहिताय पूजिता सदा ।
स्मृता कायगता कृत्वा नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १४ ॥

यस्याः स्मरणमात्रान्न दुर्लभं भुवनत्रये ।
पाठस्वाध्यायनाद्वापि नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १५ ॥

या विद्या दुर्लभा बुद्धैर्व्याकृता सुप्तशंसिता ।
महती धारणी ख्याता सर्वपापक्षयङ्करी ॥ १६ ॥

महाबला महावीर्या महातेजा महत्प्रभा ।
महागुणवती विद्या सर्वभारविदारणी ॥ १७ ॥

पापसन्धिसमुद्घाती मारबन्धप्रमोचनी ।
जननी बोधिसत्त्वानां सर्वदुष्टविनाशिनी ॥ १८ ॥

रक्षणी पोषणी धात्री परमन्त्रविघातिनी ।
कार्खोदविषयोगानां विध्वंसनकरी शिवा ॥ १९ ॥

महाध्यानरतानां च गृह्णतां लिखतां सदा ।
पाठाध्ययनकृतां नित्यं दधतां शृण्वतां तथा ॥ २० ॥

परेभ्यो देशिता चैव नित्यं मनसि भाविता ।
सा पुस्तकगतां कृत्वा पूज्यमाना नमस्कृता ॥ २१ ॥

सर्वपापहरी भद्रा बोधिसंभारपूरिणी ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥

यस्या मन्त्रप्रभावेण सर्वभयान्युपद्रवाः ।
दुष्टाः सुरमनुष्याश्च दैत्यगन्धर्वराक्षसाः ॥ २३ ॥

ग्रहाः स्कन्दा अपस्माराः पिशाचा यक्षकिन्नराः ।
डाकिन्यः शाकिनीसंघा नागा कार्खोदव्याधयः ॥ २४ ॥

ज्वराश्च विविधा रोगाः परकर्मकृतास्तथा ।
विषाग्निशस्त्रमन्त्राणि विद्युतः कालवायवः ॥ २५ ॥

अतिवृष्टिरनावृष्टिः सर्वशत्रुभयानि च।
तथान्ये पापसर्गा वा विनश्यन्ति न संशयः॥ २६॥

सर्वकार्याणि सिद्धयन्ति नमस्तस्यै नमो नमः।
यश्चैतां धारयेद्विद्यां कण्ठे बाहौ च मस्तके॥ २७॥

नित्यं रक्षन्ति देवास्तं दैत्या नागाश्च मानुषाः।
गन्धर्वाः किन्नरा यक्षा भूतप्रेतपिशाचकाः॥ २८॥

डाकिन्यो राक्षसा दूत्यः कूष्माण्डाः कठपूतनाः।
त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं बुद्धा रक्षन्ति तं सदा॥ २९॥

प्रत्येकाः श्रावकाश्चैव बोधिसत्त्वा महर्धिकाः।
योगिनः सिद्धमन्त्राश्च महावीर्या महर्षयः॥ ३०॥

वज्रपाणिश्च यक्षेन्द्रः शक्रश्च त्रिदशैः सह।
चत्वारश्च महाराजा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः॥ ३१॥

नन्दिकृष्णो महाकालः कार्तिकेयो गणेश्वरः।
भैरवा मातृका दुर्गास्तथाऽन्ये मारकायिकाः॥ ३२॥

विद्यादेव्यो महावीर्या महाबलपराक्रमाः।
मामकी भृकुटी तारा चाङ्कुशी वज्रशृङ्खला॥ ३३॥

महाश्वेता महाकाली वज्रदूती सुपाशिका।
वज्रमाला महाविद्या सुवीर्याऽमृतकुण्डली॥ ३४॥

वज्राऽपराजिता चण्डी कालकर्णी महाबला।
तथा धन्या महाभागा पद्मकुण्डलिरेव च॥ ३५॥

मणिचूडा पुष्पदन्ती स्वर्णकेशी च पिङ्गला।
एकजटा महादेवी धन्या विद्युन्मालिनी॥ ३६॥

कपालिनी च लङ्केशी ब्रह्मक्षितिकनायिका।
हारीती पाञ्चिकाश्चैव शङ्खिनो कूटदन्तिनी॥ ३७॥

श्रीः सरस्वती लक्ष्मीः सिद्धेश्वरी सदानुगा।
तमेवाऽन्येऽपि रक्षन्ति यस्य विद्या करे स्थिता॥ ३८॥

स भवेत् सर्वसत्त्वानां मोक्षार्थं च समुद्यतः।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ३९॥

श्रीमहाप्रतिसरास्तोत्रं समाप्तम्।

महाबोधिभट्टारकस्तोत्रम्

ॐ नमः शाक्यसिंहाय

सिद्धं प्रसिद्धं विजितामरं च शान्तं विरागं सुविशुद्धशीलम् ।
विश्वेश्वरं सर्वगुणाकरं वै श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ १ ॥

छत्राभशीर्षं वरनीलकेशं चोर्णासुशोभं हि महाल्ललाटम् ।
नीलोत्पलाभं नयनं विशालं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ २ ॥

उत्तुङ्गनासं भरपीनगण्डं बिम्बौष्ठकल्पं मृगराजवक्षसम् ।
उत्तप्तहेमाभसुवर्णवर्णं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ३ ॥

पायोधकोषं शुभकर्णशोभं गण्डस्त्रिरेखावरचैलभूषम् ।
प्राजानुबाहुं द्विपनासकल्पं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ४ ॥

विचित्रपुष्पैर्नरयाक्षमानं श्रीवत्सभद्रद्विगणोपयुक्तम् ।
अशीतिसुव्यञ्जनगात्रशोभं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ५ ॥

शास्तारमग्र्यं नरवीरवीरं मायासुतं कारुणिकं जिनेन्द्रम् ।
शौद्धोदनिं लोकविदं मुनीन्द्रं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ६ ॥

चक्राङ्कपाणिं नवपल्लवाभं मत्तेभलीलागमनं विराजम् ।
देवासुरैर्वन्दितपादयुग्मं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ७ ॥

त्रैदुःखदुःखाद् भयवेदिलोकान् त्राणं च नीतुं वरबोधिमात्रैः ।
जिह्वा च मत्तेहि सुचक्षु सर्वं श्रीशाक्यसिंहं प्रणमामि नित्यम् ॥ ८ ॥

महाबोधिभट्टारकस्तोत्रं समाप्तम् ।

महाबोधिवन्दनाष्टकम्

ॐ नमो बुद्धाय

सौवर्णवर्णं कलविङ्कघोषं ब्रह्मस्वरं कारुणिकं सुसेव्यम् ।
नरोत्तमं शीलविशुद्धदेहं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ १ ॥

शाक्येन्द्रवंशोद्भवदिव्यदेहं तृष्णाच्छिदं मारभिदं जिनेशम् ।
ज्ञानास्पदं क्लेशभिदं दिनेशं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ २ ॥

समन्तभद्रं वरलक्षणाङ्गं सत्त्वार्थसिद्धिं सुकृतैः प्रणम्यम् ।
श्रेयस्करं सत्त्वहितैकचित्तं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ३ ॥

धर्मोदकं यः कृपयोत्ससर्ज रागाग्निसन्दीपितपुद्गलानाम् ।
सुखाय संबोधिपयोमुचं तं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ४ ॥

भवाब्धिनिस्तारणसेतुभूतं तथागतं तत्त्वविदं नृसिंहम् ।
त्रैलोक्यनाथं वरबोधिरत्नं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ५ ॥

पदार्थसम्पादनसुव्रतस्थं मायासुतं मारभिदं जितारिम् ।
शास्तारमग्र्यं वरबोधिसत्त्वं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ६ ॥

लोकेशनाथं हरिनाथनाथं भूतेशनाथं सुरनाथनाथम् ।
कृतान्तनाथं नरनाथनाथं श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ७ ॥

स बुद्धरूपः स हि धर्मरूपः स एव संघोऽपि विनेयकानाम् ।
अभूच्छरण्यः शरणागतानां श्रीमन्महाबोधिमहं नमामि ॥ ८ ॥

श्रीमन्महाबोधिवन्दनाष्टकं समाप्तम् ।

●

महोग्रताराष्टकस्तोत्रम्

मातर्नीलसरस्वति प्रणमतां सौभाग्यसम्पत्प्रदे
प्रत्यालीढपदस्थिते शवहृदि स्मेराननाम्भोरुहे ।
फुल्लेन्दीवरलोचनत्रययुते कर्त्रीकपालोत्पले
खड्गं चादधती त्वमेव शरणं त्वामीश्वरीमाश्रये ॥ १ ॥

वाचामीश्वरि भक्तकल्पलतिके सर्वार्थसिद्धीश्वरि
सद्यः प्राकृतगद्यपद्यरचनासर्वार्थसिद्धिप्रदे ।
नीलेन्दीवरलोचनत्रययुते कारुण्यवारांनिधे
सौभाग्यामृतवर्षणेन कृपया सिञ्च त्वमस्मादृशम् ॥ २ ॥

खर्वे गर्वसमहपूरिततनो सर्पादिभूषोज्ज्वले
व्याघ्रत्वक्परिवीतसुन्दरकटिव्याधूतघण्टाङ्किते ।
सद्यःकृत्तगलद्रजःपरिलसन्मुण्डद्वयीमूर्धज-
ग्रन्थिश्रेणिनृमुण्डदामललिते भीमे भयं नाशय ॥ ३ ॥

मायानङ्गविकाररूपललनाबिन्द्वर्धचन्द्रात्मिके
हुंफट्कारमयि त्वमेव शरणं मन्त्रात्मिके मादृशः ।
मूर्तिस्ते जननि त्रिधामघटिता स्थूलातिसूक्ष्मा परा
वेदानां नहि गोचरा कथमपि प्राप्तां नु तामाश्रये ॥ ४ ॥

त्वत्पादाम्बुजसेवया सुकृतिनो गच्छन्ति सायुज्यतां
तस्य श्रीपरमेश्वरी त्रिनयनब्रह्मादिसौम्यात्मनः ।
संसाराम्बुधिमज्जने पटुतनून् देवेन्द्रमुख्यान् सुरान्
मातस्त्वत्पदसेवने हि विमुखान् को मन्दधीः सेवते ॥५॥

मातस्त्वत्पदपङ्कजद्वयरजोमुद्राङ्ककोटीरिण-
स्ते देवासुरसंगरे विजयिनो निःशङ्कमङ्के गताः ।
देवोऽहं भुवने न मे सम इति स्पर्द्धां वहन्तः परे
तत्तुल्या नियतं तथा चिरममी नाशं व्रजन्ति स्वयम् ॥६॥

त्वन्नामस्मरणात् पलायनपरा द्रष्टुं च शक्ता न ते
भूतप्रेतपिशाचराक्षसगणा यक्षाश्च नागाधिपाः ।
दैत्या दानवपुङ्गवाश्च खचरा व्याघ्रादिका जन्तवो
डाकिन्यः कुपितान्तकाश्च मनुजा मातः क्षणं भूतले ॥७॥

लक्ष्मीः सिद्धगणाश्च पादुकमुखाः सिद्धास्तथा वारिणां
स्तम्भश्चापि रणाङ्गणे गजघटास्तम्भस्तथा मोहनम् ।
मातस्त्वत्पदसेवया खलु नृणां सिद्ध्यन्ति ते ते गुणाः
कान्तिः कान्ततरा भवेच्च महती मूढोऽपि वाचस्पतिः ॥८॥

ताराष्टकमिदं रम्यं भक्तिमान् यः पठेन्नरः ।
प्रातर्मध्याह्नकाले च सायाह्ने नियतः शुचिः ॥ ९ ॥

लभते कवितां दिव्यां सर्वशास्त्रार्थविद् भवेत् ।
लक्ष्मीमनश्वरां प्राप्य भुक्त्वा भोगान् यथेप्सितान् ॥ १० ॥

कीर्तिं कान्तिं च नैरुज्यं सर्वेषां प्रियतां व्रजेत् ।
विख्यातिं चैव लोकेषु प्राप्यान्ते मोक्षमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

श्रीमहोग्रताराष्टकस्तोत्रं समाप्तम् ।

महोग्रतारास्तुतिः

ॐ नमः श्री उग्रतारायै

प्रकटविकटदंष्ट्रा घोररुद्राट्टहासा
नरशिरकृतमाला मेघगम्भीररावा ।
त्रिभुवनजनधात्री खड्गविन्यस्तहस्ता
करकरतिकपाला पातु व उग्रतारा ॥

घोररूपे महारावे सर्वशत्रुक्षयङ्करि ।
भक्तेभ्यो वरदे देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ १ ॥

सुरासुरार्चिते देवि सिद्धगन्धर्वसेविते ।
जाड्यपापहरे देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ २ ॥

सर्वमण्डल[मध्यस्थे] सर्वसत्त्वहितेऽनघे ।
सिद्धानां पूजिते देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ ३ ॥

घोररूपस्थिते देवि सर्वप्राणहरे स्तुते ।
उग्रतारे नमो नित्यं त्राहि मां शरणागतम् ॥ ४ ॥

जटाजूटसमायुक्ते ललज्जिह्वोर्ध्वकारिणि ।
द्रुतबुद्धिप्रदे देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ ५ ॥

सोमरूपे कोट्टरूपे चन्द्ररूपे नमोऽस्तु ते ।
शक्तिरूपे नमस्तुभ्यं त्राहि मां शरणागतम् ॥ ६ ॥

जडोऽहं शक्तिहीनोऽहं न तवाधिगमे क्षमः ।
मन्दो मन्दमतिश्चाहं त्राहि मां शरणागतम् ॥ ७ ॥

स्नाने दाने तथा जाप्ये बलिदाने तथा क्रतौ ।
प्रस्थाने च न शक्तोऽहं त्राहि मां शरणागतम् ॥ ८ ॥

शक्तिहीनमनाथं च सर्वपापसमन्वितम् ।
त्वां विना न गतिर्यस्य त्राहि मां शरणागतम् ॥ ९ ॥

गौरी लक्ष्मीर्महामाया उमा देवी सरस्वती।
सर्वास्त्वमेव हे मातस्त्राहि मां शरणागतम् ॥ १० ॥

गन्धपुष्पादिद्रव्यैश्च वन्दनादिभिरेव च।
देवीं सम्पूज्य यत्नेन लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ११ ॥

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां यः पठेन्नरः।
परमां सिद्धिमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥

मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम्।
विद्यार्थी लभते विद्यां तर्कव्याकरणादिकाम् ॥ १३ ॥

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु संग्रामे प्रविशेन्नरः।
तस्य शत्रुः क्षयं याति सदा प्रज्ञा प्रजायते ॥ १४ ॥

पीडायामथ संधाने विपदायां तथा भये।
य इदं पठते स्तोत्रं शुभं तस्य न संशयः ॥ १५ ॥

श्रीमहोग्रतारास्तुतिः समाप्ता।

•

मारविजयस्तोत्रम्

जितमारकलिं [illegible] जगदेकगुरुं
सुरयक्षमहोरगदैत्यनतम् ।
चतुसत्यसुदेशितमार्गमिमं
गुणमेघमहं प्रणमामि सदा ॥ १ ॥

भवभीममहोदधिमध्यगतं
कृपणार्तरवं समवेक्ष्य जनम् ।
परिमोचयितुं य इह प्रणिधिं
प्रचकार विभुं तमहं प्रणतः ॥ २ ॥

गिरिराजनिभं शरदिन्दुधियं
सुमुखं सुभुजं वररूपधरम् ।
सुगतं गतमप्रतिमं सुगतं
प्रणतोऽस्मि सदा जगदर्थकरम् ॥ ३ ॥

कनकप्रभया परिपीततनुं
वरदुन्दुभितोयदवल्गुरुतम् ।
गजहंसविलम्बितधीरगतं
शिरसाऽभिनतोऽस्मि गुणैकनिधिम् ॥ ४ ॥

तरुणार्कसमै रचलैर्नयनैः
स्फुरदुग्रमहाशनिभीमरवैः ।
नमुचिप्रहरैरसिशक्तिधरै-
श्चलितोऽसि विभो न हि त्वं विकृतैः ॥५॥

लवलीफलपाण्डुरकर्णपुटाः
कुचभारविनामितगात्रलताः ।
नहि त्वामशकन् खलु नागसुताः
श्वसितैः स्खलितैरपि कम्पयितुम् ॥ ६ ॥

तरवः कुसुमस्तबकाभरणा
बहुरत्नसहस्रचिताश्च नगाः।
न तथाभिरतिं जनयन्ति सतां
जनयन्ति यथा तव वीरगुणाः॥ ७॥

स्फुटचित्रपदं बहुयुक्तियुतं
गमकं वचनं तव कर्णसुखम्।
शुभमार्गफलं प्रसमीक्ष्यजना
न गृणन्ति पुनस्त्वदृतेऽन्यवचः॥ ८॥

इति वः शरणं समवेक्ष्य जना
न पतन्त्यपि कल्पशतैर्निरये।
विनिहत्य च दोषरिपून् बहुलान्
परियन्ति शुभं वरमोक्षपुरम्॥ ९॥

तव सौम्यतयाऽप्यभिभूततमो
न विराजति शीतकरो गगने।
तव काञ्चनकुङ्कुमसप्रभया
प्रभयाऽभिहतो न विभाति रविः॥ १०॥

तव नाथ शुभे वदनाम्बुरुहे
नयनभ्रमरा निपतन्ति नृणाम्।
प्रतिबुद्धदले कमले विमले
भ्रमरा इव पुष्पशताकुलिताः॥ ११॥

इति तोटकमन्त्रवरैरतुलैः
परिकीर्त्य मया तव वर्णलवान्।
यदुपार्जितमद्य शुभं विपुलं
शिवमस्तु ततो भुवि देवनृणाम्॥ १२॥

श्रीमारविजयस्तोत्रं समाप्तम्।

रत्नाकाल(कर)स्तवः

ॐ नमो लोकनाथाय

मया कृतानि पापानि कायवाक्चित्तसंचयैः ।
तत्सर्वं हर मे नाथ रक्ष मां लोकनायक ॥ १ ॥

नेपाले द्वादशाब्देषु अनावृष्टिर्महाभयम् ।
नरेन्द्रदेवं संस्थाप्य रक्ष मां लोकनायक ॥ २ ॥

मर्त्यभूमौ च पाताले दुःखिनो बहुलौकिकाः ।
सुखवृद्धिकरस्तेषां रक्ष मां लोकनायक ॥ ३ ॥

यत्र यत्र गतस्तत्र सर्वसत्त्वानुकम्पया ।
समुद्धरसि पापेभ्यो रक्ष मां लोकनायक ॥ ४ ॥

संसारे व्यापितोऽहं तु कथं पारं प्रयास्यते ।
त्वमेव शरणं तत्र रक्ष मां लोकनायक ॥ ५ ॥

सर्वदेवमयस्त्वं हि सर्वबुद्धमयस्तथा ।
सर्वसिद्धिमयश्चैव रक्ष मां लोकनायक ॥ ६ ॥

सदा कृपामयस्त्वं हि सदा रक्षामयोऽसि च ।
सदा प्रज्ञामयस्त्वं हि रक्ष मां लोकनायक ॥ ७ ॥

येन येन कृतं कर्म तेन तेनैव धारितम् ।
यद्यदिच्छां प्रदातासि रक्ष मां लोकनायक ॥ ८ ॥

सुखावतीं न संप्राप्तं यावद्धि सर्वसत्त्वकम् ।
तावत्संसारगर्तेऽस्मिन् रक्ष मां लोकनायक ॥ ९ ॥

ज्ञानिनां ज्ञानरूपोऽसि दुःखिनां दुःखहारकः ।
कामिनां कामरूपोऽसि रक्ष मां लोकनायक ॥ १० ॥

पूजनीयोऽसि लोकेश प्रणवस्य स्वरूपधृक् ।
वन्दनीयः सदा त्वं हि रक्ष मां लोकनायक ॥ ११ ॥

भर्ति वा भर्तिको वापि मित्रं वा शत्रुकोऽपि वा ।
सर्वत्र च दयायुक्तो रक्ष मां लोकनायक ॥ १२ ॥

लोकनाथ जगत्स्वामिन् सुभक्तिकृतचेतसा ।
त्वां नमामि पुनर्भूयो रक्ष मां लोकनायक ॥ १३ ॥

अनेकदुःखभागस्मि भीष्मैर्वै कष्टसंकटैः ।
दयस्व चावलोकेश मोचयस्व च मां क्षणात् ॥ १४ ॥

सर्वदेक्षासुसम्पातं वर्तयन् कुरु मेऽक्षयम् ।
अस्तु ते करुणा मह्यं भक्तिं चैवाचलां कुरु ॥ १५ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य
रक्षाकाल(कर)स्तवः समाप्तः ।

रत्नमालास्तोत्रम्

आचार्यवनरत्नपादविरचितम्

लोकेश्वरं विमलशून्यकृपार्द्रचित्तं
मार्गज्ञताप्रथितदेशनयार्थवाचम् ।
सर्वज्ञतादिपरिपूर्णविशुद्धदेहं
ज्ञानाधिकारललितं शिरसा नमामि ॥ १ ॥

वैनेयभेदवशतो बहुधावभासै-
रेकोऽपि पात्रगजलेषु शशीव यस्मात् ।
संलक्षसे परहितानुगतैव तस्माद्
बुद्धिस्त्वहो परम विस्मयनीयरूपा ॥ २ ॥

संपूर्णचन्द्रवदने ललितो ललाट-
देशाद्विनिर्गतमहेश्वरदेवपुत्रः ।
वैनेयशाम्भवजनप्रतिबोधनार्थं
देवाधिदेवप्रतिमानुज ईश्वरस्त्वम् ॥ ३ ॥

वैनेयकोमलभवप्रतिबोधनाय
किं धाम संभृत महाशुभलक्षणं ते ।
निर्यात एव हि पितामहदेवपूजां
लोकेश्वरेश्वरपरं शिरसा नमामि ॥ ४ ॥

वैनेयवैष्णवजनप्रतिबोधनाय
राजीवपाणिहृदयात् प्रतिनिःसृतोऽसौ ।
नारायणोऽपि भुवनेश्वर एव तस्मात्
पुंसां त्वमेव परमोत्तम एव नान्यः ॥ ५ ॥

चन्द्रार्कसादरबलाहितभक्तिभाजां
संदर्शनार्थमिभनीलसुलोचनाभ्याम् ।
यन्निःसृतौ शशिरवी भुवि लोचनाभ्यां
ध्वस्तान्तरालतमसं तमहं नमामि ॥ ६ ॥

सारस्वतीविनययोजितभक्तिभाजां
बोधाय वै भगवतीह सरस्वतीयम् ।
दृष्टाग्रतस्तव जिनात्मजपप्रसूता
प्रज्ञाभिलाषिफलदं तमहं नमामि ॥ ७ ॥

वैनेयवायुजनिताक्षरमार्गसिद्ध्यै
यो लोकनाथ सुगतोऽथ विनिःसृतोऽसौ ।
देवः समीरणवरो भुवि जन्मभाजा-
मीर्यापथार्थफलदं तमहं नमामि ॥ ८ ॥

वैनेयवारुणशिवायनमीप्सितानां
संबोधनार्थमुदरात्सुगतात्मजानाम् ।
यन्निःसृतो वरुणदेववरोऽप्यकस्मा-
दैश्वर्यसिद्धिफलदं तमहं नमामि ॥ ९ ॥

वैनेयसंमतफलाद्यभिलाषिणो वै
संसिद्धये प्रवरलक्षणपादपद्मे ।
यन्निःसृता भगवती धरणी प्रसिद्धा
त्रैलोक्यनाथमसमं सततं नमामि ॥ १० ॥

संसारमुक्तमपि सुस्थितमेव तत्र
कारुण्यतश्च भवचारिणि सत्त्ववर्गे ।
भूयात् स्थितिर्मम सदास्थिरसा भवन्त-
मेवं महाशयवरं परमं नमामि ॥ ११ ॥

एकेन पादतलकेन भवत्स्वकेन
चक्रान्तसंवरमनन्तरलोकधातौ ।
कल्पान्तदग्धभुवने ज्वलितोग्रवह्नि-
निःश्वासवायुबलतस्तव निर्वृतः स्यात् ॥ १२ ॥

त्वां तर्जनीं मुखधृतोऽहिततर्जनेन
संचालिताश्च बहुमेरुगणा नखस्य ।
कोषोद्धृतं जलधितोयमशेषतः स्यात्
सामर्थ्यमीदृशमहो भवतः कुतोऽन्यत् ॥ १३ ॥

क्वेदं च शैशवपरं ननु चारुरूपं
संदर्शनीयवरकोमलबालचन्द्रम् ।
दुर्वारमारमथनं च मयैकसह्यं
विक्रान्तदुःसहपरं क्व च चेष्टितं ते ॥ १४ ॥

एषा बताञ्जननिभोरुजनावली सा
कौटिल्यचारुविकटा स्वशिरोरुहाग्रे ।
क्लेशेन्धने ज्वलितविस्फुरितत्ववह्ने-
र्धूमावलीव विमला ननु लक्ष्यते ते ॥ १५ ॥

त्वत्कान्तिलेशविमला दशदिक्प्रतानैः
पक्षासितक्षयकृशा सकला सुशोभा ।
पर्यन्त इष्टशशिनो भुवनेषु यत्ते
मन्ये विराजि निखिलं तव कान्तिलेशात् ॥ १६ ॥

बन्धुर्हि को मार्गिकसंमतं मतं नरो नरी सा स च सत्पथं पथम् ।
परार्थसंपादितसंवरं वरं नमामि भूमीश्वरराजिनं जिनम् ॥ १७ ॥

अनित्यनिर्वाणपदे स्थितं स्थितं प्रभास्वराधिष्ठितसंहितं हितम् ।
शमीकृताशेषजनं शिवं शिवं नमामि भूमीश्वरराजिनं जिनम् ॥ १८ ॥

गभस्तिमालामितसंकुलं कुलं तत्र स्वपाणौ धृतपङ्कजं कजम् ।
रतानुगाशोभितसंरतं रतं नमामि भूमीश्वरराजिनं जिनम् ॥ १९ ॥

स्वधर्मधातुं करुणापरं परं शुभादिसंभारसुसंभृतं भृतम् ।
विकल्पहीनं ध्वनिदेशकं शकं नमामि भूमीश्वराजिनं जिनम् ॥ २० ॥

तथतातथताद्वयशातशतं सदसत्परिपूरितधर्मकथम् ।
कथनीयविराजितसत्यपरं प्रणमे धरणीश्वरराजवरम् ॥ २१ ॥

वरवारिजरूपि जगत्प्रसरं सरसीरुहलोचनचारुतरम् ।
तरसापि रसत्वविशुद्धिपरं प्रणमे धरणीश्वराजवरम् ॥ २२ ॥

वरनिर्मितभोगपरार्थरतं रतशून्यनिरञ्जनधर्मधरम् ।
धरणीन्द्रविभूषितसिद्धिपरं प्रणमे धरणीश्वरराजवरम् ॥ २३ ॥

वरसत्सहजोदधिचन्द्रमुखं सुखभाषितसत्त्वविमुक्तिपदम् ।
पदभूषणलक्षणतानुपरं प्रणमे धरणीश्वरराजवरम् ॥ २४ ॥

लोकेश्वरेयं(मां) तव रत्नमालामचीकरच्छ्रीवनरत्नपादः ।
अवापि यत्तेन शुभप्रविष्टं तेनैव लोकोऽस्तु समन्तभद्रः ॥ २५ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य
रत्नमालास्तोत्रं समाप्तम् ।

रूपस्तवः

सर्वभूतमणिकम्पित तुभ्यं
क्षान्तिमेव चरितं तव रूपम् ।
सर्वरूपवरदिव्यसुरूपं
तं नमामि दशबलवररूपम् ॥ १ ॥

भृङ्गराजशिखिमूर्ध्नि सुकेशं
कोकिलाभशिखिदिव्यसुकेशम् ।
स्निग्धनीलमृदुकुञ्चितकेशं
तं नमामि दशबलवरकेशम् ॥ २ ॥

शङ्खकुन्दकुमुदं विमरोमं
जन्मदुःखविगतं विमरोमम् ।
रोगशोकविमते विमरोमं
तं नमामि दशबलवररोमम् ॥ ३ ॥

पूर्णचन्द्रद्युतिशोभितवक्त्रं
तुङ्गनासमणिभाशुभवक्त्रम् ।
बुद्धपङ्कजिनभामरवक्त्रं
तं नमामि दशबलवरवक्त्रम् ॥ ४ ॥

रश्मिसहस्रविचित्रसुमूर्ध्नि
पुष्पवर्षशतपूजितमूर्ध्नि ।
रत्नवर्षशतपूजितमूर्ध्नि
तं नमामि दशबलवरमूर्ध्नि ॥ ५ ॥

नेत्रपताकविलम्बितशीर्षं
काञ्चनछत्रवरोपितशीर्षम् ।
नेत्रवितानसुशोभितशीर्षं
तं नमामि दशबलवरशीर्षम् ॥ ६ ॥

दिव्याम्बरमुकुटं मणिमुकुटं
चन्द्रप्रभामुकुटामणिमुकुटम् ।
आगतशीर्षमखण्डितमुकुटं
तं नमामि दशबलवरमुकुटम् ॥ ७ ॥

चारुदलायतपङ्कजनेत्रं
दिव्यज्ञानविपुलायतनेत्रम् ।
ध्यानमोक्षशुभसंस्कृतनेत्रं
तं नमामि दशबलवरनेत्रम् ॥ ८ ॥

शुद्धकर्णशुभशुद्धसुकर्णं
शुद्धप्रज्ञवरशोभितकर्णम् ।
शुद्धज्ञानवरशुद्धसुकर्णं
तं नमामि दशबलवरकर्णम् ॥ ९ ॥

शुभ्रकुन्दशशिपङ्कजदन्तं
तीक्ष्णसुलक्षणनिर्मलदन्तम् ।
विश्वपञ्चदशपञ्चसुदन्तं
तं नमामि दशबलवरदन्तम् ॥ १० ॥

उच्चवाक्यससुरासुरजिह्वां
धर्मज्ञानकृतपापदजिह्वाम् ।
गन्धधूपससुरासुरजिह्वां
तं नमामि दशबलवरजिह्वाम् ॥ ११ ॥

मेघसुदुन्दुभिनादितघोषं
सत्यधर्मनयसुविदितघोषम् ।
दिव्यवादिपरवादितघोषं
तं नमामि दशबलवरघोषम् ॥ १२ ॥

ग्रीवग्रीवदशग्रीवसुग्रीवं
क्षान्तिवीर्यं तव ग्रीवसुग्रीवम् ।
हेमवर्णमणिग्रीवसुग्रीवं
तं नमामि दशबलवरग्रीवम् ॥ १३ ॥

सिंहकायहिमकुन्दसुकायं
ध्यानकायगुणसागरकायम् ।
अष्टसुलक्षणनिर्मलकायं
तं नमामि दशबलवरकायम् ॥ १४॥

श्वेतरक्तशुभशोभितवस्त्रं
नीलपीतहरितायितवस्त्रम् ।
हारधवलशुभशोभितवस्त्रं
तं नमामि दशबलवरवस्त्रम् ॥ १५॥

हेमनागकरसंस्कृतबाहू
पुष्पदानकृतशोभितबाहू ।
धीरवीर्यसुमनोहरबाहू
तं(तौ) नमामि दशबलवरबाहू ॥ १६॥

चामरचक्रसुशोभितहस्तं
विमलसुकोमलपङ्कजहस्तम् ।
भूतप्रेतशरणागतहस्तं
तं नमामि दशबलवरहस्तम् ॥ १७॥

रागद्वेषतनुर्वर्जितचित्तं
कल्पकोटिसमभावितचित्तम् ।
शीलज्ञानसमभावितचित्तं
तं नमामि दशबलवरचित्तम् ॥ १८॥

पद्मनाभशुभशोभितनाभं
पद्मयोनिशुभशोभित नाभम् ।
ब्रह्मज्योतिसुशोभितनाभं
तं नमामि दशबलवरनाभम् ॥ १९॥

चक्रसुलक्षणभूषितपादं
अङ्कुशशक्तिविराजितपादम् ।
नागयक्षगणवन्दितपादं
तं नमामि दशबलवरपादम् ॥ २०॥

भास्करद्युतिराजितपादं
देवदानवगणवन्दितपादम् ।
सर्वदेवगणवन्दितपादं
तं नमामि दशबलवरपादम् ॥ २१ ॥

सर्वदेवगणपूजितशीर्षं
सूर्यकोटिसमभावितशीर्षम् ।
दिव्यज्वालज्वलितार्पितशीर्षं
तं नमामि दशबलवरशीर्षम् ॥ २२ ॥

पुष्पधूपशतपूजितशीर्षं
दीपगन्धशतपूजितशीर्षम् ।
माल्यवस्त्रशतपूजितशीर्षं
तं नमामि दशबलवरशीर्षम् ॥ २३ ॥

त्रिभुवनधर्मकलाभ्युष्णीष-
रत्नछत्रमुकुटादिपूजितम् ।
ये पठन्ति सुगतस्तवमेनं
ते लभन्ति शुभमोक्षपथाधिगमम् ॥ २४ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य रूपस्तवं समाप्तम् ।

लोकनाथस्तोत्रम्

कल्पादिके भवसि को हि ममागभाव
सर्वस्वसार करुणामय विश्वमूर्ते ।
कार्यादिके प्रणमतीति समन्तकं त्वां
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ १ ॥

आक्रुष्णकेन रजसा विनिवर्तमान-
श्चायासि सौम्य सकलः प्रतिवासरे च ।
हेमस्वरूपरथकेन समुज्ज्वलेन
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ २ ॥

ब्रह्मा त्वमेव हि स विप्रकुलप्रसिद्धो
विष्णुश्च वैष्णवमते वरधर्मकेतुः ।
सर्वज्ञकोऽसि विमते प्रभवोऽव्ययश्च
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ ३ ॥

बौद्धान्वये भवसि वज्रकसूर्यरूपो
योगेश्वरो हि शुभयोगकमार्गकेषु ।
गङ्गाधरो भवभयस्य विनाशकारि
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ ४ ॥

कारुण्यभावहृदयः सहजः सरोचि-
र्विच्छिन्नकलमषचयो गुणसागरश्च ।
चिन्तामणिस्त्वमसि लोकगुरुः कृपेश
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ ५ ॥

बन्धूकवर्ण बहुरूप विशालनेत्र
सर्वप्रसूतिकृतनिष्कृतिकः सुदन्त ।
त्वं पद्मपाणि विमलोत्तम मित्ररूपः
श्रीलोकनाथ तव पादयुगं नमेऽहम् ॥ ६ ॥

तव बहुलचरित्रं कः समर्थोऽस्ति वक्तुं
तदपि मुखरभावैः स्तूयसे त्वं मयात्र।
यदपि पदमशुद्धं सर्वमेतत् क्षमस्व
स्तुतिरिति कुसुमस्रक् भक्तिमात्रार्चनं स्यात् ॥ ७ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारकस्य स्तोत्रं समाप्तम्।

लोकातीतस्तवः

लोकातीत नमस्तुभ्यं विविक्तज्ञानवेदिने ।
यस्त्वं जगद्धितायैव खिन्नः करुणया चिरम् ॥ १ ॥

स्कन्धमात्रविनिर्मुक्तो न सत्त्वोऽस्तीति तेन तम् ।
सत्त्वार्थं च परिखेदमगमस्त्वं महामुने ॥ २ ॥

तेऽपि स्कन्धास्त्वया धीमन् धीमद्भ्यः संप्रकाशिताः ।
मायामरीचिगन्धर्वनगरस्वप्नसन्निभाः ॥ ३ ॥

हेतुतः संभवो येषां तदभावान्न सन्ति ये ।
कथं नाम न तत्स्पष्टं प्रतिबिम्बसमागताः ॥ ४ ॥

भूतान्यचक्षुर्ग्राह्याणि तन्मयं चाक्षुषं कथम् ।
रूपं त्वयैवं ब्रुवता रूपग्राहो निवारितः ॥ ५ ॥

वेदनीयं विना नास्ति वेदनाऽतो निरात्मिका ।
तच्च वेद्यं स्वभावेन नास्तीत्यभिमतं तव ॥ ६ ॥

संज्ञार्थयोरनन्यत्वे मुखं दह्येत वह्निना ।
अन्यत्वेऽधिगमाभावस्त्वयोक्तो भूतवादना ॥ ७ ॥

कर्ता स्वतन्त्रः कर्माऽपि त्वयोक्तं व्यवहारतः ।
परस्परापेक्षिकी तु सिद्धिस्तेऽभिमताऽनयोः ॥ ८ ॥

न कर्ताऽस्ति न भोक्ताऽस्ति पुण्यापुण्यं प्रतीत्यजम् ।
यत्प्रतीत्य न तज्जातं प्रोक्तं वाचस्पते त्वया ॥ ९ ॥

अज्ञाप्यमानं न ज्ञेयं विज्ञानं तद्विना न च ।
तस्मात् स्वभावतो न स्तो ज्ञानज्ञेये त्वमूचिवान् ॥ १० ॥

लक्ष्याल्लक्षणमन्यच्चेत् स्यात्तल्लक्ष्यमलक्षणम् ।
तयोरभावोऽनन्यत्वे विस्पष्टं कथितं त्वया ॥ ११ ॥

लक्ष्यलक्षणनिर्मुक्तं वागुदाहारवर्जितम् ।
शान्तं जगदिदं दृष्टं भवता ज्ञानचक्षुषा ॥ १२ ॥

न सन्नुत्पद्यते भावो नाप्यसन् सदसन्न च ।
न स्वतो नापि परतो न द्वाभ्यां जायते कथम् ॥ १३ ॥

न सतः स्थितियुक्तस्य विनाश उपपद्यते ।
नासतोऽश्वविषाणेन समस्य समता कथम् ॥ १४ ॥

भावान्नार्थान्तरं नाशो नाप्यनर्थान्तरं मतम् ।
अर्थान्तरे भवेन्नित्यो नाप्यनर्थान्तरे भवेत् ॥ १५ ॥

एकत्वे नहि भावस्य विनाश उपपद्यते ।
पृथक्त्वेन हि भावस्य विनाश उपपद्यते ॥ १६ ॥

विनष्टात् कारणात्तावत् कार्योत्पत्तिर्न युज्यते ।
न वाऽविनष्टात् स्वप्नेन तुल्योत्पत्तिर्मता तव ॥ १७ ॥

निरुद्धाद्वाऽनिरुद्धाद्वा बीजादङ्कुरसंभवः ।
मायोत्पादवदुत्पादः सर्व एव त्वयोच्यते ॥ १८ ॥

अतस्त्वया जगदिदं परिकल्पसमुद्भवम् ।
परिज्ञातमसद्भूतमनुत्पन्नं न नश्यति ॥ १९ ॥

नित्यस्य संसृतिर्नास्ति नैवानित्यस्य संसृतिः ।
स्वप्नवत् संसृतिः प्रोक्ता त्वया तत्त्वविदांवर ॥ २० ॥

स्वयं कृतं परकृतं द्वाभ्यां कृतमहेतुकम् ।
तार्किकैरिष्यते दुःखं त्वयातूक्तं प्रतीत्यजम् ॥ २१ ॥

यः प्रतीत्यसमुत्पादः शून्यता सैव ते मता ।
भावः स्वतन्त्रो नास्तीति सिंहनादस्तवातुलः ॥ २२ ॥

सर्वसङ्कल्पहानाय शून्यतामृतदेशना ।
यस्य तस्यामपि ग्राहस्त्वयाऽसाववसादितः ॥ २३ ॥

निरीहावशिकाः शून्या मायावत् प्रत्ययोद्भवाः ।
सर्वधर्मास्त्वया नाथ निःस्वभावाः प्रकाशिताः ॥ २४ ॥

न त्वयोत्पादितं किञ्चिन्न किञ्चिच्च निरोधितम् ।
यथा पूर्वं तथा पश्चात् तथतां बुद्धवानसि ॥ २५ ॥

आर्यैर्निषेवितामेतामनागम्य हि भावनाम् ।
अनिमित्तस्य विज्ञानं भवतीह कथंचन ॥ २६ ॥

अनिमित्तमनागम्य मोक्षो नास्ति त्वमुक्तवान् ।
अतस्त्वया महायाने तत् साकल्येन दर्शितम् ॥ २७ ॥

यदवाप्तं मया पुण्यं स्तुत्वा त्वां स्तुतिभाजनम् ।
निमित्तबन्धनापेतं भूयात् तेनाखिलं जगत् ॥ २८ ॥

श्रीलोकातीतस्तवः समाप्तः ।

लोकेश्वरशतकम्

वज्रदत्ताचार्यविरचितम्

ॐ नमो लोकनाथाय ।

भास्वन्माणिक्यभासो मुकुटभृति नमन्नाकनाथोत्तमाङ्गे
भक्तिप्रह्वे सरोजासनशिरसि हसन्मालतीमालिकाभः ।
मौलौ मीलन्मृगाङ्कामक्रशकपिशतां शाम्भवे शातयन्त्यो
लोके लोकेशपादामलनखशशभृत्कान्तयः सन्तु शान्त्यै ॥ १ ॥

निर्धूता धूर्जटीन्दोर्न खलु पटु जटापिङ्गमासङ्गशारैः
सारैरारान्मयूखैर्न च हरिमुकुटामन्दमाणिक्यभाभिः ।
कालिम्नो नापि लीना विबुधगणलसत्कुन्तलालीनलीना-
ल्लोकेश्वर्योऽनिवार्याश्चरणनखरुचः सन्तु वो ध्वान्तशान्त्यै ॥ २ ॥

पर्याप्तोदारकोषस्फुटतरकमलाभोगसंपत्तिहेतु-
र्दूरीभूतप्रियाणामपहृतविषमातङ्कशङ्का जनानाम् ।
न क्षिप्तालङ्घनैरप्युपशमिततमोदुर्ग्रहोद्भूतभीति-
र्लोकेशाङ्घ्र्योरपूर्वा नखशिशिररुचां चन्द्रिका वः पुनातु ॥ ३ ॥

निःशेषं क्लेशराशीन्धनदहनमहापावकोच्चैः शिखा वो
लीलालोकास्त्रिलोक्यामपहृतगहनाबद्धमोहान्धकाराः ।
वह्निस्कन्धेष्ववन्ध्या नरकभुवि सुधावारिविस्तारधाराः
संसारीं संहरन्तां नखनिवहरुचः पद्मभृत्पादजाताः ॥ ४ ॥

स्वच्छन्दच्छेदिवाञ्छावितरणचतुराचिन्त्यचिन्तामणीनाम्
उद्गाढातङ्कशङ्कोद्गमशमनमनोहारिणी हारभासाम् ।
स्पष्टाविर्भूतनानागुणनिवहधृतादर्शबिम्बच्छवीनां
छाया वः पातु लोकेश्वरचरणभुवामुन्मयूखा नखानाम् ॥ ५ ॥

नाथस्योदञ्चदुच्चामितरुचिरुचिभी रोचमानोरुचूडा-
रोचिष्णोरुच्चकासच्चरणनखरुचां संचयोऽसौ चिरं वः ।
अत्युच्चीयात् तदर्चाचतुरसुरशिरश्चारुरत्नोच्चयोच्चै-
र्नानानिश्चारिरोचिश्चयरचितशचीरुच्यचापोपचारः ॥ ६ ॥

श्रीमद्भोगोन्नतीनामभिमतविषयप्राप्तिदानादहीनां
सेवाभाजां समन्तादविचलितरुचः प्रीतिमुत्पादयन्तः।
वैमल्यातुल्यबिम्बोपहसितशशिनः शातितध्वान्तदोषा-
स्तोषं माणिक्यदीपा इव ददतु नखाः पद्मपाणेः पदोर्वः॥ ७॥

राजद्राजीवपाणेर्नखनिवहरुचां पादपद्मोद्भवानाम्
उद्भेदो भेदकोऽसौ भवतु भवभियां निर्भराणां भरं वः।
जातस्तद्देहभूमेरविरतकरुणावारिदत्तोपकारो
योऽनल्पः कल्पवृक्षाङ्कुरनिकर इवोपात्तविज्ञानबीजः॥ ८॥

लोकेशस्याङ्घ्रिपद्मप्रभवनखरुचो दत्तमारारिसेना-
संत्रासाः शोणतूणोन्मुखनिहितफलामोघबाणांशुशोभाः।
शश्वत्संसारघोरावटपतितजनोत्तारणासज्जरज्जु-
प्रारोहा रोहयन्तां दुरधिगममहासंपदुच्चैः पदं वः॥ ९॥

भास्वन्तः क्लेशकर्मश्रमविवशजगत्तापविच्छेदशूरां
दूराद्दोषोपलब्धेः पटुबुधगुरवस्तारका ये जनस्य।
सान्द्रानन्दं ददानाः सकलशशधरश्रीभृतो निष्कलङ्का-
स्ते वश्चिन्तामचिन्त्याः कमलकरनखाः पादजाता जयन्तु॥ १०॥

भास्वत्खण्डेन्दुखण्डैरपचितिरचना किं कृता शम्भुनेयं
न्यस्ता रत्नावली वा किमु निरतिशयोत्कण्ठया बोधिलक्ष्म्या।
देवैर्दिव्याद्भुतानामसमसुमनसां लम्बिता मालिका नु
प्रीयात्पङ्क्तिर्नखानामिति जनितमतिर्लोकनाथाङ्घ्रिजा वः॥ ११॥

क्वायं राजीवजन्मा नमदमरशिरस्तुङ्गमाणिक्यशय्या-
शश्वत्सुप्ताङ्घ्रिरेणुः क्व च धरणितलालम्बमौलिप्रणामः।
इत्थं संजातहासा इव रुचिनिचयैर्दन्तुरा ये दुरन्त
ध्वान्तच्छेदाय लोकेश्वरचरणभवास्ते नखा वो भवन्तु॥ १२॥

शूरास्तापापहारे शिशिरतरसुधाशीकरासारकाराः
प्राकाराः क्रूरदूरप्रसरदुरुशरासारमारापकारे।
संसाराकारकारागृहबृहदुदरोदारदुःखप्रकारं
घोरं वः संहरन्तां चरणनखरुचः श्रीकराः पद्मपाणेः॥ १३॥

भासो लोकेशपादप्रभवनखभुवां दूरदुर्वारमार-
व्यामुक्तव्यापिबाणावरणजवनिकाभ्रान्तिमुत्पादयन्त्यः ।
संक्लेशानीकनाशस्फुटपिशुनमहाकेतुसंघातकल्पा-
स्त्रैलोक्याशक्यशक्तित्रिभवजयबृहद्वैजयन्त्यो जयन्ति ॥ १४ ॥

सम्यक्संबोधिचेतः शशिन इव समुद्भासिभासां समूहो
निर्दग्धक्लेशभूतिप्रचय इव बृहन्मुक्तिमार्गानिलास्तः ।
विन्यस्तादभ्रशुभ्रोपलफलक इव क्रूरमारैरभेद्यः
पायादुत्प्रेक्षितो वो नखरुचिनिकरः पादजः पद्मपाणेः ॥ १५ ॥

वैलक्ष्येणेक्षणीयाः क्षणमसमतमःक्षेपदक्षाः क्षपाणां
नाथेनाक्षुण्णपक्षक्षतिनिजविपदा निष्कलङ्काक्षया ये ।
अक्षीणारातिपक्षक्षपणपटुजगद्रक्षणाक्षुण्णदीक्षा-
रक्षा रक्षन्तु लोकेश्वरचरणनखास्तेऽक्षणक्षेपतो वः ॥ १६ ॥

सत्संपत्साधनस्य प्रवरकमलभृत्पाददुर्गाश्रयस्य
त्रैलोक्यश्रीजिगीषोर्नखरुचिनिवहस्यातुलोऽभ्युच्चयो वः ।
मित्रेणाप्तोदयेन स्फुटमनुवलतालम्भितात्यन्तवृद्धेः
पायात् सापायसर्वव्यसनरिपुमहायानसंसिद्धिहेतुः ॥ १७ ॥

अव्रीडश्चूडयाऽसौ वहति पशुपतिः काममर्धेन्दुभूषां
शौरेः शोभाभिलाषः कथमपि कृतिनः कौस्तुभेनास्तमेति ।
दृष्टेऽस्मिन् सोऽपि मोघो मघवमणिमहामौलिरित्याप्तचित्तै-
र्यत्कान्त्याचिन्ति लोकैश्चरणनखगणः पद्मपाणेः स जीयात् ॥ १८ ॥

आरादुच्चैरुदञ्चत्कृतविततिरधस्तारको नारकाणाम्
उद्यन्नीहाररोचिः शुचिररविदनश्यामतापातहेतुः ।
दुर्विज्ञेयानुभावो निखिलजगदतिस्पष्टदृष्टिप्रकाशः
पादाम्भोजावलम्बी नखकिरणचयः पातु वो बुद्धमौलेः ॥ १९ ॥

दृष्टो हृष्टामरेशार्चनचतुरवधूमुक्तकर्पूरपांशु-
प्रोद्भासो भक्तिभारप्रवणहरजटाभूतिविभ्रान्तभूमिः ।
पूजाविक्षिप्तलक्ष्मीकरकमलगलत्केशराग्राणुरेणु-
च्छायः पायादपायान्नखकरविसरः पद्महस्ताङ्घ्रिजो वः ॥ २० ॥

मेरौ निष्पीतपीतद्युतिरमरकरिस्फारसिन्दूरधूली-
शोणश्रीशान्तशूरो हरितहरिहयाहीनहारित्यहारी ।
मीलन्नीलावभासो नखरुचिविसरः पद्मभृत्पादपद्माद्
उद्यद्दुग्धाब्धिवृद्धित्रसदमरवधूवीक्षितो रक्षताद् वः ॥ २१ ॥

शोभा संभाव्यतेऽस्मिन् हिमकरधवलैर्नामरैश्चामरैर्वा
भक्त्यारम्भेण रम्भे परिकिरसि मुधा किं नु कर्पूरधूलीः ।
किं ते पुष्पैः प्रकीर्णैः शचिशुचिभिरिति स्वामिना स्वर्भुवां वः
पूजायामब्जपाणेर्नखरुचिनिवहः पादजो वर्णितोऽव्यात् ॥ २२ ॥

कैलासोद्भासिविन्ध्ये कवलितबलिजित्कायकालिम्नि काली-
लीलालावण्यलेपे विहतहरितिमश्वेतपूषाश्वरश्मौ ।
लोकेशाङ्घ्रेर्नखानामुरुकरनिकरे किं मयेतीव शीर्णं
शीतांशोः पातु पूजाचतुरसुरजनाकीर्णकुण्डच्छलाद् वः ॥ २३ ॥

पादाः पादोद्भवानामतिविततिभृतां बुद्धमौलेर्नखानां
पारे संसारयादःपतिगमनमहासेतुबन्धायमानाः ।
उद्यद्दुर्वारदुःखानलशमनमहापुण्यसंभारवारि-
स्वच्छन्दाच्छच्छटाभा झटिति विघटनं कुर्वतां वो भवस्य ॥ २४ ॥

कालीकान्तेन्दुकान्तेः परिभवविधृतिर्भूरिकैलासभूभृद्-
भासां हासावगीतिर्हृतिरपि हिमवद्गौरतागौरवस्य ।
क्षीराकूपारपूरप्लुतिरपि ककुभां नाकनागीयदन्त-
च्छेदच्छायाक्षतिर्वो नखरुचिविततिः पातु लोकेश्वराङ्घ्र्योः ॥ २५ ॥

यत्पूजापारिजाते वलितमलिकुलं मीलति श्रीसरोजे
सेवासक्तः स्वयंभूर्मुकुलितनलिनाद् दुःस्थितो यत्र तस्थौ ।
येनाश्यामा दिनश्रीः शमितसुरवधूक्लान्तिदोषा निशाऽभूत्
पादोऽसौ पद्मपाणेर्नखविधुविलसच्चन्द्रिकः पातु युष्मान् ॥ २६ ॥

कान्तो विभ्रान्तकान्तामरयुवतिजनैरर्चितो दृष्टिपातैः
शुभ्रं विभ्राण्मृणालीनिकरमिव नखोद्योतनोद्भूतशोभः ।
कामीवानल्पकामप्रसरपरवशानेकचर्याप्रवृत्तः
पादो वः पद्मपाणेरवतु सुरपुरीचन्दनामन्दचर्चः ॥ २७ ॥

आनन्दामन्दभारोल्लसदमरकरैः पारिजाते विकीर्णे
कालीयः कालकूटोत्कटपटल इव प्रोल्लसद्भृङ्गसार्थे ।
श्रेयो वः श्रीर्विधत्तामलममलनखद्योतदुग्धाब्धिमध्याद्
उद्यन्ती पद्मपाणेश्चरणसरसिजस्याच्युतप्रीतिहेतोः ॥ २८ ॥

वाञ्छाविच्छित्तिखेदोच्छलदनलशिखाछेदकच्छोच्छ्रयो वः
पद्मच्छायानुकारच्छलितमधुकराच्छादनाच्छादितश्रीः ।
स्वच्छन्दानच्छमूर्छच्छुचिनखकिरणोच्छूनगुच्छैरतुच्छो
देयात् पादोऽब्जकान्तिच्छुरितकररुचोऽच्छिन्नमिच्छामकृच्छ्रात् ॥२९॥

उद्भूतोद्भासिचक्रद्युतिरमलनखैरद्वितीयोदितश्री-
र्बिभ्राणो लक्षणानां गणमतुलगुणागण्यपुण्योपनीतम् ।
निःशेषद्वीपदीपप्रभवदतिमहद्वैभवो बुद्धमौलेः
पायात् पादो नमस्यद्भुवनपतिशिरश्चक्रवर्ती चिरं वः ॥ ३० ॥

कीर्णैराकाशगङ्गाकनककमलिनीकुड्मलैः को गुणोऽस्मिन्
किं गीतैर्गीतमेव स्फुटसरसिरुहभ्रान्तिभृङ्गावलीभिः ।
शक्यं माणिक्यदाम्नामिह रुचिरनखे शोभितुं नेत्यवादीद्
यत्पूजायां सुरेशः स जयति चरणो वारिजव्यग्रपाणेः ॥ ३१ ॥

यो नाथस्यैव नासीदपि खलु सुगतेः कारणं जन्मभाजां
यस्मिन् पद्माभिलाषी न मधुपनिवहः पक्षपाती जनोऽपि ।
येनोर्वी नातिगुर्वी नतिमतिगुरुणा लम्भितापि त्रिलोकी
लोकं पादः स पायात् सुगतशशधरद्योतविद्योतमौलेः ॥ ३२ ॥

योऽलीनां पानदानादकृत धृतमुदं संहतिं सेवकानां
यस्मिन्नालं विहीनं न खलु हरितताऽत्यन्तशोभोपधानम् ।
देयाद्वो लोकनाथश्चिरममरशिरःशायिरेणूत्करोऽसौ
श्रेयः श्रीवासभूमिर्नखकिरणहसत्केशरः पादपद्मः ॥ ३३ ॥

देहद्रोहावहोग्राहितहतिविहितो देहिनां हेतिरीहा-
सिद्धेराहूतिराहो हृतिरतिमहतो बृंहतांहोमहिम्नः ।
क्लेशव्यूहाहितेहाहुतिविहितबृहद्द्रोहिदुःखाग्निदाह-
व्यापोहा वांहिनी स्ताद्बहुविहितहिता पद्महस्ताङ्घ्रिभावः ॥ ३४ ॥

बुद्धालंकारमौलेरविकलकमलभ्रान्तिभृद्भृङ्गमाला
वाचाला निर्विचारा रचयतु चरणोत्सर्पिणी संपदं वः।
सत्त्वत्राणैककार्या स्थिरतरसुचिरावस्थितिस्थापनार्थं
विन्यस्ता शृङ्खलेव प्रचुरकरुणया स्थूलकालायसस्य ॥ ३५ ॥

राजीवान्तःपलाशावलिरुचिरमृदुर्वज्रसारो विसारो
क्रुध्यद्वैरिप्रमुक्तप्रहरणनिवहस्योद्भवद्भङ्गभूमिः ।
रक्तो रागोपशान्तेरतिशयबलवत्कारणं तारणायां
संसाराम्भोनिधेर्वः सुगतशशिभृतोऽपास्तखेदोऽस्तु पादः ॥ ३६ ॥

जम्भारेर्जृम्भिताम्भोरुहरुचिरचये चापलेनाप्यलीना
नालं लोलापि लोला हरकरविहितानन्दकुन्दोत्करेऽपि ।
भ्राजिष्णौ विष्णुकीर्णे परिमलिनि पुरः पारिजातेऽप्यजात-
प्रीतिर्यत्रालिमाला रमति जिनभृतः सोऽङ्घ्रिपद्मोऽवताद् वः ॥ ३७ ॥

भूयादुद्भूतभूरिद्युतिनिवहलसत्केशरोद्भासुरो वो
रक्तच्छायानुविद्धोन्मुखनखदशनोद्भासिकान्त्या करालः ।
त्रस्यद्दुर्वृत्तवैरिद्विपतरलचलल्लोचनालोकनीयो
लोकेशस्याङ्घ्रिसिंहः कमलभवजटारण्यशायी शिवाय ॥ ३८ ॥

अच्छीयानप्यनच्छो लघुरपि न लघुर्लङ्घने दिङ्मुखानां
त्रैलोक्यानन्दनोऽपि प्रबलपरपुरव्यापिसन्तापहेतुः ।
लावण्यालेपलिप्तोऽप्यतिशयमधुरो वैधुराधेर्निरोद्धा
पादोद्द्योतः क्रियाद् वो जिनरुचिविकसन्मालिकाशेखरस्य ॥ ३९ ॥

राजीवै राजराजो हरिरपि हरितैर्हारिभिः पारिजातैः
कुन्दैः सानन्दमिन्दुर्बहुवसुविसरैर्वासवो भासमानैः ।
प्रीतः पाशी पलाशैरिति विबुधजनः प्राज्यपूजाविशेषं
यत्रानुप्रासकाव्यायितमतत स वः पातु पादोऽब्जपाणेः ॥ ४० ॥

भानुर्भासां विकाशे नुतिमकृत नखेषून्मुखो नाकनाथः
शर्वः शाखाग्रपर्वण्यविचलनयनोऽप्यन्तकः प्रान्तकान्तौ ।
यस्यासामान्यशोभाविषयमतिशयं द्रष्टुमासीदनीशो
निःशेषं दिव्यलोकः स जयति चरणो बुद्धबिम्बाङ्कमौलेः ॥ ४१ ॥

सम्यक्संबुद्धभानुस्फुटविकटजटापुञ्जकुञ्जोरुमूर्तेः
संसाराम्भोधिमज्जद्गुरुतरजनतामेदिनीस्तम्भनस्य ।
भूयाद् भद्राय पादः कमलधरगिरेः सेवितः सिद्धसार्थैः
पर्यन्तोद्वान्तकान्तिस्रवदरुणमहाधातुमन्निर्झरो वः ॥ ४२ ॥

संसाराध्वप्रबन्धश्रमसकलजगत्क्लान्तिसंशान्तिहेतु-
च्छायस्येच्छाफलस्य स्फुटनखकुसुमोद्भासिशाखाभृतो वः ।
लोकेशाङ्घ्रिद्रुमस्य प्रणतसुरजनैर्मौलिमालालवाले
मूले संपादितोऽव्यान्मणिकलशभृतः स्वच्छधामाम्बुसेकः ॥४३ ॥

संमूलक्लेशजालप्रबलरिपुबलोन्मूलनस्थूललाभा-
ल्लब्धोल्लासो विलासी बलविजयिलसन्मौलिलीलालयो वः ।
पादः पायादतुल्यामलकमलभृतोऽलीकफुल्लाब्जलोभ-
व्यालोलानल्पलापोल्लसदलिपटलाल्लुप्तसंगीतिलोलः ॥ ४४ ॥

त्रैलोक्यैश्वर्यलक्ष्मीचपलकरिवधूसंयमालानदण्डः
कष्टक्लेशाहिदष्टस्खलदखिलजगत्पालने दक्षतर्क्षः ।
दुर्वारान्तःप्रवेशाक्रुशनरकपुरे द्वारगाढार्गलो वो
भूत्यै लोकेशपादो भवजलधिसमुल्लङ्घनैकप्लवोऽस्तु ॥ ४५ ॥

इति पादुकादेशना

वृत्तो नृत्तप्रकारः सपदि विघटिता वाद्यविद्यानवद्या
नो गीतं नावगीतं कृतरसरचनैर्नैव भावैरभावि ।
इत्यन्तः स्मेरशाक्रे सदसि न शकिता यत्र पूजाप्सरोभिः
कर्तुं भावातुराभिः स जयति जनितातृप्तिरूपः सरोजी ॥ ४६ ॥

उद्दामस्थामवामक्रमविषममिलन्मारमानप्रमाथी
मध्यादुन्माथिमोहोद्गमममितमहोमौलिरायामभीमम् ।
श्रीमन्निःसीमभूमासममहिममहाकामधामातिभूमौ
सत्त्वप्रेमप्रकामप्रथितमृदुमना निर्विरामाश्रयो वः ॥ ४७ ॥

सारप्राकारघोरावरणनिवरणो बन्धनक्रूरदूर-
स्फारावारातिरौद्रे नरकनगरिकाकारधारिण्यरीणाम् ।
कारागारोदरे यः स्मरणशरणतां कारणाकातराणां
यातः सत्कारकारी गुरुतरकरुणः पातु लोकेश्वरो वः ॥ ४८ ॥

कल्पान्तोल्लासिहेलाचलदनिलचलोल्लोलकल्लोलमाला-
वाचाले नक्रजालाकुलकलिलजले वारिधावुल्ललन्तः ।
आलम्बे यस्य नीलोत्पलविमलमहाकुट्टिमालीनलीलाम्
आलीयन्ते लघीयः स जगति कमली पालनायालमस्तु ॥ ४९ ॥

धूमौघोबन्धबन्धीकृतविधुरविधुब्रध्ननिर्बन्धधामा
नीरोधोद्भेदबाधाबुधविबुधवधूधीरतोद्धारधुर्यः ।
यन्नामाधीतिधाराधरविधृतिकृतामेति धूमध्वजोऽपि
प्रध्वंसं साधु धेयान्निरवधि स विधिं बुद्धधारो धृतेर्वः ॥ ५० ।

क्रोधादुत्क्षिप्तकालायुधकरनिकरः क्रूरसूत्कारकारी
दानक्लिद्यत्कपोलाकुलमधुपकुलाकाण्डकालोरुकायः ।
क्रान्तो यन्नामकष्टाङ्कुशहतिकृपणः कातरेण करीन्द्रो
लोकेशः स प्रकामोपकरणकरुणः कामकृत्यं क्रियाद् वः ॥ ५१ ॥

सूत्कारिश्वासपोषाकृशविषवमथुप्लोषिरोषाश्रयाशा
दंशाशादर्शितास्या भृशततशिरसो नाशने दन्दशूकाः ।
यन्नामाशीविषेशद्विषि विशति विषां धीषु नश्यन्त्यनीशा
लोकेशः सोऽस्तु विश्वश्रयदतिविषमक्लेशराशेः शमाय ॥ ५२ ॥

गन्धोद्गारोरुगर्वग्रहणगजगणग्रासगीतोग्रवेगः
सावेगोदग्रगामी गलगहनगुहागाढगम्भीरगर्जः ।
योगैर्युग्योपयोगानगमि मृगपतिर्यद्गणोद्गीतियोगाद्
दुर्योगं वः स योगी स्थगयतु सुगतासङ्गितुङ्गोत्तमाङ्गः ॥ ५३ ॥

भूयोऽपायानुमेयः क्षतदयहृदयो भीविधायी विहाय
स्थेयान् शैलोपमेयः श्रयदलिगवयच्छायकायो निकायः ।
सद्योगोपायमायामय इव विलयं यातवान् यातवीर्यो
यत्पादध्यायिनेयः स सुगतनिलयो जायतां वो जयाय ॥ ५४ ॥

संत्रासावासभूमिं कलिविसरसरद्यादसं भास्वरासि-
प्रासप्रोल्लासिभङ्गं प्रसृतसितलसत्केतुसत्फेनहास्याम् ।
यत्सेवासाधुनावा द्विषदसमसमित्सारसेनास्रवन्तीं
सोत्साहाः संचरन्ते सुखमसुखमसौ संक्रियाद् वः सरोजी ॥ ५५ ॥

भूभृत्संभारभेदप्रभुकरविभवो भूरिभूभोगभीमं
बिभ्राणश्चित्रभानुं भवदतिभरभीसंभ्रमोद्भ्रान्तिभूतः ।
दम्भोलिर्भीतिभाजामभवदभिपतन्नाशुनाभावभूमि-
र्भक्तेर्यस्य प्रभावात् स भवतु भवभिद्वो भूताम्भोजशोभी ॥ ५६ ॥

आबाधाधूतधैर्यश्च्युतिविधिसविधो दुर्विधक्रोधवेधो
बाधादुःसाधरोधोद्धुरबहुविविधव्याधिसंबाधदेहः ।
यस्य ध्यानावधानादधिकधृतिसुधाधानसंधारितासु-
र्धीमान्नाधैर्विधेयो धियमवतु स वो बोधये बुद्धमूर्धा ॥ ५७ ॥

आरादाहूतियातृक्षितिपतिरतुलारातिशातिप्रताप-
प्रोद्गीतिर्दण्डनीतिप्रथितपितृपतिख्यातिजिद्दण्डनीतिः ।
यत्पादाधीतिशक्तेः कुपितमतिरतिप्रीतिमायाति भूते-
र्व्याघातोद्भूतिहेतुर्जिनवृषवसतिः संह्रियाद् वः स भीतिम् ॥५८॥

ब्रह्मा जिह्मायितोऽभूदगुरुरपि गुरुः खण्डिताखण्डलोक्ति-
र्विष्णुस्तूष्णीमधृष्टो वचनविरचने वीतगर्वोऽपि शर्वः ।
तुष्टास्तुष्टूषवोऽपि स्फुटमिति विबुधा नो बुधा यद्गुणोक्तौ
स श्रीमानब्जपाणिर्जयति जिनमनोगोचरान्तर्गुणौघः ॥ ५९ ॥

धात्रा चित्रं चरित्रं सुररिपुरिपुणा सत्रिनेत्रेण नेत्रे
गोत्रामित्रेण गोत्रं गतिरपि गुरुणा रात्रिपेणापि गात्रम् ।
मैत्रं मित्रेण पुत्रीयितसकलजगत्प्रेम पुत्रेण चात्रे-
यंत्रेदं स्तोत्रपात्रं स्तुतमवतु स वोऽमात्रसत्तोऽब्जपाणिः ॥ ६० ॥

यस्मिन् ब्रह्मा बहुत्वं बहुबहुमतवानाननानां निजानां
स्कन्दोऽप्यानन्दगर्भं नुतिषु नतिकृतौ नागनाथोऽपि मूर्ध्नः ।
शक्रः श्लाघ्यामनैषीन्नयनदशशतां यं विलोक्य त्रिलोकी-
लोकेशो निर्विरामानतिनयनरतिस्तोत्रपात्रं स पायात् ॥ ६१ ॥

खेदी खे दीप्तरश्मिः किल विफलमसावध्वनीनोध्वनीनो
लोकालोकार्थमास्ते ननु कमलभृतो दीप्ततापः प्रतापः ।
धीरैर्धीरैरकारि स्तुतिरिति विहितोल्लासभासां सभासां
यस्यायंस्यास्तु तस्माज्जगति कृतरिपुक्षिप्रसादः प्रसादः ॥ ६२ ॥

न्यस्ता यस्मिन्नमस्ये नतिरपि नितरामुन्नतिः पुण्यधाम्नां
निःसामान्यैकमान्येऽपचितिरुपचितिर्भूयसी भक्तिभाजाम् ।
ध्यानस्थानस्य यस्य स्मृतिरपि सहसा विस्मृतिर्भूतभीतेः
सोऽनन्ताचिन्त्यलोके विहितहितपथो लोकनाथोऽवताद्वः ॥ ६३ ॥

दम्भो दम्भोलिरैन्द्रः क्वचिदकृत सुरारातिशातोऽतिशातो
हारी हारीरणासौ वलवति विफलाभीषु राजीषु राजी ।
चक्रे चक्रेण नाथं हरिरिति जनता नूनमाहेति हेति-
व्यासव्यासक्तिमुक्तान् जयति रिपुजनोल्लासरोजी सरोजी ॥ ६४ ॥

लोकातीतं दधानः सुखमपि जगतां तीव्रदुःखेन दुःखी
नित्यं नित्यानुरक्तोऽप्यशरणकृपणप्राणभृद्योगयुक्तः ।
त्रैलोक्यस्यैकनाथोऽप्यसमरुचिजनाराधनाबन्धुरो यः
सोऽव्यात् संबुद्धमौलिर्विहितविसदृशाचिन्त्यचर्यैश्चिरं वः ॥ ६५ ॥

निर्विच्छेदत्रिलोकीनिहितनिरुपमस्नेहयोगानुयोगा-
न्निर्वाणो न प्रकम्प्यो बलवदलघुभिस्तीर्थिकोन्मत्तवातैः ।
जीयाल्लोकेशदीपः स भुवनभवनोद्भूतमोहान्धकार-
ध्वंसोऽविध्वंसधामा परहितकरणोद्योगसंवृत्तवर्त्तिः ॥ ६६ ॥

क्वासौ सर्वत्र मैत्री क्व विषमबहलक्लेशविद्वेषिदाहः
क्व प्रौढा मुक्तिशक्तिः क्व च दृढकरुणापाशनिष्पन्दबन्धः ।
क्वोपेक्षापक्षपातः क्वपरहितकृतिव्यग्रता तद्धि चित्रं
चित्रं राजीवपाणेश्चरितमतिजगज्जायतां ज्योतिजिद्वः ॥ ६७ ॥

सर्वाग्र्यः सर्वरूपप्रथनपृथुनयः सर्वदा सर्वनाथः
सर्वेषां सर्वथा यो विनयविधिमहासर्वगुर्वर्थसिद्ध्यै ।
सर्वैः सातोतगर्वैर्गुरुमहिमगुणैः खर्वयन् सर्वगर्वान्
सर्वः सर्वप्रदो वः सफलयतु रुचीः सर्वविन्मौलिरुर्वीः ॥ ६८ ॥

ईशः स्वामी प्रजानां पतिरमरगुरुर्लोकपालो महेन्द्रो
भास्वान् दत्तारिदण्डः परजयबलिजिद् वित्तदो जैत्रपाशः ।
इत्यन्तर्हासगर्भं भणति परिजनेऽन्वर्थनाम्नां निजानां
पात्रे यत्रानुलज्जैर्नतममरगणैरब्जपाणिः स जीयात् ॥ ६९ ॥

वर्यार्याणां वरेण्यो वरपरविधुरोत्सारणा संवरो वो
दुर्वारैः सारमारैरमितकरधरो दुर्धरो वैरिवीरैः ।
वीरो वीरारिवारी प्रचुरतरवरोदारसंभारवारि-
स्फारासारोरुधाराविसरवितरणाधीरधाराधरः स्यात् ॥ ७० ॥

नित्योद्युक्तेऽतिशक्ते प्रभवति नलिनोद्भासि हस्ते समस्तो
नाथी संसारथादःपतिपथपथको लोक इत्याकलय्य ।
यस्मिन् विन्यस्य भारं लघुरलघुकृपो विश्वदीपं प्रपेदे
बुद्धोऽवन्ध्यप्रतिज्ञाकृतधृतिविधृतिर्निर्वृतिं सोऽवताद्वः ॥ ७१ ॥

उच्चैरूढो गरीयान् सुगत इव जगत्कार्यसंभारभारो
न्यस्ता हस्ते प्रशस्ता निज इव कमलालंकृतिर्भक्तिभाजाम् ।
निर्वाणं नारकाग्नेर्निचय इव चिरं प्रापितः सत्त्वसार्थः
तीव्रक्लेशप्रबन्धो जन इव शमितो येन पायात् स युष्मान् ॥ ७२ ॥

यो नानानन्तरूपप्रकटनपटिमख्यातमायोऽप्यमायः
संशान्ताशेषभीरप्यतिकरुणतया कातराचारकारी ।
वीतक्रोधोऽपि दुष्टाशयदमनबुधक्रोधनित्यानुबन्धः
संबुद्धोद्भासिमौलिः स जयति महतां चिन्तनीयोऽप्यचिन्त्यः ॥ ७३ ॥

धत्ते नैवोत्तमाङ्गं परमपितु वपुर्योऽमिताभाभिरामं
सन्नालं नारविन्दं गुरुभयविधुरा वैरिसेनापि यस्य ।
येनाबद्धा जटा नो जगदहितहतिव्यापृतेनापि कक्षा
दक्षोऽसौ रक्षताद्वः कुपितयममुखालोकनाल्लोकनाथः ॥ ७४ ॥

शेषाशङ्की चकम्पे भवसलिलनिधिः क्लेशसार्थैः प्रलीनं
विश्रान्तं बोधिसत्त्वैर्मुनिरपि शुशुभे श्लाघ्यनिर्वाणलीलः ।
यस्मिन्नाबद्धकक्षे प्रसरति परितोऽशेषसत्त्वार्थकार्य-
व्यायामे स प्रकामं शमयतु सुगतावासमौलिर्मलं वः ॥ ७५ ॥

इति भगवद्वर्णना ।

प्रत्यूहव्यूहबाधाविघटनविषमे मानसस्याप्यभूमौ
कर्मण्येकान्तशर्मच्छिदि जगदहितोच्छित्तये पद्मपाणिः ।
निघ्नः क्रीतोऽथ भीतो बलवदिव यया निर्विकारो नियुक्तः
सा नाथस्यातिगुर्वी प्रभुरवतु कृपा निष्कृपादन्तकाद्वः ॥ ७६ ॥

भूमिर्नैर्वाभिभूतेर्मृदुतरमपि यल्लोकधातूननन्तान्
अत्यन्तावीर्यवीर्यं युगपदपि भृशं भासयंस्त्रासशान्त्यै ।
खद्योतोद्योतलेशानुकृतिविलिसिताशेषतेजस्वितेज-
स्तेजो लोकेश्वरं वो हरतु हृदि भवद्भूरिमोहान्धकारम् ॥ ७७ ॥

निःशेषाकाशधातुर्जन इव जनितापूरिताशः समन्तात्
प्रारब्धः सर्वभासामिव निरतिशयापायराशेर्विलोपः ।
सार्धं सान्द्रान्धकारैः शममगमि महानृद्धिमान्मानिमारो
येनोद्भासः स भूयात् सरसिरुहभृतो भूतये जायतां वः ॥ ७८ ॥

ईशोऽन्यद्योतनाशो बलभिदितरभादुःशमध्वान्तराशेः
सत्त्वद्रोहाशयानामनुपमतपनो योऽच्युतश्चित्रभानुः ।
नानानन्ताचलादिव्यवहितविषयोद्भासने शक्तिधारी
लोकेशोद्भास एकोप्यमरगणनिभो भीभिदे वः स भूयात् ॥ ७९ ॥

संपन्नाशेषसत्त्वप्रचुरजलचरेच्छासुखं यत्र दूरं
दुर्लङ्घ्ये यान्त्यधस्ताद् गिरय इव जनानर्थदुस्तीर्थ्यसार्थाः ।
दुर्वारोऽसौ समन्तात् पृथुभवभुवनाभावसंरम्भजृम्भी
भीदावाग्निप्रशान्त्यै करकमलविभाम्भोनिधिर्जृम्भताद्वः ॥ ८० ॥

निर्वाणो नारकाग्निः किमिति यदि विनेयेषु धर्मामृतौघो-
राशिर्बद्धो जटानां यदि गतिरहितः किं समहो रिपूणाम् ।
मूर्धागारे गरीयान् यदि वसति जिनो बन्धुरा किं त्रिलोकी
नाथस्येत्थं विचित्रा व्यवहृतिरहितं हन्तु वो लोकबन्धोः ॥ ८१ ॥

मूर्च्छत्येकापि सत्त्वाशयवशविहिताकारभेदाभिरामा
दुर्भेदाभूतकल्पा चलदचलमहारम्भदम्भोलिकोटिः ।
लौकेशी सन्मनीषाकुमुदशशिरुचिस्तीर्थिकानर्थकोटि-
ध्वान्तान्तर्धानभानुर्भवतु भवभिदे देशना शासनी वः ॥ ८२ ॥

दुर्वादोन्मादनादिप्रचुरमदकणादाक्षपादादिवादि-
प्रोद्यन्नानाविवादास्पदमदसदसां सापवादो विवादः ।
उत्सादः सप्रमादोन्मदजनविपदां कोविदानां प्रसादो
भावानुत्पादवादो जयति जिनवपुः पादसंपादमौलेः ॥ ८३ ॥

त्रस्तव्यस्तारिशस्त्रं त्रयि जगति चकास्ति स्तुतो यद्गभस्ति-
स्तोमो विस्तीर्णतोयं मरुनिलयसदां विस्तरध्वस्ततापः ।
स स्तादस्ताहितास्त्रो बलिवलिकुलिशः पद्महस्तस्य हस्तो-
ऽनापास्त्यै वः समस्तत्रिभुवनविकसत्साध्वसापास्तिशस्तः ॥ ८४ ॥

संवर्तोद्वृत्तवातव्यतिकरविषयोत्तुङ्गशैलद्रुमाली-
निर्मूलोन्मूलनाय प्रभुररिकरिणां शातितानल्पदर्पः ।
भद्रो लोकेश्वरस्य प्रणयिमधुकराकर्षदानौघवर्षी
हस्तस्तम्बेरमो वो भवरिपुनगरीभञ्जनायालमस्तु ॥ ८५ ॥

सत्कोषं सन्निधानं घनरुचिजिनतावाञ्छिताच्छेदसिद्धौ
यद्यातं शातकोटिमनुकृतिमहितत्रासिसत्पत्रकोटि ।
सम्यक्संबोधिलक्ष्मीकृतवसतिगुणश्लाघयैवाविमुक्तं
मुक्तेस्तत्कारणं वः करकमलमलं लोकनाथस्य भूयात् ॥ ८६ ॥

शश्वद्वर्धिष्णुतृष्णाविकलगलदरोविह्वलप्रेतराशे-
राह्लादोत्पादि सत्यं कमलमधिवसद्बोधिलक्ष्मीकमब्जम् ।
सत्पद्मं भूतिवाञ्च्छाविनिहितमनसां साधुसेवापदं यत्
तल्लोकेशस्य युष्मान् पटुरुचिपटलीराजिराजीवमव्यात् ॥ ८७ ॥

नानादुःखप्रतानां तनुकिरणघनोत्तापनक्लेशभानु-
म्लानं दीनाननं यज्जनमनुजनयत्यातपत्रोपमानम् ।
ग्लानिं मा गादहीनं तदखिलभुवनान्यूनभानूद्गितानं
लीनं लोकेशपाणौ नलिनममलिनं म्लानिमेनो नयेद्वः ॥ ८८ ॥

स्थाम्नः स्थानं महिम्नो महदुदयपदं धामधाम्नां प्रथिम्न-
स्त्रासावासो रिपूणां दुरभिभवभवाद्भीभिदोद्भूतिभूमिः ।
कान्तं शोभानिशान्तं वसतिरतिजगद्वीर्यविस्ताररराशे-
र्लोकेशस्यास्तु बाहुर्बहुजगदहितोच्छेदनाचण्डदण्डः ॥ ८९ ॥

यल्लावण्यामृतौघं क्षरदपि जनितातङ्कमेवाहितानां
तृप्तिं नैव प्रयच्छत्यथ पुनरतनुप्रीणनं लोचनानाम् ।
शोभागारं विशोभीकृतसकलजगद्भूषणं भूषणानां
तद्भूयादेकचीरं सुखमसुखनुदे भास्वदम्भोजिनो वः ॥ ९० ॥

म्लानं रूपाभिमानैर्जगति सफलतां लोचनैः पुण्यभाजां
यातं घातं तु तृष्णातिततरलतरैर्यत्र लावण्यसिन्धौ ।
मन्येऽसंख्यैः शशाङ्कप्रभृतिभिरतुलं कान्तिमद्भिः कृतं स्याद्
एकं यद्यास्यमस्याप्यतिजयि जयतां तन्मुखं पद्मपाणेः ॥ ९१ ॥

यस्मिन् विद्वेषभाजामविरतविलसत्कान्तितोयौघमेघैः
संवृत्तं दाहदायि स्फुटतरमसकृद्दुर्दिनं देहिनां तु ।
धौता ध्वस्तानुबन्धा बहुलमलमषीपङ्कलेपप्रबन्धाः
तद्बुद्धागारमूर्द्धामुखमतिसुखदं स्ताद्विचित्रक्रियं वः ॥ ९२ ॥

इष्टाब्जाक्लिष्टपाणेः स्फुटविकटकुटीकुट्टिमान्तोपविष्ट-
स्पष्टश्लिष्टामिताभद्युतिपट्टपटलापाटलाभापटिम्नः ।
शोभाविष्टैरदृष्टोपरिघनघटनस्योत्कटाटोपबन्धः
कूटस्याव्याज्जटानां कटुरकटसुहृत्संकटात्कङ्कटो वः ॥ ९३ ॥

अत्यन्ताह्लादहेतोरविरतविस्तृतस्यामिताभप्रभाम्भः
संभारस्यैव सेकात् निरतिशयमृजासुन्दरो लब्धवृद्धिः ।
उद्दामामोदिदिव्याद्भुतकुसुमचयैरर्चितश्चिन्तितार्थ-
प्राप्तेः संपत्तये स्तान्नलिनधरजटाकल्पवल्लीचयो वः ॥ ९४ ॥

यासां बद्धो विमुक्तिं गमयति नियतामुज्झितान्याधिवासो
निःसामान्यां विभूषां जनयति वपुषा यासु नाथोऽमिताभः ।
सर्वामोदच्छिदो या निरुपमवहलामोदलिप्ताखिलाशा
लोकेश्योऽवश्यलभ्यां मृतिमतिविकटास्ता जटा वो हरन्तु ॥ ९५ ॥

संघातो नो जटानामखिलजनमनोबन्धने पाशराशि-
र्लावण्यं नापि दुःखानलविकलजगज्जीवनीयोऽमृतौघः ।
नाम्भोजं दुष्टदम्यान्तकतुरगकशाक्लेशदोषातिमोषः
प्रत्याशा पोषसिद्धिं दिशतु जिनशशिश्लेषिकेशः श्रियो वः ॥ ९७ ॥

उद्दामापिङ्गतेजःप्रसरविरचिताशेषदिग्दाहमोह-
त्रस्तात्राणात्रिलोकीकवलनरभसोल्लासिकालाग्निकल्पम् ।
दष्टौष्ठं दुष्टदृष्टिज्वलितमनुहयग्रीवमाबद्धलक्ष्म्या
जाता लोकेश्वरी वः क्षणमतुलकृपाकातरा दृष्टिरव्यात् ॥ ९७ ॥

लोपं लोकः प्रयाति स्फुटमखिलमहाभूभृतामद्य तूर्णं
चूर्णीभावो धराणामपि जलनिधयः शोषमायान्त्यनन्ताः।
इत्थं यस्यान्तकोपभ्रुकुटिभरभवद्भङ्गभीमाल्ललाटा-
न्निर्यान्तीं वीक्ष्य देवीमतुलभुजबलैस्त्रस्तमब्जी स जीयात् ॥ ९८ ॥

स्तुत्यैः स्तुत्या गुरूणामपि जगति गुरुर्वन्दिता वन्दनीयै-
र्मूर्तैर्वानल्पकल्पार्जितसकलजगत्त्राणनिर्व्याजशक्तिः ।
लोकस्यार्तिच्छिदा यैः स्वयमतुलकृपैवाब्जिनो निर्गता स्तात्
तारा संसारकारोदरगुरुविलसत्कारणाहारिणी वः ॥ ९९ ॥

गीर्वाणग्रामगीतो गुरुगणनगुणो गीष्पतेरग्रगाभि-
र्ग्राह्योनुद्गाढवर्गस्फुटगतिगहनो हंसगाम्युग्रगाभिः ।
गम्भीरोद्गारिणीभिर्निगदितगरिमागेयपूगाल्पभागः
सम्यग्गम्यः समग्रोऽवतु सुगतगिरामब्जिनो वो गुणौघः ॥ १०० ॥

कविरपि जन्मनि जन्मनि भक्तश्चरणेऽवलोकितेश्वरस्य ।
प्रकृतिशरणगोत्तरधीः परहितगुरुकार्यकार्यः स्याम् ॥ १०१ ॥

महाक्षपटलिकश्रीवज्रदत्तकविविरचितं
श्रीलोकेश्वरशतकं समाप्तम् ।



लोकेश्वरस्तोत्रम्

नानाकृतिं सुकृतिनं जगतः शरण्यं
लोकेशकेशवहरात्मधरैरवश्यम् ।
संसारसागरतरं कमलायताक्षं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ १ ॥

रक्षाकरं सकलभीतिवतां जनानां
वामाननं कनककुण्डलचारुकर्णम् ।
ग्रैवेयकादिमणिकाभरणेन शोभं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ २ ॥

भक्त्या नतस्य मनुजस्य विपद्विरामं
स्वर्गापवर्गफलदं वरदं दयालुम् ।
देवाधिदेवममरं जिनसंघवन्तं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ३ ॥

सन्तप्तरूपतिलकं तिलकं सुराणां
रत्नाकरं कनककुन्तकशोभहस्तम् ।
भ्राजिष्णुमाभरणधारणदिक्प्रदं तं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ४ ॥

दुर्गन्धदुर्गतिहरं दुरितापहारं
दुर्भिक्षनाशकरणं करुणाकरं तम् ।
विद्याप्रदं गुणनिधिं शुभशुद्धदेहं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ५ ॥

इत्थं वरं सकलभूतगणाधिनाथं
त्रैलोक्यनाथममरैरपि वन्द्यमानम् ।
एवं क्वचिद् रथवरे सुखसंप्रविष्टं
श्रीलोकनाथविवुधं शुभदं भजामि ॥ ६ ॥

यक्षादिकिन्नरनरैर्मुनिभिश्च नागै-
विद्याधरैः सुरगणैर्दनुजैः पिशाचैः ।
सर्वोपकारनमितं पुटिता ग्रहस्तैः
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ७ ॥

गन्धादिचन्दनयुतं मृगनाभिभिश्च
कर्पूरकुङ्कुमवरैर्हरिचन्दनैश्च ।
तस्यानुलेपनकृतेन सुशोभिताङ्गं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ८ ॥

रोगादिनाशनकरं भजतां सुनाम
शोकादिदुःखहरणं सुखचिन्तनीयम् ।
पीयूषतुल्यवचनं मृदुजातगात्रं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ ९ ॥

आजानुलम्बितकरं गजराजमध्यं
सौन्दर्यकुण्डशिखरं स्फटिकाभदन्तम् ।
अत्यन्तसुन्दरतनुं शुभलक्षणाङ्गं
श्रीलोकनाथविबुधं शुभदं भजामि ॥ १० ॥

ये लोकनाथस्य सदा सुरम्यं स्तोत्रं पठिष्यन्ति जना सभावाः ।
श्रीलोकनाथोऽपि तदीप्सितार्थं स्वहस्तग्रस्तस्त्वरितं ददाति ॥ ११ ॥

श्रीलोकेश्वरस्तोत्रं समाप्तम् ।

वज्रदेवीस्तोत्रम्

आचार्यनागार्जुनविरचितम्

ॐ नमः श्रीयोगिनीदेव्यै

डाकी या सर्वबुद्धा सकलभयहरा व्यापिनी विश्वमाता
एकास्या रक्तवर्णा त्रिनयनमुदिता खेचरी श्रेष्ठशोभा ।
प्रज्वाली दिव्यदेहा गगणकृतपदा द्विभुजा मुक्तकेशा
खट्वाङ्गं वामपाणौ दहिनकरतिकाधारिणी स्वर्गरूपा ॥ १ ॥

नग्नाङ्गा ग्रीवमाल्या नरशिरसहिता भूषणं पञ्चमुद्रा
सत्त्वानां मार्गमोक्षाऽनुत्तरवरदा ज्ञानसिद्धिप्रदाता(त्री) ।
श्रीदेवी प्राणिरक्षाकृतजगतहिता योगिनी वज्रदीप्ति-
स्त्वत्पादौ पद्मरूपौ प्रणमितशिरसा नौमि विद्याधरीशे ॥ २ ॥

भगवती महादेवी भवत्याः शरणं व्रजे ।
वन्दे पादाम्बुजे नित्यं भजामि त्वां प्रसीद मे ॥ ३ ॥

जननी सर्वबुद्धानां त्वमेव बोधिदायिनी ।
सर्वेषां बोधिसत्त्वानां माता हितानुपालिनी ॥ ४ ॥

सर्वहितार्थसंभर्त्री सर्वपापविशोधिनी ।
दुष्टमारगणान् क्षोभ्य महानन्दसुखप्रदा ॥ ५ ॥

सद्धर्मसाधनोत्साहे बलवीर्यगुणप्रदा ।
निःक्लेशस्तिमितध्यानसमाधिसुखदायिनी ॥ ६ ॥

प्रज्ञागुणमहारत्नश्रीसमृद्धिप्रदायिनी ।
भगवत्याः पदाम्भोजे शरणस्थो भजाम्यहम् ॥ ७ ॥

नमामि वज्रवाराहीं सर्वपापप्रमोचनीम् ।
मारविध्वंसिनीं देवीं बुद्धत्वफलदायिनीम् ॥ ८ ॥

नौमि श्रीवज्रवाराहीं मन्त्रमूर्तिं जिनेश्वरीम् ।
अत्यन्तवरदां देवीं ऋद्धिसिद्धिवरप्रदाम् ॥ ९ ॥

वैरोचनकुलोद्भूतां मुक्तकेशीं त्रिलोचनाम् ।
सन्ध्यासिन्दूरवर्णाभां वन्दे त्वां कुलिशेश्वरीम् ॥ १० ॥

पञ्चमुद्राशिरःशोभां स्कन्धे खट्वाङ्गधारिणीम् ।
करे वज्रकरोटस्थां वन्दे वज्रविलासिनीम् ॥ ११ ॥

मुद्रापञ्चधरां देहे मुण्डमालाविभूषिताम् ।
लीलाहास्यमुखाम्भोजां वन्दे त्रैलोक्यसुन्दरीम् ॥ १२ ॥

भैरवाद्यां त्रिमुखीं च विक्रान्तिकण्ठचर्चिकाम् ।
विद्वेषघनघोरां च वन्दे भीमभयङ्करीम् ॥ १३ ॥

रागविरागयोर्मध्ये भावाभावविखण्डिताम् ।
समुद्भूतां सदा देवीं वन्दे तां ज्ञानडाकिनीम् ॥ १४ ॥

पञ्चामृतसुरापानपञ्चशालिसुभोजिनीम् ।
गीतवाद्यरतां नित्यं वन्दे त्वां सुखवन्दिताम् ॥ १५ ॥

सदैव सहजानन्दां नित्यभूतां सर्वालयाम् ।
रणच्चरणनूपुर्यां वन्दे नृत्यपरायणाम् ॥ १६ ॥

त्वां देवीं सिद्धिदात्रीं च योगाचारसदारताम् ।
बुद्धनिर्वाणदात्रीं त्वां वन्दे बुद्धस्य मातरम् ॥ १७ ॥

रक्ताङ्गीं वज्रवाराहीं दिव्यरूपस्वरूपिणीम् ।
क्रान्तिमूर्तिदयादेवीं नमामि वज्रयोगिनीम् ॥ १८ ॥

बन्धूकपुष्पसङ्काशां शान्तरूपां जिनेश्वरीम् ।
ऋद्धिसिद्धिप्रदां देवीं नमामि वज्रयोगिनीम् ॥ १९ ॥

द्वादशवर्षसम्पन्नां नवनृत्यस्वरूपिणीम् ।
त्रैलोक्यव्यापिनीं देवीं नमामि वज्रयोगिनीम् ॥ २० ॥

श्रीनागार्जुनपादाचार्यविरचितं
वज्रदेवीस्तोत्रं समाप्तम् ।

वज्रपाणिनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्

वज्रसत्त्व महासत्त्व महायान महात्मक ।
महाप्रभ महाशुद्ध महानाथ नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

वज्रराज महावज्र वज्र सर्वतथागत ।
महासत्त्व महावीर्य महोपाय नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

वज्रराग महाशुद्ध सर्वसौख्य महासुख ।
सुखाख्यानादिनिधन महाकाम नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

वज्रसाधु महातुष्टि साधुकार प्रहर्षक ।
महाहर्ष महामोद सुप्रामोद्य नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

वज्ररत्न महाराज स्वाभिषेक महामते ।
सर्वरत्न महाशोभविभूषण नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

वज्रतेज महातेज वज्रप्रभ महाद्युते ।
जिनप्रभ महाज्वाल बुद्धप्रभ नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

वज्रकेतु महाकेतु महाध्वज धनप्रद ।
आकाशकेतो महायष्टि त्यागध्वज नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

वज्रहास महाहास महाप्रीतिप्रमोदन ।
प्रीतिवेग रतिप्रीते धर्मप्रीते नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

वज्रधर्म महाधर्म सर्वधर्मसुशोधक ।
बुद्धधर्म सुधर्माग्र्य रागधर्म नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

वज्रतीक्ष्ण महाकोश प्रज्ञाज्ञान महामते ।
पापच्छेदमहाखड्ग बुद्धशस्त्र नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

वज्रहेतु महाचक्र बुद्धचक्र महानिधे ।
सर्वमण्डलधर्माग्र धर्मचक्र नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

वज्रभाष महाभाष निष्प्रपञ्च महाक्षर ।
अनक्षर महाजाप बुद्धवाच नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

वज्रकर्म सुकर्माग्य्र महाकर्म सुकर्मकृत् ।
गुह्यपूज महापूज बुद्धपूज नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

वज्ररक्ष महावर्म कवचाग्र्य महादृढ ।
महारक्ष महासार बुद्धवीर्य नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥

वज्रयक्ष महाक्रोध सर्वदुष्टभयानक ।
सर्वबुद्धमहोपाय अग्रयक्ष नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥

महासन्धि महामुद्र महासमयबन्धक ।
महामुष्टे समुद्राग्र्य वज्रमुष्टे नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥

वन्द्यो मान्यश्च पूज्यश्च सत्कर्तव्यस्तथागतैः ।
यस्मादनादिनिधनं बोधिचित्तं त्वमुच्यसे ॥ १७ ॥

त्वामासाद्य जिनाः सर्वे बोधिसत्त्वाश्च शौरिणः ।
संभूताः संभविष्यन्ति बुद्धबोध्यग्रहेतवः ॥ १८ ॥

नमस्ते वज्रसत्त्वाय वज्ररत्नाय ते नमः ।
नमस्ते वज्रधर्माय नमस्ते वज्रकर्मणे ॥ १९ ॥

त्वामभिष्टुत्य नामाग्रैः प्रणम्य च सुभावतः ।
यत्पुण्यं तेन सर्वो हि बुद्धबोधिमवाप्नुयात् ॥ २० ॥

इदमुच्चारयेत्सम्यग् नामाष्टशतमुत्तमम् ।
सकृद्वारं सुभक्तिस्थः सर्वबुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ २१ ॥

श्रीवज्रपाणिनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

वज्रमहाकालस्तोत्रम्

आचार्यनागार्जुनकृतम्

हां हां हांकारनादैः किलिकिलितरवैः भूतवेतालवृन्दै-
र्हुं हुंकारैः समन्तान्नरपिशितमुखैः रक्तमालाकुलाङ्गैः।
खट्वाङ्गस्कन्नपाणिर्नरकरकधरः कामरूपी विरूपी
पिङ्गाक्षः पिङ्गकेशः शवगणनलकः क्षेत्रपालोऽवताद्वः॥ १॥

फें फें फेंकारनादैः प्रतिजनितबृहद्वह्निगर्भाङ्गवक्त्रे
मालां कण्ठे निधाय प्रकटभयवपुर्भूषिताङ्गोपशोभः।
ईषद्रक्ताधरोष्ठोऽसृकसकलवृतामालिना मुक्तपाणिः
क्लीं डां क्लीं डां निनादैर्वरदहनभुवि क्षेत्रपः पातु युष्मान्॥ २॥

क्षं क्षं क्षं क्षान्तिमूर्तिः कलकलकलकृत् क्षान्तिवृद्धिं प्रकुर्वन्
क्रान्ताक्रान्तैकविश्वः कहकहकथनो नीलजीमूतवर्णः।
ह्रीं श्रीं क्लीं मन्त्रदेहः पच पच दहनैर्जातमन्त्रः समन्ताद्
विघ्नानुत्सार्यमाणः शमयतु नियतं शात्रवान् क्षेत्रपालः॥ ३॥

हा हा हा हाट्टहासैरतिशयभयकृत् सर्वदाऽसत्पशूनां
पापानाम्, विघ्नहन्ता प्रतिदिवसमसौ प्राप्तसंबोधिलाभः।
हुं फट् हुंफट्निनादैस्त्रिभुवनकुहरं पूरयन् पूर्णशक्तिः
पायाच्छ्रीक्षेत्रपालः कपिलतरजटाजूटक्लेशाङ्गभारः॥ ४॥

खं खं खं खड्गपाणिर्ललललललितो रूपतो रक्तपाणिः
रं रं रं रक्तनेत्रो रु रु रुधिरकरश्चर्चितश्चण्डवेगः।
क्रुं क्रुं क्रुं क्रोधदृष्टिः कुह कुह कुटिलः कुञ्चिताशेषदुष्टः
डं डं डं डामराङ्गो डमरुकसहितो रक्षतात् क्षेत्रपालः॥ ५॥

यं यं यं याति विश्वं यमनियमयुतो यामिनोऽयामिनो वा
वं वं वं वातवेगो झटिति करकधृत् प्राप्तलोकोपचारः।
भ्रूं भ्रूं भ्रूं भीषणाङ्गो भृकुटिकृतभयो मुक्तवान् साधकानां
क्षं क्षं क्षं क्षेमकारी क्षपयतु दुरितं रक्षतात् क्षेत्रपालः॥ ६॥

क्लां क्लां क्लां क्रान्तिमूर्तिस्त्रिभुवनमनिशं क्लेदयन् सर्वदा यः
पं पं पं पाशहस्तः परशुधृतकरः पालयन् पालनीयान् ।
मुद्राणां मन्त्रमूर्तिस्त्वमभिमतफलदो मन्त्रिणां मन्त्रतुल्यः
क्षेत्राणां पालकोऽसौ सकलजिततनुः पातु युष्मांश्चिरायुः ॥ ७ ॥

क्लीं क्लीं क्लीं कृत्तिवासा कृतरिपुनियमः क्लेशितानां सदेशः
कं कं कं कपालमाली कलिकलुषहरः कालवृन्दाभकायः ।
चं चं चं चण्डवेगः प्रचरितसमयाः कालभूतैकलोकः
सं सं सं संयतात्मा समयशुभफलं लक्ष्यतां पातु युष्मान् ॥ ८ ॥

मन्त्राणां मन्त्रकायो नियतयमद्युतिः सत्पथे शुद्धतीरे
आचार्यः साधको वा जपति च नियतं पुण्यवान् जायतेऽसौ ।
आयुः श्रीः कीर्तिलक्ष्मीधृ तिबलमतुलं शान्तिपुष्टी प्रभा च
सर्वज्ञत्वं च नित्यं दिननिशमतुलं नश्यते विघ्नजातम् ॥ ९ ॥

श्रीवज्रमहाकालस्तोत्रं समाप्तम् ।

वज्रयोगिनीप्रणामैकविंशिका

ॐ नमः श्रीवज्रयोगिन्यै

एवंकारसमासीना(ने) सहजानन्दरूपिणि ।
प्रज्ञा[वि]ज्ञानदेहस्था(स्थे) नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १ ॥

विचित्रादिप्रमो(भे)देन चतुरानन्ददेहदे ।
रागपारमिताप्राप्ते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ २ ॥

शरत्पूर्णेन्दुसंकाशे सत्त्वजाष्टकयोगजे ।
वर्णाग्रबीजसंभूते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ३ ॥

भावाभावद्वयातीते आद्यन्तमध्यवर्जिते ।
स्वपरत्वविनिर्मुक्ते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ४ ॥

रागारागयोर्मिश्रं(श्रे) संकल्पत्रयवर्जितं(ते) ।
महासुखसुखकारे नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ५ ॥

सत्त्वार्थकरणैर्युक्ते जातसंभोगरूपिणि ।
करुणारक्तदेहस्ते(स्थे) नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ६ ॥

भवनिर्वाणमारूढे रूपाकारविराजिते ।
कायवाक्चित्तनेत्राय(द्ये) नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ७ ॥

वामे कपालखट्वाङ्गे दक्षिणे कर्तिधारिणि ।
शून्यताकरुणावाहि नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ८ ॥

जिनदुर्दान्तबीभत्सि(त्से) सर्वमारनिषूदिनि ।
निर्जिताशेषसेवाग्रे नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ९ ॥

कला[कलाप]संयुक्ते श्मशानाष्टनिवासिनि ।
बुद्धनाटरसैर्युक्ते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १० ॥

सत्त्वाशयवशेनैव निर्मितानेकरूपिणो(णि) ।
श्यामपीतसिताभासे नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ ११ ॥

पञ्चबुद्धजनोत्पन्ने पञ्चयोगिनितां गते।
तथा परमाणुसंख्याते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १२ ॥

शैवे शक्तिरिति ख्याते तीर्थे चण्डीति कल्पिते।
वेदे वेदेति प्रख्याते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १३ ॥

कुलाख्ये कुब्जिकाख्याते आत्मवेषवती मते।
विश्वरूपे क्रियाकारे नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १४ ॥

सत्त्वदृष्टिविरोधेन गता नैव विधायिनि।
सर्वाकारवरोपेते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १५ ॥

नैरात्म्यधर्मगम्भीरयोगदृष्ट्यैकगोचरे।
सदसत्कल्पनातीते नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १६ ॥

श्यामपीतादिनिर्मुक्ते वर्णावर्णविवर्जिते।
प्रज्ञापारमितामातर्नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १७ ॥

निर्विकल्पे निरालम्बे निष्प्रपञ्चे निरालये।
वियद्व्यापि[नि] नैरात्म्ये नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १८ ॥

सर्वरत्नविदां पात्रे जननि वज्रयोगिनि।
नमस्ते वज्रवाराहि नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ १९ ॥

त्वं सद्गुरुमुखकमलान्निर्गता कामरूपिणी।
महाऽज्ञानविनाशाय नमस्ते वज्रयोगिनि ॥ २० ॥

इति गुणयुक्ताया मातुर्विधायैकविंशिकाम्।
पुण्यं यदवाप्तं तेन जनाः सन्तु(लभन्तु) पूर्णत्वम् ॥ २१ ॥

श्रीवज्रयोगिनीप्रणामैकविंशिका समाप्ता।

वज्रयोगिन्याः पिण्डार्थस्तुतिः

सिद्धाचार्य-विरूपादविरचिता

ॐ नमो वज्रयोगिन्यै। ॐ नमो बुद्धधर्मसंघेभ्यः। ॐ नमो गुरुबुद्ध-बोधिसत्त्वेभ्यः। ॐ नमो लोचनादिदशवज्रविलासिनीभ्यः। नमो यमान्तकादि-दशक्रोढ(ध)वीरेभ्यः।

वाराही शौण्डिनी चैव चण्डाली डोम्बिनी तथा।
नटनी रजकी ब्राह्मी कपालिनी च सास(शाश्व)ता ॥ १ ॥

अमृताऽमृतकुण्डली च ज्ञानज्योतिःप्रकाशिका।
सर्वाशावीरदेवीनामियमेका महासुखा ॥ २ ॥

शून्यता गीयते चासौ पर[ा]शक्तिः परात्परा।
अमृतोर्ध्वमना दिव्या उपाया नित्यवाहिनी ॥ ३ ॥

खेचरी भूचरी चैव पातालवासिनी तथा।
प्रवि(ति)ष्ठापूरणी नित्यं त्रैलोक्यक्षोभती(भिणी)तथा ॥४॥

बिन्दुनादकला देवी चन्द्रसूर्यात्मिका हि सा
[नित्या] नैर्माणिकी चैव संभागी च महासुखा ॥ ५ ॥

बिन्दुनादकलातीता प्रज्ञापारमिता मता।
सर्वभावस्वभावा हि सर्वभावविवर्जिता ॥ ६ ॥

प्रलयोत्पत्तिहीना च प्रलयोत्पत्तिकारिणी।
शाश्वतत्वात् स्थिता प्रोक्ता शाश्वतेन च वर्जिता ॥ ७ ॥

गम्भीराऽऽलिङ्गितोदारा महार्था स्वधिमुक्तिका।
शून्यतात्रयहीना च प्रभास्वरस्वरूपिणी ॥ ८ ॥

एकाराक्षररूपा च वंकाराक्षरसंगता।
विचित्रादिक्षणैर्युक्ता चतुरानन्दरूपिणी ॥ ९ ॥

बाह्यमण्डलचक्रेऽपि स्फुरन्ती च त्रिकायतः।
कायवाक्चित्तभावेषु कायवाक्चित्तभूषणी ॥ १० ॥

अतीत्य कायवाक्चित्तैः समत्वेन च मध्यगा।
नैरात्म्यरूपिणी देवी तथतायां प्रतिष्ठिता ॥ ११ ॥

कमलकुलिशाक्रान्तशून्यतात्रयरूपिणी।
ललनारसनायोगादवधूती महासुखा ॥ १२ ॥

संसारतारणी चैषां तथा तासां प्रतीत्यजा।
यां लब्ध्वा योगिनीं मुक्ता भवसंसारबन्धनात् ॥ १३ ॥

इत्येषा ऋद्धिदा प्रोक्ता सिद्धिदा चैव योगिनी।
मोक्षद्वारपरा चैव सतताभ्यासकारिणाम् ॥ १४ ॥

वज्रवत् कुरुते देहं रससिद्धिं ददाति च।
गुरुपादप्रसादेन लब्धेयं वज्रयोगिनी ॥ १५ ॥

य(ए)तस्याः पाठमात्रेण पुण्यसंभारमादरात्।
प्राप्नोति सततं योगी ज्ञानसंभारसंभृतः ॥ १६ ॥

श्रीगुह्यसमयतन्त्रे पिण्डार्थाः षोडशश्लोकास्त्रिकायवज्र-योगिन्याः समाप्ताः।

कृतिरियं सिद्धाचार्यश्रीविरूपादानामिति।



वज्रयोगिन्याः स्तुतिप्रणिधानम्

सिद्धाचार्य-विरूपादविरचितम्

ॐ नमः श्री वज्रयोगिन्यै, नमोबुद्धधर्मसंघेभ्यः, नमो गुरुबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः, नमो लोचनादिदशवज्रविलासिनीभ्यः, नमो यमान्तकादिदशक्रोधवीरेभ्यः सप्रज्ञेभ्यः।

ॐ ओ आ हूं इति कायवाक्चित्त इन्द्रियविज्ञानानि, वाक्चित्तानि मनोविज्ञानानि, परचित्तज्ञानाभिज्ञा, परकायप्रवेशाभिज्ञा पुण्डरीकेषु नाभिस्थे रक्तसूर्य मण्डलः ॥ १ ॥

धर्मोदया पद्ममध्ये सिन्दूरारुणरूपिणी।
त्रिशृङ्गा हि त्रिकोणा वा चतुःपीठसमन्विता ॥ २ ॥

ह्रींकारं मध्यभागेऽस्याः पीतवर्णः प्रकीर्तितः।
तद्भवा पीतवर्णा च अवधूत्या(ती) स्वयं स्थिता ॥ ३ ॥

ललनायां तु सुश्यामा रसनायां च गौरिका।
प्रत्यालीढपदा नाम्ना मध्ये पीता मनोरमा ॥ ४ ॥

त्रिमार्गे संस्थिता देवी त्रिकायवज्रयोगिनी।
सेयं नाम्ना भवेदेका सर्वसम्बुद्धडाकिनी ॥ ५ ॥

त्रैलोक्ये दिव्यरूपा च सर्वाशापरिपूरिका।
स्वकर्तिना कर्तितं च वामहस्ते स्वमस्तकम् ॥ ६ ॥

दक्षिणेऽस्याः स्थिता कर्तिर्जगतो दुःखच्छेदिनी।
अस्या वामे स्थिता श्यामा नाम्ना सा वरवर्णिनी ॥७॥

कर्परः सव्यहस्ते च कर्तिर्वामे च संस्थिता।
दक्षिणे चैव पीता वै वज्रवैरोचनी स्थिता ॥ ८ ॥

कर्तिका दक्षिणे हस्ते वामे कपालधारिणी।
प्रत्यालीढपदा देवी नग्निका तु विशेषतः ॥ ९ ॥

करौ च द्वौ तयोः पादौ विपरीतौ तथा स्थितौ।
बुद्धानां जननी मध्या सम्यक्सम्बुद्धरूपिणी ॥ १० ॥

अक्षया सुभगा नित्यं हन्त्री च मृत्युजन्मनोः।
धर्मसंभोगनिर्माणमहासुखस्वरूपिणी ॥ ११ ॥

सेयं त्रिभुवने देवी राजते चन्द्रवत्सदा।
कबन्धादवधूत्याश्च प्रविशेत्स्वमुखेष्वसृक् ॥ १२ ॥

ललनारसनाभ्यां च निःसृत्य शिरसि तथा।
करुणारक्तरूपेण पिबन्ती सर्वशान्तये ॥ १३ ॥

दुःखं संप्रेक्ष्य लोकानां चतुर्मारनिषूदिनी।
दौर्मनस्यादि कर्त्या च कर्तन्ती सर्वमेव तत् ॥ १४ ॥

स्तुता हि जिनमातस्त्वं सुप्रसीद भवार्णवे।
स्वार्थं कर्तुं परार्थं च भवाम्यहं यथा क्षमः ॥ १५ ॥

तत्त्वया देवि कर्तव्यमनुग्रहं मयि सृज।
बालोऽहमज्ञरूपी च कायवाक्चित्तदोषतः ॥ १६ ॥

गुरुभक्तिं न जानेऽहं त्वद्भक्तिं च विशेषतः।
इत्याकलय्य लोकेशि कृपा मयि विधीयताम् ॥ १७ ॥

कायवाक्चेतसां साम्यं कुरु मे त्वं प्रसादतः।
येन मुञ्चामि संसारं षड्गतिं न विशाम्यहम् ॥ १८ ॥

यथा च वज्रवद्देहो यावन्मुक्तो भवाम्यहम्।
मारैः सर्वैः परित्यक्तो यथा कायो भवेन्मम ॥ १९ ॥

लीलया सिद्धिभागाः स्युर्निर्विघ्नः सर्वसिद्धिभाक्।
सर्वसाधनसिद्धिः स्यात् कायश्चैवाजरामरः ॥ २० ॥

त्रासनं सर्वमाराणां सर्वाशापरिपूरणम्।
देहि मे त्वं वरां सिद्धिं हित्वा चैव गमागमम् ॥ २१ ॥

मनो विलीयतां देवि पञ्चेन्द्रियानुसंयुतम्।
सिद्ध्येच्च वज्रसत्त्वायुर्यौवनारोग्यसत्सुखम् ॥ २२ ॥

त्वत्प्रसादान्महामुद्रा सर्वेषामेव संभवेत्।
देवासुरमनुष्याश्च यत्र यत्र च संस्थिताः।
सुखिनस्ते च सर्वे स्युर्बुद्धत्वफललाभिनः ॥ २२ ॥

श्रीगुह्यसमयतन्त्रे त्रिकायवज्रयोगिन्याः स्तुतिप्रणिधानं समाप्तम्।

कृतिरियं सिद्धाचार्यं श्रीविरूपादानाम्।

वज्रविलासिनीसाधनास्तवः

रविविकस्वरभास्वरसुन्दरी-
प्रबलकेशरसंवरकर्णिकात् ।
उदयमस्तकश्रृङ्गसमुल्लस-
न्नवसुपूर्णशशाङ्ककराङ्किताम् ॥ १ ॥
विविधपुष्परसासववेद्यपि
द्रुतविलम्बितमध्यनदद्ध्वनिः ।
अलिरुपेत्य निशार्धमहोत्सवे
धयति तद्गतधीरिति विस्मयः ॥ २ ॥
उदयतेऽस्तमुपैति निशाकरः
पुनरतोऽप्युदयाचलमौलिताम् ।
उभयकोटिकलापिनिरीक्षणे
न च शशी न विभाति दिवाकरः ॥ ३ ॥
रविरुदेति सरोजदलान्तरे
शिखरतोऽपि विधुः प्रविलीयते ।
व्रजति चोर्ध्वमसौ वडवानलो
गिलति राहुरधः शशिभास्करौ ॥ ४ ॥
कमलिनीकमलासनलोचन-
प्रकटगोचरगोचरमीलनम् ।
प्रथममङ्गमिदं कुलिशाम्बुज-
द्वयनिमीलनमत्र ततोऽपरम् ॥ ५ ॥
सपदि साधकबीजनिघर्षणात्
त्रितयमम्बरमेति चतुर्थकम् ।
सहजमक्षयधामकलावली-
कलितकालविलापनलेलिहम् ॥ ६ ॥
यदि सुशिक्षितवज्रविलासिनीगुरुमुखाधिगमोऽधिगतो भवेत् ।
भवति यस्य तदोत्तममध्यमाधमविनिश्चयमेति स तत्त्वदृक् ॥ ७ ॥

श्रीवज्रविलासिनीसाधनास्तवः समाप्तः ।

वज्रविलासिनीस्तोत्रम्

महापण्डितविभूतिचन्द्रपादकृतम्

ॐ नमः श्रीवज्रयोगिन्यै

देवासुरनरवन्दितचरणे भवमग्नोद्धरणार्पितचरणे ।
त्वयि रोदिमि नुतिसव्यपदेशः किं पश्यसि पुनरनिशमशेषम् ॥ १ ॥

मातर्देवि किरसि कणमुष्टिं जनयद् यज्ञसुतः किमतुष्टिम् ।
वज्रवाराहि नराहिसुराणां त्वं शरणं तव नामपराणाम् ॥ २ ॥

हरिकर(रि)शिखिफणितस्करभीतिस्त्वत्परचित्ते नैव समेति ।
मातर्देवि निभालय मह्यं किं सहसे मम दुःखमसह्यम् ॥ ३ ॥

तर्जनवज्रकरोट[वि]धारिणि दुष्टं तुष्टय मारनिवारिणि ।
अभिनवकोमलकरचरणाङ्गि त्रिवलिसमुच्छ्रदसप्तविभङ्गि ॥ ४ ॥

ग्राह्यग्राहकभावविशुद्धे पादकराङ्गुलिजालपिनद्धे ।
आयतपार्श्वाङ्गुलिकरचरणे ध्वस्तव्याधिजराजनिमरणे ॥ ५ ॥

उद्गतरेणुरूर्ध्वंगतरोमा वज्रयोगविवृतामृतधामा ।
बालमरीचिविलोकनरक्ते जगतां दुःखनिराकृतिशक्ते ॥ ६ ॥

सुभ्रु तनूदरि मध्यकृशाङ्गि कर्णान्तायतलोचनभृङ्गि(भङ्गि) ।
डाकिन्ये[व हि] विश्वमशेषं लोको वेत्ति न तं बहुवेषम् ॥ ७ ॥

यत्नमृते जगदर्थसमृद्धिश्चिन्तितमात्रजनेप्सितसिद्धिः ।
मूढो वेत्ति न दुष्कृतकर्म प्रावृषीव न शिलाङ्कुरजन्म ॥ ८ ॥

अन्ध इवार्कशशाङ्कादर्शी पापजनो ह्यनुभावस्पर्शी ।
चिन्तामणिमज्ञा न विदन्ति प्रज्ञे त्वस्य फलानि फलन्ति ॥ ९ ॥

चक्राङ्कितकरपादमनोज्ञे ज्ञानानलभस्मीकृतसङ्गे ।
कायवचनमनसा कृतदुरितं रागद्वेषमोहपरिकरि(लि)तम् ॥ १० ॥

तद्दिशामि तव देवि समक्षं यावद्यामि न दुर्गतिपक्षम् ।
मनः परमार्थं तनुस्तव वेदी स भवति नैव दुरितपरिखेदी ॥ ११ ॥

लक्षणनिखिलालक्षितगात्रे सकलानुव्यञ्जनगतपात्रे ।
नवयौवनमदमन्थरपिण्डे चलकुण्डलयुगमण्डितगण्डे ॥ १२ ॥

तुङ्गनितम्बघनस्तनभारे गलकालम्बिनिरंशुक(ङ्कुश)हारे ।
संवरमधुपविचुम्बिमुखाब्जे तद्भुजयुगपरिरब्धहृदब्जे ॥ १३ ॥

निर्भरसुरतसुखाविकलाक्षि मुक्तशिरोरुहवसननिरपेक्षे ।
हेरुकराहुदष्टमुखचन्द्रे सस्मितरचित हूँ हूँ कृतमन्त्रे ॥ १४ ॥

पतिमौलिस्थितविधुममृषन्ती किमु चन्द्रार्कौ वपु[र]मुषन्ती ।
मातस्ते जगदनुपमरूपं तद्विचारय परमार्थं स(स्व)रूपम् ॥ १५ ॥

क्लेशदाहिं(ह)शमनामृतवचनं तद्विनेयजनशुद्धिविरचनम् ।
पद्मिनीति नलिनामलगन्धः करुणापरजगदर्थनिबन्धः ॥ १६ ॥

दिव्यसुधाधर[गत]रसपानं तज्जगदद्वयबोधिनिधानम् ।
प्रत्यङ्गस्पर्शोऽप्यनिमित्तं सहजाम्बुधिविप्लावितचित्तम् ॥ १७ ॥

किं त्वं मातः करिष्यसि ताभिः षट्त्रिंशच्छतकोटचबलाभिः ।
यद्यन्यां मनुते बहुतातस्तद्विहाय झगिति देहि नु मातः ॥ १८ ॥

नाडीचक्रनिरोध........................ महासुखसंवर ।
देवि त्वं शतभावविकल्पा शून्यसमाधिरपाकृततुल्या(तल्पा) ॥ १९ ॥

शून्यरूपे सहजाद्वयमुक्तं वज्राय(ज्रया)नमिदमवधि[वि]भक्तम् ।
भावाभावसमस्ताकाशव्यापी भवति स तत्त्वावकाशः ॥ २० ॥

उद्भवन्ति तत एव विमोक्षा बोधिपक्षनिखिलप्रतिपक्षाः ।
बुद्धानामावेणिकधर्मः सत्त्वराशिपरिपाचितकर्मः ॥ २१ ॥

यद्वा यानत्रयनिर्याणं धूमादिकमपि चापरिमाणम् ।
त्वद्भक्त्या यदलम्भि शुभं मे भवतु मनो भवतीपरमं मे ।
सकलकलुषरहितं गुणसिन्धुस्त्वत्परमं ह्यत एव न बन्धुः ॥ २२ ॥

गुह्यसमयसाधनतन्त्रे श्रीवज्रविलासिनीस्तोत्रं समाप्तम् ।
कृतिरियं महापण्डितविभूतिचन्द्रपादानाम् ।

वज्रसत्त्वस्तुतिः

अथ खलु भगवन्तः सर्वतथागताः भगवन्तं महावज्रसत्त्वं स्तुवन्ति स्म—

मोहवज्रस्वभावस्त्वं यमारिरतिभीषणः।
सर्वबुद्धमयः शान्तः कायवज्र नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

पिशुनवज्रस्वभावस्त्वं यमारिरतिभीषणः।
चित्तवज्रप्रतीकाशो रत्नवज्र नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

रागवज्रस्वभावस्त्वं यमारिरतिभीषणः।
सर्वघोषवराग्राग्र्य वाग्वज्र नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

ईर्ष्यावज्रस्वभावस्त्वं यमारिरतिभीषणः।
कायवज्रप्रतीकाश खड्गपाणे नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

सर्वबुद्धस्वभावस्त्वं सर्वबुद्धैकसंग्रहः।
सर्वबुद्धवराग्राग्र्य मण्डलेश नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

श्रीमहावज्रसत्त्वस्तुतिः समाप्ता।

वज्रसत्त्वस्तोत्रम्

वन्दे श्री वज्रसत्त्वं भुवनवरगुरुं सर्वबुद्धं भवन्तं
नानारूपं जिनेन्द्रं तिमिरभयहरं निर्मितं मेरुशान्तम् ।
धर्माधारं मुनीनां जिनगुणशुभदं मण्डलं वज्रधातुं
सर्वानन्दैकरूपं परमसुखमयं देहिनां मोक्षहेतुम् ॥ १ ॥

अज्ञानगाढतिमिरार्णवमग्नसत्त्व-
मोहान्धकारतमवारणचन्द्ररश्मिः ।
ज्ञानं प्रकाश्य परिपूरितवीर्यध्यानं
श्रीवज्रसत्त्वमसमं शिरसा नमामि ॥ २ ॥

यस्मिन् सुरासुरसुरेन्द्रनरेन्द्रवृन्दा-
स्त्वत्पादपद्मपतिता भ्रमराः शिरोभिः ।
उत्सिद्धिसाधनपयोधिमहानिधानं
श्रीलोकनाथचरणं शरणं प्रयामि ॥ ३ ॥

बुद्धं त्रैलोक्यनाथं सुरवरनमितं पारसंसारतीर्णं
धीरं गाम्भीर्यवन्तं सकलगुणनिधिं धर्मराजाभिषिक्तम् ।
तृष्णामोहान्धकारं कलिकलुषहरं कामलोभादवन्तं
तं वन्दे शाक्यसिंहं प्रणमितशिरसा सर्वकालं नमामि ॥४॥

ह्रींकारसंभवं नाथं करुणास्निग्धमानसम् ।
अमोघपाशनामानं लोकनाथं नमाम्यहम् ॥ ५ ॥

मामको लोचना तारा पद्मिनी जिनधातवे ।
सर्वबुद्धालयं चैत्यं धर्मधातुं नमामि तम् ॥ ६ ॥

नमस्तारे तुरे वीरे तुत्तारे भयनाशिनि ।
तुरे सर्वातुरे काले स्वाहाकारं नमाम्यहम् ॥ ७ ॥

सद्धर्मपुण्डरीकाक्षं सर्वज्ञगुणसागरम् ।
समन्तभद्रशास्तारं शाक्यसिंहं नमाम्यहम् ॥ ८ ॥

श्रीवज्रसत्त्वस्तोत्रं समाप्तम्

वसन्ततिलकास्तुतिः

पादगुह्यगुदनाभिहृच्छिरो धातुमण्डलगमेरुपृष्ठगम् ।
नाडिकासमयवज्रपद्मगं त्वां नमाम्युभयचित्तहेरुकम् ॥ १ ॥

गुह्यकोकनदकर्णिकान्तरव्योमपञ्चकमहानभःस्थितम् ।
धर्मधातुतिलकाद्वयाद्वयं त्वां नमामि सहजात्महेरुकम् ॥ २ ॥

कालमेघपटलान्तरोच्छलद्विद्युदुग्रपटलाधिकत्विषम् ।
सत्त्वभाजनयुगप्रदाहिकां त्वां नमामि जगदम्ब हेरुकीम् ॥ ३ ॥

नाभिचक्रकुहराम्बुराशितो वज्रवारिजसमाजसंभवाम् ।
सौधसाररसपानलम्पटां त्वां नमामि बडवानलत्विषम् ॥ ४ ॥

श्रीवसन्ततिलकास्तुतिः समाप्ता ।

वसुधारानामधारणीस्तोत्रम्

ॐ नमो भगवत्यै आर्यश्रीवसुधारायै

दिव्यरूपी सुरूपी च सौम्यरूपी बलप्रदा ।
वसुधरी वसुधारणी वसुश्री श्रीकरी वरा ॥ १ ॥

धरणी धारणी धाता शरण्या भक्तवत्सला ।
प्रज्ञापारमिता देवी प्रज्ञा श्रीबुद्धिवर्धिनी ॥ २ ॥

विद्याधरी शिवा सूक्ष्मा शास्ता सर्वत्र मातृका ।
तरुणी तारु(र)णी देवी विद्यादानेश्वरेश्वरी ॥ ३ ॥

भूषिता भूतमाता च सर्वाभरणभूषिता ।
दुर्दान्तत्रासनी भीता उग्रा उग्रपराक्रमा ॥ ४ ॥

दानपारमिता देवी वर्षणी दिव्यरूपिणी ।
निधानं सर्वमाङ्गल्या कीर्तिर्लक्ष्मीर्यशःशुभा ॥ ५ ॥

दहनी मालिनी चण्डी शबरी सर्वमात्रिका ।
कृतान्तशासनी रौद्री कौमारी विश्वरूपिणी ॥ ६ ॥

वीर्यपारमिता देवी जगदानन्दरोचनी ।
तापसी उग्ररूपी च ऋद्धिसिद्धिबलप्रदा ॥ ७ ॥

धन्या पुण्या महाभागा अजिता जितविक्रमा ।
जगदेकहिता विद्या संग्रामे तारणी शुभा ॥ ८ ॥

क्षान्तिपारमिता देवी शीलिनी ध्यानध्यायिनी ।
पद्मिनी पद्मधारी च पद्मप्रिया पद्मासनी ॥ ९ ॥

शुद्धरूपी महातेजा हेमवर्णा प्रभाकरी ।
चिन्तामणिमहादेवी प्रज्ञापुस्तकधारिणी ॥ १० ॥

निधानं कूटिमारुढिधन्यागारधनप्रिया ।
त्रैधातुकं महा आदि दिव्याभरणभूषिणी ॥ ११ ॥

मातरी सर्वबुद्धानां रत्नधाते(त्वी)श्वरेश्वरी।
शून्यता भावनी देवी भावाभावविवर्जिता ॥ ११ ॥

वैन्ये(ने)य किं न विन्यस्ता दिव्यक्लेशनिछेदनी।
भी(भे)दिनी सर्वमाराणां सप्तपातालक्षोभिनी(णी) ॥ १३॥

ब्रह्माणी वेदमाता च गुह्या च गुह्यवासिनी।
सरस्वती विशालाक्षी चतुर्ब्रह्मविहारिणी ॥ १४ ॥

ताथागती महारम्या वज्रिणी धर्मधारिणी।
कर्मधातेश्वरी विद्या विश्वज्वालाभमण्डली ॥ १५ ॥

बोध(धि)नी सर्वसत्त्वानां बोध्यङ्गकृतशेखरी।
ध्याना धीर्मुक्तिसंपन्ना अद्वयद्वयभाविनी ॥ १६ ॥

सर्वार्थसाधनी भद्रा स्त्रीरूपामितविक्रमा।
दर्शिनी बुद्धमार्गाणां नष्टमार्गप्रदर्शिनी ॥ १७ ॥

वागीश्वरी महाशान्तिर्गोप्त्री धात्री धनप्रदा।
स्त्रीरूपधारिणी सिद्धा योगिनी योगजेश्वरी ॥ १८ ॥

मनोहरी महाक्रान्तिः सौभाग्यप्रियदर्शिनी।
सार्थवाहकृपादृष्टिः सर्वताथागतात्मकी ॥ १९ ॥

नमस्तेऽस्तु महादेवी सर्वसत्त्वार्थदायिनी।
नमस्ते दिव्यरूपी च वसुधारा नमोऽस्तु ते ॥ २० ॥

अष्टोत्तरशतं नाम त्रिकालं यः पठेन् पुमान्।
प्राप्नोति नियतं सिद्धिमीप्सितार्थमनोरथान् ॥ २१ ॥

यदज्ञानकृतं पापम् आनन्तर्यसुदारुणम्।
तत्सर्वं क्षपयत्याशु स्मरणात् स[र्व]भद्रकम् ॥ २२ ॥

अथवा शीलसंपन्नः सप्तजातिस्मरो भवेत्।
प्रियश्चादेयवाक्येन रूपवान् प्रियदर्शनः ॥ २३ ॥

विप्रक्षत्रियकुलेषु आदेयमुपजायते।
अन्ते भूमीश्वरं प्राप्तः पश्चात् प्राप्त[ः]सुखावतीम् ॥ २४ ॥

श्रीवसुधारानामधारणीस्तोत्रं
सम्यक्संबुद्धभाषितं समाप्तम्।

वसुधारास्तोत्रम्

या सम्यगुक्तविधिभिः परिपथ्यमाना
लक्ष्मीं ददाति विपुलां सुगतोपभोगान् ।
तां धारणीं सकलसत्त्वहितैकचित्तां
भक्त्या नमामि सततं वसुधारसंज्ञाम् ॥ १ ॥

या संस्मृता सुचिरसुस्थतरं प्रवृद्धं
दारिद्र्यदुःखदुरितं शमते नराणाम् ।
तां कल्पवृक्षसदृशीं वसुधारसंज्ञां
नित्यं नमामि शिरसा जगतां हिताय ॥ २ ॥

रत्नाकरीं रत्ननिधानकोषां
विचित्ररत्नां प्रतिभासवर्षाम् ।
रत्नावलीं रत्नमयीं विचित्रां
नमामि चार्यां वसुधारधाराम् ॥ ३ ॥

तां रत्नपाणिसफलामवभासया ते
त्यागावतंसदयशेखरमुद्वहन्तीम् ।
हारार्धहारचलकुण्डलभूषिताङ्गी-
मार्यां नमामि वसुवृष्टिकरीं शरण्याम् ॥ ४ ॥

श्रीवसुधाराकल्पोद्धृतं वसुधारास्तोत्रं समाप्तम् ।

●

वागीश्वरवर्णनास्तोत्रम्

ब्रह्मादिदेवमनुजासुरपूजिताङ्गं
ज्ञानादिसर्वनिलयं गुणराजवन्तम् ।
ज्ञानाधिपं गुणमयं गुणवृद्धिमन्तं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ १ ॥

वेदादिशास्त्ररचनाखिलमन्त्रविज्ञं
स्तोत्रैः कथादिभिरशेषसुगीतशब्दम् ।
यं कीर्तयन्ति मुनयो नरवाण्यभिज्ञं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ २ ॥

ज्ञानप्रधानकशरीरमचिन्त्यबुद्धिं
वाचस्पतिं दिवि भुवि स्तुतकीर्तिदं तम् ।
ज्ञानेश्वरं त्रिभुवनेशचराचरं तं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ ३ ॥

रत्नादिशिल्पपरिकल्पनपूर्णज्ञेयं
चित्रं विचित्रितगुणं जनमाननीयम् ।
सर्वज्ञकारकधराद् हृदि ब्रह्मपुञ्जं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ ४ ॥

चर्याविधौ रतिपतिं स्थिरधैर्यबोधिं
ध्यानाधिपं विविधिना सुखरञ्जनीयम् ।
विद्याप्रतिष्ठितगुरुं भुवनेतिपूर्णं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ ५ ॥

वाणीपतिं भुजचतुष्टयबाणचापं
पुस्तं कृपाणमनिशं क्रमशो दधानम् ।
सर्वेष्टदं जगति यच्चणारविन्दं
वागीश्वरं सुरगुरुं सततं नमामि ॥ ६ ॥

श्रीवागीश्वरवर्णनास्तोत्रं समाप्तम् ।

वाग्वाणीस्तोत्रम्

सरस्वतीं नमस्यामि चेतनां हृदि संस्थिताम् ।
कण्ठस्थां पद्मयोनिं च ह्लींकारसुप्रियां सदा ॥ १ ॥

मतिदां वरदां चैव सर्वकामप्रदायिनीम् ।
केशवस्य प्रियां देवीं वीणाहस्तां वरप्रदाम् ॥ २ ॥

ऐं ह्रीं मन्त्रप्रियां चैव कुमतिध्वंसकारिणीम् ।
स्वप्रकाशां निरालम्बामज्ञानतिमिरापहाम् ॥ ३ ॥

मोक्षप्रदां सुनित्यां सुवरदां शोधनप्रियाम् ।
आदित्यमण्डले लीनां प्रणमामि जिनप्रियाम् ॥ ४ ॥

ज्ञानाकारां जगद्दीपां भक्तपाशविनाशिनीम् ।
इति सम्यक् स्तुता देवी वागीशेन महात्मना ॥ ५ ॥

आत्मानं दर्शयामास शरदिन्दुसमप्रभा ।

सरस्वत्युवाच

वरं वृणीष्व भदन्त! यत्ते मनसि वर्तते ॥ ६ ॥

बृहस्पतिरुवाच

प्रसन्ना यदि मे देवी दिव्यं ज्ञानं प्रदीयताम् ।

सरस्वत्युवाच

स्तोत्रेणानेन ये भक्त्या मां स्तुवन्ति सदा नराः ॥ ७ ॥

लभन्ते परमं ज्ञानं मम तुल्यपराक्रमम् ।
कवित्वं मत्प्रसादेन तथा च विपुलं यशः ॥ ८ ॥

त्रिसन्ध्यं प्रयतो भूत्वा यः स्तोत्रं पठते नरः ।
तस्य कण्ठे सदा वासं करिष्यामि न संशयः ॥ ९ ॥

ॐ ऐं वाग्वादिनि मम जिह्वायां ऐं ह्रीं मन्त्रसरस्वति स्वाहा ।

बृहस्पतिकृतं श्रीवाग्वाणीस्तोत्रं समाप्तम् ।

विद्याक्षरस्तोत्रम्

ॐकारोत्पन्नशुक्लाभं मध्यसिंहासनस्थितम् ।
बोध्यं त्रिमुद्रया युक्तं वैरोचनमुनिं नुमः ॥ १ ॥

हूंकारोत्पन्ननीलाभं पूर्वे गजासनस्थितम् ।
भूस्पर्शमुद्रया युक्तम् अक्षोभ्यं श्रीघन नुमः ॥ २ ॥

त्रांकारोत्पन्नहेमाभं दक्षिणेऽश्वमारूढम् ।
वरदमुद्रया युक्तं नमामि रत्नसंभवम् ॥ ३ ॥

ह्रिङ्कारोत्पन्नरक्ताभं पश्चिमे मयूरासनम् ।
ध्यानमूर्तिधरं नाथम् अमिताभमुनिं नुमः ॥ ४ ॥

खङ्कारोत्पन्नश्यामाभम् उत्तरे गरुडासनम् ।
अभयमुद्रसंबद्धममोघसिद्धिं नमाम्यहम् ॥ ५ ॥

रोचना मामकी चैव पाण्डरा तारणी तथा ।
ब्रह्मादिकोणसंस्थाश्च चतुर्देव्यो नमो नमः ॥ ६ ॥

निरंजनं निराकारं प्रत्येकज्योतिरूपिणम् ।
चैत्यमध्यस्थितं देवं वज्रसत्त्वं नुमो वयम् ॥ ७ ॥

श्री बुद्धभट्टारकस्य विद्याक्षरस्तोत्रं समाप्तम् ।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

ब्रह्मणा कृतम्

नमः शाक्येन्द्राय ।

नमोऽस्तु लोकाधिप शाक्यराज सद्धर्मपङ्केरुहभास्कराय ।
क्लेशारिवर्गाभिहताय तुभ्यं संबोधिदीपैर्हतमोहजाल ॥ २ ॥

ब्रह्मर्षिराजर्षिसुरर्षिसङ्घैः प्राप्तुं न यच्छक्यमनेकरत्नैः ।
प्राप्तं त्वया ज्ञानमनन्तधर्मं येनाकरिष्यः सकलस्य हैत्यम् ॥ २ ॥

प्रर्वातितं येन सुधर्मचक्रं यस्मिन् मही सोदधिशैलराजा ।
आनन्दितेव चलिता ह्यजस्रं नमोऽस्तु तुभ्यं त्रिभवाधिपाय ॥ ३ ॥

यस्मिश्च वातास्त्रिगुणेन युक्ता ववुर्नभस्तो निपतन्ति वस्त्राः(र्षाः) ।
विचित्रपुष्पाणि सुगन्धि वारि नमोऽस्तु तुभ्यं जगदेकनाथ ॥ ४ ॥

अनन्यजेयो नमुचिर्वरिष्ठैः सैन्यैर्वृतः कोटिशतप्रमाणैः ।
जितं त्वयैकेन निरायुधेन नमोऽस्तु तुभ्यं बलवर्तनाय ॥ ५ ॥

येन त्रिलोकीं प्रतिपालितुं तन्मायासुकज्जाज्वलयन्(?)प्रजातम् ।
स्वभावतो जन्मजरान्तकारिणे नमोऽस्तु तुभ्यं जगदेकनाथ ॥ ६ ॥

त्रैधातुलोकेषु विकासितुं तां संबोधिचर्यामपवर्गसेतुम् ।
तुषितायुतो जन्म चकार मर्त्ये नमोऽस्तु तुभ्यं वरबोधिराज ॥ ७ ॥

सम्यक् प्रतिज्ञां प्रतिकृत्य येन संप्रेष्यते मोक्षपुरे जनौघः ।
तदर्थमायासि च मर्त्यलोके नमोऽस्तु तुभ्यं सुमहत्प्रतिज्ञ ॥ ८ ॥

यश्चाष्टकं ब्रह्मकृतं सुपुण्यं पठिष्यति शाक्यवराग्रतः स्थः ।
दुःखं महापापभयं च हित्वा श्रीश्रीघने यास्यति पत्तने मुदा ॥ ९ ॥

ब्रह्मणा कृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम् ।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

विष्णुकृतम्

ॐ नमः सर्वज्ञाय

नमे श्रीघन त्वां सदाभावभक्तो
भवाम्भोधिसेतुं लसन्मोक्षहेतुम् ।
त्रिधातुं विधातुं सुरक्षां विरक्षां
सुदक्षं सुकक्षां सुजातं सुदान्तम् ॥ १ ॥

नमे दानशीलक्षमाध्यानवीर्यं
महज्ज्ञानपारंगतं सौगतत्वम् ।
चतुर्ब्रह्मवैहारलोकोद्धरन्तं
चतुःसत्यधर्मोपदेशं सुवेशम् ॥ २ ॥

नमे बोधिराजं सुगम्ये विराजं
सुरम्ये वने देवराजादिगम्यम् ।
चतुर्थासनस्थं हितार्थं दिशन्तं
कृतानेकसुस्थं जगद्रक्षणस्थम् ॥ ३ ॥

चतुर्मारलोकं महद्वीर्यवन्तं
जयन्तं हसन्तं त्रिजालं च कालम् ।
क्षमानद्धदेहं नमे मुक्तगेहं
त्रिलोक्यैकनाथं तथा शाक्यनाथम् ॥ ४ ॥

नमे मारसैन्यं जितं येन सर्वं
निरस्त्रेण साहाय्यमुक्तेन नूनम् ।
क्षमावर्मं मैत्रीधनुर्धारिणा च
जगत्पालितुं बोधिवृक्षस्थितेन ॥ ५ ॥

नमे शीतव्यञ्जैर्लसद्देहगेहं
जने स्नेहवन्तं वने गेहवन्तम् ।
युतं द्वाधिकैस्त्रिशकैर्लक्षणाख्यै-
र्महादुर्लभं त्रैभवे लोकपूज्यम् ॥ ६ ॥

नमे धर्ममेघास्थितं सुप्रतिष्ठं
कलौ नाथहीने भवेयं सनाथः।
तथा पालितुं स्वां प्रतिज्ञां चकार
जनिं शाक्यवंशे महीपावतंसे ॥ ७ ॥

नमे भाग्यतो लभ्यते दर्शनं ते
तथा भाग्यभाजो स्वयमेति बुद्धिः।
स्थितो धर्ममेघे कथं दर्शनं स्याद्
विहीना न तत्राभिगन्तुं प्रशक्ताः ॥ ८ ॥

इदानीं भवत्पादपद्मोत्थितेन
रजःपुञ्जकेन त्रिलोकं पवित्रम्।
तथास्माच्छिरांसि पवित्राणि सत्यं
चरिष्यामि बोधिं भवच्छासनेन ॥ ९ ॥

भुजङ्गप्रयातं कृतं माधवेन
पठेद् यो जिनस्याग्रतस्थो हि नित्यम्।
सदा मङ्गलं तस्य गेहे सुदेहे
प्रसन्नाश्च रक्षां करिष्यन्ति बुद्धाः ॥ १० ॥

त्रिजालं च छित्वा सुखानि प्रभुक्त्वा
तथा दानशीलादिपारंगताश्च।
महाबोधिलब्ध्वा जगत्पालक्षोदं
गमिष्यन्ति चान्ते सुखावत्युपाख्याम् ॥ ११ ॥

श्रीशाक्यसिंहस्य विष्णुकृतं भुजङ्गप्रयातस्तोत्रं समाप्तम्।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

शङ्करकृतम्

नमामि सौगतं जिनं लसद्वितानभासुरं
सहस्रसूर्यरोचिषं शशाङ्ककोटिनिर्मलम्।
सरोमकूपमण्डलाद् गलत्सुसूक्ष्मतेजसं
सहस्रनेमिचक्रिताङ्घ्रिपद्मपाणिशोभितम् ॥ १ ॥

भजामि लोकनायकं सशोकरोगनाशकं
जराविपद्भयान्तकं भवार्णवप्रतारकम्।
प्रबुद्धपङ्कजासनं विबुद्धबोधिकाननं
त्रिलोकलोकभावनं जगत्त्रयैकपावनम् ॥ २ ॥

नमोऽस्तु पालभुं जगच्चकार जन्म मानवं
विशुद्धशाक्यसागरे पयोनिधौ शशी यथा।
कथासुधामयोऽधुना विनोदयिष्यते भवान्
त्रिजालमोहतामसं विनाशयिष्यसे ज्वलन् ॥ ३ ॥

स्थिताय बोधिमण्डपे हिताय लोकसंचयं
जिताय मारसैन्यकं श्रिताय सत्तृणासनम्।
सुजातशाक्यभूपतेर्युताय पारमार्थकै-
र्वृताय बोधिसंवरैर्नमोऽस्तु धर्मराज ते ॥ ४ ॥

भजामि भव्यभावुकं भवस्य भावभेदकं
सुबोधिवैभवोद्भवं सुभाद्रिकं शुभांशिकम्।
भवौघभारभेदितुं बभार बोधिभारकं
सुभद्रभानुभास्वरं सुभावितं शुभावहम् ॥ ५ ॥

जिनेन्द्रमूलमण्डपे लसद्वितानविस्तृते
सहस्रकल्पपादपे प्रपूर्णवत्प्रशोभिते।
हिरण्यरत्नवेदिकाकुशासनस्थितं विभुं
नमामि शाक्यसौगतं तथागतं वरं सदा ॥ ६ ॥

पठन्ति ये जिनाग्रतो विनिर्मितं हरेण तत्
सुपद्मपद्मचामरं त्रिकालमेव मङ्गलम्।
सुकीर्तिधर्मसंयुतं लसन्ति सप्त वृद्धयो
व्रजन्ति ते सुखावतीं सुखेन सत्सुखावतीम् ॥ ७ ॥

शङ्करकृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम्।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

सुरपतिकृतम्

नौमि श्रीशाक्यसिंहं सकलहितकरं धर्मराजं महेशं
सर्वज्ञं ज्ञानकायं त्रिमलविरहितं सौगतं बोधिराजम्।
धर्माधारं मुनीन्द्रं दशबलबलिनं श्रीघनं विश्वरूपं
संबुद्धं लोकनाथं सकलभयहरं संस्थितं मर्त्यलोके ॥ १ ॥

यस्त्वं धर्माधिमेशं (पेशः) सकलजिनसुतैः संश्रितः श्वेतकेतु-
रित्याख्यां बोधिहेतुस्तदनु च तुषिता चागता बोधिराज।
मैत्रेयं स्थापयित्वा प्रमुदितमनसं स्वासने चाभिषिञ्च्य
मायागर्भे पवित्रेऽशुचिमलरहिते रत्नव्यूहे निवेश ॥ २ ॥

गर्भे स्थित्वाऽपि यस्त्वं सकलहितकरीं धर्मव्याख्यां करोषि
काले मातुः सुकक्षात्सकलनिजकरैः काशयत् संप्रजातः।
लोकाचारं च कृत्वा विहितदशविधिं वै विवाहादि तत्तत्
त्यक्त्वा सर्वांश्च राज्यं सकलजनहिते निर्गतं त्वां नमेऽहम् ॥ ३ ॥

ऊर्णाकोशाच्च यस्य · प्रतिदिनमसकृत् दक्षिणावर्तरोचिः
प्रोद्यद्देदीप्यमानत्रिभुवनकुहरध्वस्तमोहान्धकारम् ।
चत्वारिंशत्सुदन्तोद्गलितकरचयैर्भापयन्नारकीयान्
प्रोद्धृत्वा स्वर्गलोके सुरतरुकलिते स्थापिता येन वन्दे ॥ ४ ॥

यत्पाणी चक्रचिह्नावभिमतफलदौ दानपारंगतत्वो-
द्यत्कान्ता भूमिदेवी स्वगणपरिवृता भेदयित्वाऽवनिं ताम्।
स्थित्वाग्रे पूजयित्वा नमुचिमभिगतं भर्त्सयित्वा द्विषन्तं
साक्षीभूता निलीना प्रणमितशिरसा त्वां नमेऽहं जिनेन्द्रम् ॥ ५ ॥

यस्योद्ग्रीवस्य चाग्रे विधिहरमधुहृल्लोकसंस्थैः प्रवीणै-
र्द्रष्टुं नैवाभिशक्त्या किमु मनुजपुरे वासितैर्मादृशैश्च।
ब्रह्माण्डं लङ्घयित्वा तरणिशशधरौ द्यौश्च नक्षत्रलोकं
ऊर्ध्वं लोकोत्तराख्ये निजभुवनवरे भासितं त्वां नमेऽहम् ॥ ६ ॥

यद्वक्त्रं पङ्कजाभं सुरदनवसनाकर्णिकाकेसराढ्यं
ब्रह्माण्डं जृम्भतेऽस्मिन् भुवनगणवृतं संश्रितं कर्णिकावत् ।
दृष्ट्वा संमूर्च्छितोऽभून्नमुचिरनुचरैस्त्रासि सर्वज्ञनाथ
कृत्वा केचित्प्रयाताः शरणमभिमतं श्रीघनं त्वां नमेऽहम् ॥ ७ ॥

संख्याज्ञानप्रवीणास्त्रिभुवनसदने पण्डिता ये वसन्ति
तैः सर्वैर्मीलयित्वा यदि तव महिमा वर्ण्यते कल्पकालम् ।
पारं गन्तुं समर्था नहि निखिलगुणक्षीरसिन्धोः कथञ्चि-
देकाकी किं समर्थास्तदपि मम मनो बोधनार्थं नमे त्वाम् ॥ ८ ॥

पठ्यन्ते स्तोत्रमेतत्सुरपतिरचितं स्रग्धरावृत्तसंज्ञं
शक्राद्या लोकपालाः प्रतिपदनुचराः संकरिष्यन्ति रक्षाम् ।
सौख्यं भुक्त्वेह लोके तदनु सुरपतेः कल्पवृक्षाभिकीर्णे
स्थित्वा गच्छन्ति चान्ते सुगतसुतमहीं सर्वलौकैकगम्याम् ॥ ९ ॥

सुरपतिकृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

नवग्रहकृतम्

प्रणमामि जिनं सुगतं सततं तपनीयहिरण्यशरीरच्छविम् ।
वरचक्रविभूषितपाणितलं ससुरासुरमानुषपापहरम् ॥ १ ॥

प्रणमामि मुनीन्द्रगुरुं ललितं सतताकुलनिर्जितमारबलम् ।
दशपारमिताप्रतिबोधकरं चतुरार्यविबोधकरं सुकरम् ॥ २ ॥

प्रणमामि हितङ्करदेवनरं सनरामरपूजितदेववरम् ।
अमरादिकषड्गतिहैत्यकरं सजराजनिमृत्युभयादिहरम् ॥ ३ ॥

प्रणमामि सुखाकरबोधिभरं स्वसुखं प्रददौ करुणाशयतः ।
परदुःखमसह्य चकार जनुर्गतदोषनिराकुलशाक्यकुले ॥ ४ ॥

प्रणमामि च लोकहिताय गृहं विजहौ पितरं रमणीसहितम् ।
हयकण्ठकछन्दकदेववृतो मुदितोऽभ्यगमत् सुवने विजने ॥ ५ ॥

प्रणमामि तपोवनसुभ्रमितं प्रचकार च यस्तु महर्षिगणान् ।
चतुरार्यकब्रह्मविहारपरान् सुगतस्मरणैकतपोव्रतिकान् ॥ ६ ॥

प्रणमामि महाद्रुममूलवरे सुतृणासनसंश्रितवज्रधरम् ।
शतकोटिसुमारबलास्त्रहरं शतसंख्यतथागतपुत्रवृतम् ॥ ७ ॥

प्रणमामि च मल्लिकपञ्चशता वणिजः प्रतिपालनमेव कृताः ।
वणिजार्पितपञ्चसुधानयकं शुभपायसभोजनभक्षकृतम् ॥ ८ ॥

प्रणमामि सुवर्तितधर्मवरं मृगदाववने चतुरासनके ।
विधिशक्रसुरासुरलोकवृतं सुशरीरमहोज्ज्वलसर्वदिशम् ॥ ९ ॥

गुरुर्निमितकं सुगतस्तवकं पठनं कुरुते किल यो मनुजः ।
ग्रहरोगभयं नहि तस्य सदा स तु यास्यति मोक्षपुरे सुपुरे ॥ १० ॥

आदित्यादिनवग्रहकृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम् ।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

दुर्गतिपरिशोधनोद्धृतम्

ॐ नमः शाक्यसिंहाय

नमस्ते शाक्यसिंहाय धर्मचक्रप्रवर्तक ।
त्रैधातुकं जगत्सर्वं शोधयेत् सर्वदुर्गतिम् ॥ १ ॥

नमस्ते वज्रोष्णीषाय धर्मधातुस्वभावक ।
सर्वसत्त्वहितार्थाय आत्मतत्त्वप्रदेशक ॥ २ ॥

नमस्ते रत्नोष्णीषाय समन्तात्तत्त्वभावनैः ।
त्रैधातुकं स्थितं सर्वमभिषेकप्रदायक ॥ ३ ॥

नमस्ते पद्मोष्णीषाय स्वभावप्रत्यभाषक ।
आश्वासयन्यः सत्त्वेषु धर्मामृतं प्रवर्तयेत् ॥ ४ ॥

नमस्ते विश्वोष्णीषाय स्वभावकृतमनुस्थित ।
विश्वकर्मंकरो ह्येष सत्त्वानां दुःखशान्तये ॥ ५ ॥

नमस्ते तेजोष्णीषाय त्रैधातुकमभाषक ।
सर्वसत्त्व उपायेषु सत्त्वदृष्टं करिष्यते ॥ ६ ॥

नमस्ते ध्वजोष्णीषाय चिन्तामणिध्वजाधर ।
दानेन सर्वसत्त्वानां सर्वाशापरिपूरक ॥ ७ ॥

नमस्ते तृष्णोष्णीषाय क्लेशोपक्लेशछेदन ।
चतुर्मारबलं भग्नं सत्त्वानां बोधिप्राप्तये ॥ ८ ॥

नमस्ते छत्रोष्णीषाय आतपत्रं सुशोभनम् ।
त्रैधातुक जगत्सर्वं धर्मराजत्वप्रापकम् ॥ ९ ॥

लास्या माला तथा गीता नृत्या देवीचतुष्टयम् ।
पुष्पा धूपा च दीपा च गन्धादेवी नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

द्वारमध्यस्थिता ये च अंकुशपाशफोटकाः ।
श्रद्धाभावविनिर्ज्ञातं द्वारपाल नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

वेदिकादौ स्थिता ये च चतस्रो द्वारपालिकाः ।
मुदितादौ दश स्थित्वा बोधिसत्त्व नमोस्तु ते ॥ १२ ॥

ब्रह्मेन्द्ररुद्रचन्द्रार्का लोकपालाश्चतुर्दिशम् ।
अग्नी राक्षसवायुश्च भूताधिपते नमोस्तु ते ॥ १३ ॥

अनेन स्तोत्रराजेन संस्थितो मण्डलाग्रतः ।
वज्रघण्टाधरो मन्त्री इदं स्तोत्रमुदाहरेत् ॥ १४ ॥

दुर्गतिपरिशोधनोद्धृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम् ।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

छन्दोऽमृतोद्धृतम्

नमामि तं भिक्षुगणैरुपेतं तथागतैर्वृक्षतले निषण्णम् ।
अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ॥ १ ॥

शाक्येन्द्रवंशाललितावतंसमंशाधिकाभं कनकाधिकाभम् ।
नमामि बुद्धं ह्युपजातिसिद्धं सर्वार्थसिद्धाख्यकुमारवर्यम् ॥ २ ॥

नमामि नित्यं निरवद्यवृत्तं निरंजनं निर्मलदेहरूपम् ।
निःशेषसत्त्वोद्धरणैकचित्तं चन्द्राननं शुभ्रपदारविन्दम् ॥ ३ ॥

शौद्धोदनिं गौतमिपालनीयं मायासुतं मारजितं महान्तम् ।
महेश्वराद्यैर्महनीयमूर्तिममेयमाहात्म्यममेयधर्मम् ॥ ४ ॥

भवोदधेस्तीर्णमनन्तपुण्यं भवादिदेवैरभिवन्द्यपादम् ।
अनन्तभव्याकृतिभावनीयं तं नौमि भव्योज्ज्वलभूषिताङ्गम् ॥ ५ ॥

बभाण वंशस्थविरो नृपाधिपो जनान् प्रतीत्याह्वयतात्मजं मम ।
कृतारिभङ्गं जिनराजमीश्वरं गतं षडब्दं च वियोगभावयोः ॥ ६ ॥

भजस्व वंशस्थविरं मुनीश्वरं महावने वृक्षतले शुचिस्थले ।
जगद्धितं यज्जननं जरान्तकं जगज्जनन्या वरदक्षपार्श्वजम् ॥ ७ ॥

शाक्येन्द्रवंशोदधिचन्द्रमुद्गतं श्रीशाक्यसिंहं चतुराननैः स्तुवन् ।
प्राशिष्ट ब्रह्मा चतुराननं स्वकं चतुर्गुणं पुण्यमवाप्तमित्यहो ॥ ८ ॥

दैत्येन्द्रवंशाग्निरसौ जनार्दनो द्वाभ्यां विधायाञ्जलिमम्बुजासनम् ।
दोष्णाममंसच्चतुरश्चतुर्भुजाद् द्वैगुण्यमाप्तं सुकृतं मयेति ॥ ९ ॥

छन्दोऽमृतोद्धृतं श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं समाप्तम् ।

शाक्यसिंहस्तोत्रम्

यशोधराकृतम्

एषो हि भवतस्तातो जन्ममृत्युजरान्तकः।
सर्वार्थसिद्धनाम्नेति शाक्यसिंहोऽधुना सुत ॥ १ ॥

यस्य छायामुपाश्रित्य दिव्यातिसुन्दरो भवेः।
द्वात्रिंशल्लक्षणधरं पितरं दर्शयाधुना ॥ २ ॥

चतुरशीतिसाहस्रं स्त्रीणां विहाय निर्मदः।
तपोवनमगाद् योऽसौ वन्दयैनं महर्द्धिकम् ॥ ३ ॥

सप्तरत्नानि राज्यं च महैश्वर्यपदं वरम्।
हित्वा प्रव्रजितो योऽसौ तं दर्शय जगद्गुरुम् ॥ ४ ॥

मायाख्यायाः पितामह्या योऽजनद्दक्षकुक्षितः।
लुम्बिन्यामुदयात् सूर्य इव तं पितरं नम ॥ ५ ॥

अभयायाः कुलेश्वर्या येन पादाम्बुजे नतम्।
त्रैधातुकाधिपं देवं पितरं त्वं सदा नम ॥ ६ ॥

विश्वामित्रमुपाध्यायं योऽप्योजयत् सुसंवरे।
बालक्रीडाभिरक्तात्मा तातमेनं सदा नम ॥ ७ ॥

जम्बूतरुसमासीनं पञ्चर्षयो हतत्विषः।
निर्मानिनः प्राभजन् यमेनं तातं सदा नम ॥ ८ ॥

पितरं बोधयित्वा योऽत्याजयत्तु षडंशकम्।
दयाकरं जगद्वन्द्यं जनकं प्रणमात्मज ॥ ९ ॥

योऽजयद्देवदत्तादीन् मानिनः सर्ववित् सुधीः।
सर्वफलाददं विज्ञं सुधियं जनकं भज ॥ १० ॥

यात्रायामातुरं जीर्णं मृतं दृष्टिविवर्जितम्।
स्वयं विज्ञोऽपि पप्रच्छ सदा तं जनकं भज ॥ ११ ॥

कामाग्निर्नाहरद्यस्य चित्तं प्रमदवासिनः ।
निरञ्जनं निर्विकल्पं सुत तं जनकं भज ॥ १२ ॥

कनकाश्वं समारुह्य छन्दकेन बहिर्ययौ ।
देशान्निशीथे त्रिदशैः स्तूयमानं मुदा भज ॥ १३ ॥

हयं निवर्तयामास छन्दकं च तपोवनात् ।
सुकण्ठाभरणं दत्त्वा भणैनं वनचारिणम् ॥ १४ ॥

नैरञ्जनामुपासृत्य प्राकरोद् यस्तपोव्रतम् ।
जगद्धितार्थं षड्वर्षमेनं भज तपःपरम् ॥ १५ ॥

बोधिद्रुमसमासीनो जित्वा मारं सुदुःसहम् ।
प्रालभद्बोधिरत्नं यो दर्शयैनं तथागतम् ॥ १६ ॥

मृगदावस्थितः काश्यां धर्मचक्रं प्रवर्तयन् ।
ब्रह्मादिभिर्वृतो योऽसौ दर्शयैनं गुरुं सुत ॥ १७ ॥

इति मात्रोदितं श्रुत्वा राहुलः सोऽतिविस्मितः ।
प्रणम्य पितरं पश्यन् मुदमाप स्मिताननः ॥ १८ ॥

श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रं यशोधराकृतं समाप्तम् ।

•

शारदाष्टकस्तोत्रम्

शङ्खेन्दुकुन्दहिमसन्निभचारुदेहां
हंसस्थितां कमलपत्रसुरोचनीयाम् ।
दिव्याम्बराभरणभूषितसौम्यरूपां
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ १ ॥

संसारसागरमहोदधिमग्नसत्त्व-
सन्तारिणीं सुरनरार्चितपादपद्माम् ।
हारार्द्धहारमणिकुण्डलमण्डिताङ्गीं
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ २ ॥

या भारतीति कथिता जननी च लोके
मोहान्धकारभरभग्नकृतां जनानाम् ।
संकीर्तिता मुनिभिरस्तसमस्तदोषैः
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ३ ॥

वीणानुवादनरतां स्फटिकाक्षमाला-
संधारिणीं कनकपुस्तकधारिणीं च ।
रत्नैः शुभैः सुरुचिरां कृतहस्तपद्मां
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ४ ॥

पूज्या सदैव जननी परिवन्दनीया
देव्या गणा मनसि संपरिमोदनीयाः ।
जीवार्थिनः फलभृतो गुणवर्णना च
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ५ ॥

नत्वा भजेज्जगति यो जननीं प्रसिद्धां
कुर्यात्सदा भगवती किलपञ्चसौख्यम् ।
सौन्दर्यरूपगुणवित्तसुभोगभाजं
श्री शारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ६ ॥

पूजोपहारबलिभिः परिपूजनीया
देव्या गणादिकमनोज्ञसुवक्त्रपद्माः ।
यैः पूजिता भगवती किल जाड्यहन्त्री
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ७ ॥

यस्याः प्रसादमवगम्य सुखप्रदाया-
स्त्रैलोक्यनाथउदितार्कसमप्रभः स्यात् ।
धर्मार्थकामफलदामथ मोक्षदां च
श्रीशारदां भगवतीं सततं नमामि ॥ ८ ॥

श्रीशारदाष्टकस्तोत्रं समाप्तम् ।

षट्त्रिंशत्संवरस्तुतिः

श्रीसंवरं महावीरं वाराहीं चापि योगिनीम् ।
नमामि सर्वभावेन योगिनीजालनायकम् ॥ १ ॥

डाकिनीं च तथा लामां खण्डरोहां च रूपिणीम् ।
चतुरोऽमृतभाण्डांश्च बोधिचित्तेन पूरितान् ॥ २ ॥

पुल्लीरमलयोद्भूतं खण्डकपालसंवरम् ।
प्रचण्डालिङ्गणं वीरं नमामि शिरसि स्थितम् ॥ ३ ॥

जालन्धरात्समुत्पन्नं महाकंकालसंवरम् ।
चण्डाल्यालिङ्गणं वीरं शिखादेशे स्थितं नमे ॥ ४ ॥

ओडियानात्समुद्भूतं कंकालनाम संवरम् ।
प्रभावतीसमापन्नं सव्यकर्णस्थितं नमे ॥ ५ ॥

अर्बुदपीठमध्यस्थं संवरं विकटदंष्ट्रिणम् ।
महानासासमापन्नं पृष्ठदेशे स्थितं नमे ॥ ६ ॥

गोदावरीसमुद्भूतं सुरावीरिणसंवरम् ।
संपुटं वीरमत्याख्या वामकर्णस्थितं नमे ॥ ७ ॥

रामेश्वरोद्भवं वीरं अमिताभाख्यसंवरम् ।
खर्वरीसंपुटं नाथं भ्रुवोर्मध्यस्थितं नमे ॥ ८ ॥

देवीकोटोद्भवं नाथं वज्रप्रभाख्यसंवरम् ।
लङ्केश्वरीसमापन्नं नमामि नेत्रकोणगम् ॥ ९ ॥

मारवाख्यात्समुत्पन्नं वज्रदेहाख्यसंवरम् ।
द्रुमच्छायासमापन्नं नमामि स्कन्धदेशगम् ॥ १० ॥

कामरूपोद्भवं वीरं अङ्कुलिकाख्यसंवरम् ।
ऐरावतीसमापन्नं नमामि कक्षदेशगम् ॥ ११ ॥

ओकारस्थानसंजातं वज्रजटिलसंवरम् ।
भैरवालिङ्गणं वीरं तनुयुगोद्भवं नमे ॥ १२ ॥

त्रिशकुन्युद्भवं नाथं महावीराख्यसंवरम् ।
वायुवेगासमापन्नं नाभिदेशस्थितं नमे ॥ १३ ॥

कौशलायां समुद्भूतं वज्रहूँकारसंवरम् ।
सुराभक्षीसमापन्नं नमामि नासिकाग्रजम् ॥ १४ ॥

कलिङ्गपीठसंजातं सुप्रभानाम संवरम् ।
श्यामादेवी समापन्नं नमामि मुखभागजम् ॥ १५ ॥

लम्पाकस्थानसंभूतं वज्रप्रभाख्यसंवरम् ।
सुभद्रालिङ्गणं वीरं कण्ठदेशोद्भवं नमे ॥ १६ ॥

काञ्च्याख्यपीठसंजातं महाभैरवसंवरम् ।
हयकर्णासमापन्नं नमामि हृदिमध्यगम् ॥ १७ ॥

हिमालयोद्भवं वीरं विरूपाक्षाख्यसंवरम् ।
खगाननासमापन्नं मेढ्रस्थानगतं नमे ॥ १८ ॥

प्रेतपुर्यां समुद्भूतं महाबलाख्यसंवरम् ।
चक्रवेगासमापन्नं लिङ्गस्थानगतं नमे ॥ १९ ॥

गुहदेशात्समुद्भूतं रत्नवज्राख्यसंवरम् ।
खण्डरोहासमापन्नं नमामि गुदमध्यगम् ॥ २० ॥

सौराष्ट्रदेशसंभूतं हयग्रीवाख्यसंवरम् ।
शौण्डिन्यालिङ्गणं वीरं नमामि उरुमध्यगम् ॥ २१ ॥

सुवर्णद्वीपसंजातम् आकाशगर्भसंवरम् ।
चक्रवर्मिणीसमापन्नं जङ्घामध्यगतं नमे ॥ २२ ॥

नगरपीठमध्यस्थं श्रीहेरुकाख्यसंवरम् ।
सुवीरालिङ्गणं वीरं नमाम्यङ्गुलिवर्तिनम् ॥ २३ ॥

सिन्धुदेशसमुद्भूतं पद्मनृत्याख्यसंवरम् ।
महाबलासमापन्नं पादपृष्ठगतं नमे ॥ २४ ॥

मरुतीपीठसंजातं वैरोचनाख्यसंवरम् ।
चक्रवर्तिनीसमापन्नं नमाम्यङ्गुष्ठमध्यगम् ॥ २५ ॥

कुलतायाः समुद्भूतं वज्रसत्त्वाख्यसंवरम् ।
महावीर्यसमापन्नं जानुद्वयगतं नमे ॥ २६ ॥

पूर्वद्वारे स्थितं वीरं वज्रचण्डाख्यसंवरम् ।
काकास्यालिङ्गणं वीरं नमामि सुरनायकम् ॥ २७ ॥

उत्तरद्वारमध्यस्थं वज्रानलाख्यसंवरम् ।
उलूकास्यासमापन्नं नमामि यक्षनायकम् ॥ २८ ॥

पश्चिमद्वारमध्यस्थं वज्रोष्णीषाख्यसंवरम् ।
श्वानास्यासम्पुटं वीरं नमामि पन्नगाधिपम् ॥ २९ ॥

दक्षिणद्वारमध्यस्थं वज्रकुण्डलिसंवरम् ।
शूकरास्यासमापन्नं नमामि यमनायकम् ॥ ३० ॥

आग्नेयदिग्विमात्रस्थं वज्रयक्षाख्यसंवरम् ।
यमदाढीसमापन्नं नमामि वह्निनायकम् ॥ ३१ ॥

नैर्ऋत्यदिग्विभागस्थं वज्रकीलाख्यसंवरम् ।
यमदूतीसमापन्नं नमामि राक्षसाधिपम् ॥ ३२ ॥

वायव्यदिग्विभागस्थं वज्रमहाबलाह्वयम् ।
यमदंष्ट्रीसमापन्नं नमामि पवनाधिपम् ॥ ३३ ॥

ईशानदिग्विभागस्थं वज्रभीषणसंवरम् ।
यममथनीसमापन्नं नमामि भूतनायकम् ॥ ३४ ॥

एतान्देवान् नमस्यामि दिग्विदिक्षु सुसंस्थितान् ।
वीरान् वीरेश्वरीः सर्वा हेरुकं परमेश्वरम् ॥ ३५ ॥

सहजानन्दात्मकं देवं विशुद्धं ताण्डवान्वितम् ।
डाकिनीजालमध्यस्थं प्रत्यात्मवेद्यगोचरम् ॥ ३६ ॥

स्तुत्वेदं देवतीचक्रं यन्मयोपार्जितं शुभम् ।
तेन पुण्येन लोकोऽस्तु वज्रडाकपरायणः ॥ ३७ ॥

श्री षट्त्रिंशत्संवरगणचक्रमण्डलस्तुतिः समाप्ता ॥

●

षट्पारमितास्तोत्रम्

दानबलेन समुद्गतवुद्धो दानबलाधिपता नरसिंहे ।
दानबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ १ ॥

शीलबलेन समुद्गतबुद्धो शीलबलाधिपता नरसिंहे ।
शीलबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ २ ॥

क्षान्तिबलेन समुद्गतबुद्धो क्षान्तिबलाधिपता नरसिंहे ।
क्षान्तिबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ ३ ॥

वीर्यबलेन समुद्गतबुद्धो वीर्यबलाधिपता नरसिंहे ।
वीर्यबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ ४ ॥

ध्यानबलेन समुद्गतबुद्धो ध्यानबलाधिपता नरसिंहे ।
ध्यानबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ ५ ॥

प्रज्ञबलेन समुद्गतबुद्धः प्रज्ञबलाधिपता नरसिंहे ।
प्रज्ञबलेक्षक श्रूयति शब्दः कारुणिकेन पुरे प्रविशन्तम् ॥ ६ ॥

श्रीषट्पारमितास्तोत्रं समाप्तम् ।

•

षडभिज्ञस्तोत्रम्

रूपलक्षणसंपूर्णो हीनोच्चसमसेवनः ।
सन्दर्शय सदा दानं नमस्ते दानपारग ॥ १ ॥

शब्दलक्षणसंपूर्णः सुशोभो गुणसागरः ।
संश्रावय सदा शीलं नमस्ते शीलपारग ॥ २ ॥

गन्धलक्षणसंपूर्णो दिव्यप्राणो विनायकः ।
संप्रापय जिन क्षान्ति नमस्ते क्षान्तिपारग ॥ ३ ॥

रसलक्षणसंपूर्णः सुजिह्वो धर्मदेशकः ।
भाषस्व सौगतं धर्मं नमस्ते वीर्यपारग ॥ ४ ॥

स्पर्शलक्षणसंपूर्णः अनिरुद्धो निरीहकः ।
संस्पर्शय जिन ध्यानं नमस्ते ध्यानपारग ॥ ५ ॥

धर्मलक्षणसंपूर्णः सत्त्वेषु समचिन्तकः ।
प्रज्ञोपायमहाप्राप्त नमस्ते बुद्धिपारग ॥ ६ ॥

षडभिज्ञस्तवं योऽयं त्रिसन्ध्यं भक्तिमान् पठेत् ।
संसारबन्धनं हित्वा स याति परमां गतिम् ॥ ७ ॥

श्रीमहाबुद्धभट्टारकस्य षडभिज्ञस्तोत्रं समाप्तम् ।



षड्गतिस्तोत्रम्

पङ्केरुहस्थाय पदाम्बुजाय बन्धूकपुष्पारुणसुन्दराय।
सरोजहस्ताय जटाधराय नमोऽस्तु तस्मै करुणामयाय ॥ १ ॥

कापुत्रदेशोद्भवमङ्गलाय जिनेन्द्ररूपाय तथागताय।
संसारदुःखार्णवपारगाय नमोऽस्तु तस्मै करुणामयाय ॥ २ ॥

समन्तभद्राय सुरार्चिताय सुवर्णग्रैवेयकभूषिताय।
चूडामणिशीर्षधराय तुभ्यं नमोऽस्तु तस्मै करुणामयाय ॥ ३ ॥

सौन्दर्यसान्द्राय वृषासनाय भक्तार्तिहन्त्रे च तथागताय।
महार्हरत्नैः परिमण्डिताय नमोऽस्तु तस्मै करुणामयाय ॥ ४ ॥

सत्कण्ठकण्ठाय मनोहराय त्रैलोक्यसंपूजितसम्पदाय।
कारुण्यसंपूर्णहृदम्बुजाय नमोऽस्तु तस्मै करुणामयाय ॥ ५ ॥

स्तोत्रं प्रचक्रे भुवि शंखकर्म पुण्यार्थतो यच्छतराजधीमान्।
ये ये पठिष्यन्ति नराः प्रयत्नात् ते ते गताः श्रीसुरहर्म्यरम्यम् ॥६॥

श्री आर्यावलोकितेश्वरस्य षड्गतिस्तोत्रं समाप्तम्।

•

सत्त्वाराधनगाथा

आर्यं नागार्जुनकृता

सत्त्वार्थमेव मयि तिष्ठति सत्त्वश्रद्धा
नान्यत्र सा, ह्यहमहोऽधिगृहीतसत्त्वः।
चर्याऽधमा करुणया रहिता भवेद् या
संभाव्यते करुणयैव प्रहाणमस्याः ॥ १ ॥

सत्त्वेषु यस्य नितरां करुणाप्रवृत्ति-
राराधकः स मम शासनमर्मवेत्ता।
शीलं श्रुतिश्च करुणा च सुधीश्च यस्य
नित्यं स एव सुगतार्चनकृन्निगद्यते ॥ २ ॥

कल्याणकारमधिकृत्य गतोऽस्मि सिद्धिं
सत्त्वार्थमेव तनुमेष समुद्वहामि।
नैवं क्रियेत यदि सत्त्वहितं मया चेद्
व्यर्थं करोमि तनुपोषणमन्नपानैः ॥ ३ ॥

सत्त्वान् हिनस्ति मनसापि हि यः स कस्मान्-
मामेव संश्रयति यो मयि निर्व्यपेक्षः।
पूजा तु सा भवति सत्त्वहितेक्षणापि
पूज्यस्य या मनसि तुष्टिमुपाददाति ॥ ४ ॥

हिंसात्मिका परविहेठनसम्भवा वा
पूजा न पूज्यमनुगच्छति संस्कृतापि।
दाराः सुताश्च विभवश्च महत्त्व(च्च) राज्यं
मांसं च शोणितवसे नयते शरीरम् ॥ ५ ॥

येषां प्रियत्वमधिकृत्य मयोज्झितं यत्
यस्तान् विहेठयति तेन विहेठितोऽहम्।
सत्त्वोपकारपरमा हि ममाग्रपूजा
सत्त्वापकारपरता च पराभवः स्यात् ॥ ६ ॥

सत्त्वान् प्राप्य मया कृतानि कुशलान्याराधितास्तायिनः
प्राप्ताः पारमिताश्च सत्त्वसमितेरेवार्थमातिष्ठता।
सत्त्वार्थेन समुद्यतेन मनसा मारस्य भग्नं बलं
सत्त्वैरेव तथा तथा विरचितं येनास्मि बुद्धः कृतः॥ ७॥

कस्मिन् वस्तुनि सिद्ध्यतामिह कृपा मैत्री च क्वालम्बतां
क्वोपेक्षामुदितादिवस्तुविषयः कस्मिन् विमोक्षादयः।
कस्यार्थे करुणापरेण मनसः क्षान्तिश्चिरं भाविता
न स्युर्जन्मनि जन्म[नि] प्रियविधौ मित्रं यदि प्राणिनः॥ ८॥

सत्त्वा एव गजादिभावगतयो दत्ता मयाऽनेकशः
सत्त्वा एव च पात्रतामुपगतं देयं मया ग्राहिताः।
सत्त्वैरेव विचित्रभावगमनादस्मत्कृपा वर्धिता
सत्त्वानेव न पालयामि यदि चेत् कस्यार्थमर्थः कृतः॥ ९॥

संसारे व्यसनाभिघातबहुले न स्युर्यदि प्राणिनो
जन्मावर्तविडम्बनेन यमलोकं प्राप्य सात्मीकृताः।
संसारात्तरणं च सौगतमिदं महात्म्यमत्यद्भुतं
कस्यार्थेन समीहितं यदि न मे सत्त्वा भवेयुः प्रियाः॥ १०॥

यावच्चेदं ज्वलति जगतः शासनं शासनं मे
तावत् स्थेयं परहितपरैरात्मवद्भिर्भवद्भिः।
श्रुत्वा श्रुत्वा मम विरचितं सत्त्वहेतोरखिन्नैः
खेदः कार्यो न च तनुमिमं मुक्तसारं भवद्भिः॥ ११॥

सम्यक्सम्बुद्धभाषिता सत्त्वाराधनगाथा समाप्ता।



सप्तजिनस्तवः

जगद्गुरुं सुरनरलोकपूजितं कृपापटुं परहितमोक्षदेशकम् ।
विपश्यिनं त्रिभवमहौघसारगं नमामि तं सुगतगतिं तथागतम् ॥ १ ॥

अनन्तपारे भवसागरेऽस्मिन् निमज्यमानं प्रसमीक्ष्य लोकम् ।
प्रकाशितो येन हिताय धर्मो नमोऽस्तु तस्मै शिखिने जिनाय ॥ २ ॥

वन्दे विश्वभुवं बुद्धं चन्द्रार्काधिकतेजसम् ।
सागरौघमिवागाधं ज्ञानेन विनयेन च ॥ ३ ॥

यस्येन्दुरश्मिप्रतिमैर्यशोभिरलंकृता भाति वसुन्धरेयम् ।
औदुम्बरं पुष्पमिवाद्भुतं तं वन्दे ककुच्छन्दमहामुनीन्द्रम् ॥ ४ ॥

विसारिणा विगतमलेन चेतसा विरागिणा सततहितानुकारिणा ।
हृतं तमो विगतमलेन येन तं सुरार्चितं कनकमुनिं नमाम्यहम् ॥५॥

प्रतप्तचामीकररश्मिगौरं सहस्रसूर्याधिकदीप्ततेजसम् ।
लोकोत्तमं सर्वजनाभिवन्द्यं वन्दाम्यहं काश्यपनामधेयम् ॥ ६ ॥

वाक्यांशुजालैः प्रतिबोध्य लोकं सूर्यांशुजालैरिव पद्मषण्डम् ।
यो निर्वृतः शाक्यमुनिप्रदीपस्तस्मै नमः परमकारुणिकाय शास्त्रे ॥७॥

मैत्रेयनामा तुषितालयस्थो यस्यैकजन्मान्तरिता हि बोधिः ।
उत्पत्स्यते यः सुगतः पृथिव्यां सर्वात्मनाऽहं प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥ ८ ॥

स्तुत्वा मया सप्तजिनानतीताननागतं चाष्टमबोधिसत्त्वम् ।
यत्पुण्यमासादितमप्रमेयं निरामयास्तेन भवन्तु सत्त्वाः ॥ ९ ॥

श्रीसप्तजिनस्तवः समाप्तः ।

●

सप्तबुद्धस्तोत्रम्

उत्पन्नो वन्धुमत्यां नृपतिवरकुले यो विपश्यीतिनाम्ना
यस्याशीतिसहस्राण्यमरनरगुरोरायुरासीद् गतानाम् ।
येन प्राप्तं जिनत्वं दशबलबलिना पोतलावृक्षमूले
तं वन्दे ज्ञानवारिं प्रणमितसकलं क्लेशवह्निं जिनेन्द्रम् ॥ १ ॥

वंशे पृथ्वीश्वराणां महति पुरवरे यः प्रजातोऽरुणाक्षो
वर्षाणामायुरासीत् सकलगुणनिधेर्यस्य सप्तायुतानाम् ।
संप्राप्ता येन बोधिः परहितपटुना पुण्डरीकस्य मूले
तं वन्दे ज्ञानराशिं शिखिनमृषिवरं प्राप्तसंसारपारम् ॥ २ ॥

यो जातो नोपमायां सुप्रथितयशसामन्वये पार्थिवाना-
मायुः षष्टिसहस्रादभवदुरुमतेर्यस्य संवत्सराणाम् ।
जित्वा क्लेशानशेषानमृतमधिगतं येन शालस्य मूले
तं वन्दे धर्मराजं भुवनहितकरं विश्वभूनामधेयम् ॥ ३ ॥

क्षेमावत्यां प्रजातो मनुजपतिसमे यो वशी विप्रवंशे
आयुर्वर्षायुतानि प्रवरगुणनिधेरष्टचत्वारि चैव ।
जैनेन्द्रं येन लब्धं त्रिभववधकरं ज्ञानखड्गेश्वरेण
वन्देऽहं सिंहकायं सुगतमनुपमं ककुप्छन्दं मुनीन्द्रम् ॥ ४ ॥

शोभावत्यां द्विजानां नरपतिमहिते योऽन्वये संप्रसूत-
स्तस्यामायुः सहस्राण्यतिशयवपुषस्त्रिंशदेवं बभूव ।
बुद्धत्वं येन रत्नाचलवरगुरुणोदुम्बरे प्राप्तमासीद्
तं वन्दे शासितारं कनकमुनिमृषिं ध्वस्तमोहान्धकारम् ॥ ५ ॥

वाराणस्यां कृपीशक्षितिपतिमहिते विप्रवंशेऽभिजातो
यस्यामायुः सहस्राण्यतिशयमहितं विंशतिर्वत्सराणाम् ।
येन न्यग्रोधमूले त्रिभवजलनिधिः पोषितो दिव्यगत्या
तं वन्दे वन्दनीयं मुनिवरमनघं काश्यपं लोकनाथम् ॥ ६ ॥

यो जातः श्रीविशाले कपिलपुरवरे शाक्यराजेन्द्रवंशे
यस्यासीदायुरेकंशतमिह शरदां सर्वलोकैकबन्धोः।
निर्गत्याश्वत्थमूले नमुचिमपि सताऽनुत्तरा येन बोधि-
स्तं वन्दे शाक्यसिंहं सुरनरनमितं बुद्धमादित्यबन्धुम् ॥ ७ ॥

जातिं विप्रेतिवंशे नृपवरमहिते केतुमत्यां गृहीत्वा
बुद्धत्वं येन लब्धमतिगुणनिधिना नागवृक्षस्य मूले।
अष्टावब्दायुतानि क्षपितभगवतो भावि यस्याग्रमायु-
र्वन्दे मैत्रेयनाथं तुषितपुरवरे भाविनं लोकनाथम् ॥ ८ ॥

स्तुत्वा वै सप्तबुद्धान् सकलमुपगतान् सप्तसप्तार्कभासो
मैत्रेयं च स्तुवन् वै तुषितपुरगतं भाविनं लोकनाथम्।
यत्पुण्यं संप्रसूतं शुभगतिफलदं देहिनामेव सर्वं
छित्वा संक्लेशपाशान् मुनय इव चरन् निर्वृतिं स प्रयातु ॥ ९ ॥

श्रीसप्तबुद्धस्तोत्रं समाप्तम्।



सप्तविधानुत्तरस्तोत्रम्

नमः श्रीलोकनाथाय

अमितरुचिशिरःस्थं पद्मपत्रायताक्षं
दुरितकृतविनाशं मोहमायाऽहिताक्षम् ।
करधृतकनकाब्जं लोकपालैकदक्षं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ १ ॥

अरुणवरुणशोभाबोधिविज्ञानहेतुं
मणिमयमुकुटं संसारकाम्भोधिसेतुम् ।
कृतमनसिजनाशं बोधिसत्त्वादिकेतुं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ २ ॥

सरसिजकृतवासं दूरकन्दर्पपाशं
सुरनरदनुजाशं पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।
सुकृतजनविलासं कोटिसूर्यविभासं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ३ ॥

उरसि विहितनागं मोचिताशेषरागं
भवजलधिविभागं मोक्षसौख्यैकमार्गम् ।
प्रतपितकनकाङ्गं बोधिबोधैकरागं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ४ ॥

जिनवरसुतराजं मुक्तिमालाविराजं
सुललितफणिराजं · कीर्णिताचाभिराजम् ।
प्रमुदितवलिराजं पालितामर्त्यराजं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ५ ॥

धृतमधुकररूपं क्षुत्पिपासान्तकूपं
सुचरितहयरूपं सिंहलादन्तभूपम् ।
अगुरुसुरभिधूपं धारिताशेषरूपं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ६ ॥

त्रिविधविधृतपापं मे हरन्तं त्रितापं
प्रतिदिनमितिजापं देवचक्रे विलापम् ।
निरयभयकलापं भेदकाज्ञानचापं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ७ ॥

विहितशुभजनानां मुक्तितापोद्यतानां
विगलितकलुषाणां भक्तिपूजारतानाम् ।
वरकुशलसमूहं संप्रपेदे स्वभक्त्या
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ८ ॥

दशबलकृतसिद्धिं संवधे बुद्धबोधिं
जननमरणभीतं मारपाशाभिनीतम् ।
मनसि मलिनवृत्ते पूरिताज्ञानवित्ते
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ ९ ॥

प्रवरसुगतरत्नं धर्मकायं संसंघं
क्षरणमिह प्रयामि कारितानङ्गभङ्गम् ।
प्रमुदितमनसाप्तं बोधिलाभैकयत्नं
प्रणमितशिरसाऽहं नौमि तं लोकनाथम् ॥ १० ॥

श्रीलोकनाथचरणाम्बुजभक्तिपद्म-
पीयूषनन्दरचितानतिविस्तराढ्यम् ।
यत्सप्तधार्चनयुतं सरसातिहृद्यं
सौख्यावतीगमनमार्गकरं तु सद्यः ॥ ११ ॥

स्तुत्वा लोकगुरुं मुनीश्वरमिमं सर्वार्थसिद्धिप्रदं
यत्पुण्यं समुपार्जितं व्रजतु तत्पुण्येन सौख्यावतीम् ।
श्रीलोकेश्वरपादपङ्कजरसोल्लासैकहर्षोदितं
लोकक्लेशहरं सुदुर्जयवरं जित्वा प्रमुक्तामलम् ॥ १२ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरस्य सप्तविधानुत्तरस्तोत्रं समाप्तम् ।

सप्ताक्षरस्तोत्रम्

ॐ नमो लोकनाथाय मत्स्येन्द्राय विष्णवे

नमामि जिननाथाय नित्यानित्यविधायिने ।
निरम्बरविलासाय निर्विकल्पाय ते नमः ॥ १ ॥

मोक्षदाता कृतमोक्षो मोक्षसौख्यप्रदायकः ।
मेरुमण्डलमध्यस्थमोक्षदाय नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

लोलकन्दर्पपाशाय लोकेशाय महात्मने ।
लोकरक्षाय देवाय लोकनाथाय ते नमः ॥ ३ ॥

कनकाचलमध्यस्थकिन्नरैरुपपद्यते ।
कीर्तिहेतोः समाध्येषा कान्तिदं त्वामुपास्महे ॥ ४ ॥

नाथमन्त्रसमुज्ज्वालनागाभरणधारिणे ।
निरवद्याय बुद्धाय बोधिदाय नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

स्थानरक्षाकृता धीर स्थानभ्रष्टप्रपालक ।
लोचना–मामकी–तारा–पाण्डराभ्यो नमो नमः ॥ ६ ॥

यक्षराक्षसवेतालभुजङ्गभयहारिणे ।
अमिताभकिरीटाय सिद्धिदाय नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

भिक्षुरोमसहस्राणि भिक्षुरक्षाय ते नमः ।
श्लोकाष्टकमिदं पुण्यं कीर्तितं ते समाधिप ॥ ८ ॥

श्रीमदार्यावलोकितेश्वरस्य सप्ताक्षरस्तोत्रं समाप्तम् ।

•

सुप्रभातस्तोत्रम्

श्रीहर्षदेवभूपतिविरचितम्

स्तुतमपि सुरसङ्घैः सिद्धगन्धर्वयक्षै-
दिवि भुवि सुविचित्रैः स्तोत्रवाग्भिर्यतीशैः ।
अहमपि कृतशक्तिर्नौमि संबुद्धमार्यं
नभसि गरुडयाते किं न यान्ति द्विरेफाः ॥ १ ॥

क्षपितदुरितपक्षः क्षीणनिःशेषदोषो
द्रवितकनकवर्णः फुल्लपद्मायताक्षः ।
सुरुचिरपरिवेषः सुप्रभामण्डलश्रीः
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ २ ॥

मदनबलविजेतुः कापथोच्छेदकर्तु-
स्त्रिभुवनहितकर्तुः स्त्रीलताजालहर्तुः ।
समसुखफलदातुर्भेत्तुरज्ञानशैलं
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ३ ॥

असुरसुरनराणां योऽग्रजन्माग्रदेवः
सकलभुवनधातौ लोकसृष्टयैकशब्दः ।
स्वपिति मनुजधाता अब्जयोनिः स्वयम्भू-
र्दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ४ ॥

उदयगिरितटस्थो विद्रुमच्छेदताम्र-
स्तिमिरनिकरहन्ता चक्षुरेकं प्रजानाम् ।
रविरपि मदलोलः सर्वथा सोऽपि सुप्तो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ५ ॥

द्विरददशनपाण्डुः शीतरश्मिः शशाङ्क-
स्तिलक इव रजन्याः सर्वचूडामणिर्यः ।
अविगतमदरागः सर्वथा सोऽपि सुप्तो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ६ ॥

प्रबलभुजचतुष्कः षोडशार्धार्धवक्त्रो
जपनियमविधिज्ञः सामवेदप्रवक्ता ।
अमलकमलयोनिः सोऽपि ब्रह्मा प्रसुप्तो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ७ ॥

हिमगिरिशिखरस्थः सर्पयज्ञोपवीती
त्रिपुरदहनदक्षो व्याघ्रचर्मोत्तरीयः ।
सह गिरिवरपुत्र्या सोऽपि सुप्तस्त्रिशूली
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ८ ॥

ज्वलितकुलिशपाणिर्दुर्जयो दानवानां
सुरपतिरपि शच्या विभ्रमे मूढचेताः ।
अनिशिनिशिप्रसुप्तः कामपङ्के निमग्नो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ९ ॥

कुवलयदलनीलः पुण्डरीकायताक्षः
सुररिपुबलहन्ता विश्वकृद्विश्वरूपी ।
हरिरपि चिरसुप्तो गर्भवासैरमुक्तो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १० ॥

कपिलजटकलापो रक्तताम्रारुणाक्षः
पशुपतिरतिकाले सङ्गभङ्गैकदक्षः ।
स्मरशरदलिताङ्गः सोऽपि सुप्तो हुताशो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ ११ ॥

हिमशशिकुमुदाभो मद्यपानारुणाक्षो
दृढकठिनभुजाङ्गो लाङ्गली शक्तिहस्तः ।
बल इह शयितोऽसौ रेवतीकण्ठलग्नो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १२ ॥

गजमुखदशनैकः सर्वतो विघ्नहन्ता
विगलितमदवारिः षट्पदाकीर्णगण्डः ।
गणपतिरपि सुप्तो वारुणीपानमत्तो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १३ ॥

अतसिकुसुमनीलो यस्य शक्तिः कराग्रे
नवकमलवपुष्मान् षण्मुखः क्रौञ्चहन्ता ।
त्रिनयनतनयोऽसौ नित्यसुप्तः कुमारो
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १४ ॥

अशनवसनहीना भाव्यमाना विरूपा
अलमखिलविघातैः प्रेतवद्दग्धदेहाः ।
उभयगतिविहीनास्तेऽपि नग्नाः प्रसुप्ता
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १५ ॥

ऋषय इह महान्तो वत्सभृग्वङ्गिराद्याः
क्रतुपुलहवसिष्ठा व्यासवाल्मीकिगर्गाः ।
परयुवतिविलासैर्मोहितास्तेऽपि सुप्ताः
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १६ ॥

यमवरुणकुबेरा यक्षदैत्योरगेन्द्राः
दिवि भुवि गगने वा लोकपालास्तथान्ये ।
युवतिमदकटाक्षैर्वीक्षितास्तेऽपि सुप्ता
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १७ ॥

भवजलनिधिमग्ना मोहजालावृताङ्गा
मनुकपिलकणादा भ्रामिता मूढचित्ताः ।
समसुखपरिहीना वालिशास्तेऽपि सुप्ता
दशबल तव नित्यं सुप्रभातं प्रभातम् ॥ १८ ॥

अज्ञाननिद्र रजनीतमसि प्रसुप्ता
तृष्णाविशालशयने विषयोपधाने ।
काले शुभाशुभफलं परिकीर्यमाणे
जार्गति यः सततमेव नमोऽस्तु तस्मै ॥ १९ ॥

तीर्थेषु गोकुलशतानि पिबन्ति तोयं
तृप्तिं व्रजन्ति न च तत्क्षयमभ्युपैति ।
तद्वन्मुने कविशतैरपि संस्तुतस्य
न क्षीयते गुणनिधिर्गुणसागरस्य ॥ २० ॥

सुप्रभातं तवैकस्य ज्ञानोन्मीलितचक्षुषः।
अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः॥ २१॥

पुनः प्रभातं पुनरुत्थितो रविः पुनः शशाङ्कः पुनरेव शर्वरी।
मृत्युर्जरा जन्म तथैव हे मुने गतागतं मूढजनो न बुद्ध्यते॥ २२॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रिया प्रत्यभिनन्दितम्।
बुद्धं धर्मं च सङ्घं च प्रणमामि दिने दिने॥ २३॥

स्तुत्वा लोकगुरुं महामुनिवरं सद्धर्मपुण्योद्गमं
निर्द्वन्द्वं हतरागद्वेषतिमिरं शान्तेन्द्रियं निस्पृहम्।
यत्पुण्यं समुपार्जितं खलु मया तेनैव लोकोऽखिलं
प्रत्यूषस्तुतिहर्षितो दशबले श्रद्धां परां विन्दताम्॥ २४॥

श्रीहर्षदेवभूपतिविरचितं दशबलस्य सुप्रभातस्तोत्रं समाप्तम्।



स्रग्धरापञ्चकस्तोत्रम्

वन्देऽहं तत्त्वरूपं ततविततभवं भव्यहव्यस्वभावं
बुद्धानामादिबुद्धं कृतविविधहितं तेजसां सन्निधानम् ।
सम्यक्संबोधिमूर्ति त्रिगुणविलसितं पञ्चज्ञानैकहेतुं
नैराकारं निरञ्जं गगनवदनिशं निर्मलं चित्तचैत्यम् ॥ १ ॥

ज्योतीरूपे त्वदीये विनिलयतपसा दानशीलक्षमासु
वीर्यध्यानाख्यप्रज्ञोदधिकृततरणो माणिवृन्दे सुजातौ ।
बोधिं प्राप्तोऽस्मि चास्मिन् सकलपुरवरे चाकनिष्ठे महिम्नि
वन्दे त्वां विश्वरूपं स्फटिकमणिरिवोपात्तनानाप्रभेदम् ॥ २ ॥

नाना वैध्यं सुपूज्योपकरणमनिशं ढौकितं सर्वलोकैः
किं चाहं ढौकयिष्ये त्वदनुनयमनास्त्यक्तराज्यादिद्रव्यः ।
जातौ जातौ च जातौ कृतसुकृतचयं कायवाङ्मानसैस्तै-
स्तत्सर्वं ढौकयिष्ये निजतनुसहितं संगृहाण सुबुद्धे ॥ ३ ॥

एकं युग्मं तृतीयं युगलयुगमथो पञ्चमं षष्ठसंज्ञं
सप्ताष्टौ वै नवाख्यं दशममथ तथैकादशं द्वादशाख्यम् ।
त्रायोदश्यं चतुर्दश्यमथ शरकमठं चैकतः संप्रसूतम्
आनन्त्यं स्वं तदेवं जगदखिलमभूत् त्वां नमे चैकरूपम् ॥ ४ ॥

एको वैरोचनाख्यस्तदपरजिनो बुद्ध अक्षोभ्यसंज्ञः
रत्नाद्यः संभवोऽसौ त्रितय अमृतरुक्संज्ञकस्तुर्यसंख्यः ।
पञ्चाख्योऽमोघसिद्धिस्तदनु च जगति ख्यातसंख्याद्यसंख्या
देवा दैत्याश्च मर्त्या भवदवयवजाः सर्वदाऽहं नतोऽस्मि ॥ ५ ॥

श्रीशाक्यसिंहबुद्धकृतं स्रग्धरापञ्चकं समाप्तम् ।

स्वयंभूस्तवः

नमस्ते विश्वरूपाय ज्योतीरूपाय ते नमः।
नमः स्वयंभवे नित्यं जगदुद्धारहेतवे ॥ १ ॥

त्वं बुद्धस्त्वं च धर्मो दशबलतनयस्त्वं तथा बोधिसत्त्व-
स्त्वं भिक्षुः श्रावकस्त्वं कुलिशवरधरस्त्वं तथा धर्मधातुः।
त्वं ब्रह्मा त्वं च विष्णुः प्रमथगणपतिस्त्वं महेन्द्रो यमस्त्वं
त्वं पाशी त्वं धनेशस्त्वमनलपवनौ नैर्ऋतस्त्वं महेशः ॥ २ ॥

भूताः प्रेताश्चतिर्यक् त्वममरमदितिभिर्निवास्त्वं वयं च
चातुर्योनिस्त्वमेव त्रिगुणवरतनुः पञ्चज्ञानैकमूर्तिः।
वर्णास्त्वं कालमासा दिनमपि रजनी पञ्चभूतास्त्वमेव
अन्नं रत्नं च सर्वं मतिरिति महती नः सदा त्वां नताः स्मः ॥ ३ ॥

पञ्चज्ञानेन बुद्धान् सृजसि स्वयमथो बोधिसत्त्वांश्च पञ्च-
भूतानेतान् गुणांस्त्रीनजहरिगिरिशान् स्थावराञ्जङ्गमांश्च।
सर्वेषां चेतसि स्थो नटयसि सकलं सर्वतो रक्षकोऽसि
त्वं बीजं चाङ्कुरस्त्वं फलमपि विटपी सर्वदा त्वां नताः स्मः ॥ ४ ॥

श्रेष्ठं क्षत्रं त्वमस्मिन् प्रभवसि भगवान् सर्वतः सर्वदेवान्
ग्रामांस्तीर्थानि देशान् नृपसहितनरान् नैगमांश्चापि सर्वान्।
द्वीपेष्वन्येष्वपि त्वं विभजसि सकलं ज्योतिषां संविभागम्
बीजीभूतैकदीपोऽस्यखिलमपि जगद्व्यापकस्त्वां नताः स्मः ॥ ५ ॥

ज्योतिस्त्वदीयं परितो विसारि सितारुणश्यामकपीतरक्तं
दृष्टं ततः सर्वमिदं भवन्तं मन्यामहे त्वां प्रणताः स्म नित्यम् ॥ ६ ॥

नुतिं महाराजकृतां ये पठिष्यन्ति मानवाः।
चक्रवर्तिपदं प्राप्य ते हि मुक्तिमवाप्नुयुः ॥ ७ ॥

श्रीचातुर्महाराजकृतं स्वयंभूस्तवं समाप्तम्।

स्वयम्भूस्तोत्रम्

जगत्कृते स्वयंभुवमनादिलीनमव्ययम् ।
तनोर्विपञ्जरात्मकृत्स्वयंभुवं नमाम्यहम् ॥ १ ॥

सहस्रपत्रपङ्कजं लसत्सुकर्णिकोद्भवम् ।
समस्तकामनाप्रदं स्वयंभुवं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

सहस्रभानुरञ्जनं नियुतचन्द्रनन्दनम् ।
सुरादिलोकवन्दनं स्वयंभुवं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

त्वमेव राजसे गुणैर्भुवि स्थितो विराजसे ।
त्रिधातुक विभावसे स्वयंभुवं नमाम्यहम् ॥ ४ ॥

अयं क इत्ययं हृदा मीमांसितुं न शक्तवान् ।
प्रघासमात्रमीक्षितः स्वयंभुवं नमाम्यहम् ॥ ५ ॥

पठन्ति ये नरा मुदा स्वयंभुवः स्तुतिं सदा ।
त्रिवर्गसिद्धिमाप्य ते लभन्ति मुक्तिमेव ताम् ॥ ६ ॥

श्रीबृहत्स्वयंभूपुराणोद्धृतं शिखिनिर्मितं
स्वयम्भूस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

हारतीस्तोत्रम्

श्री हारतीदेव्यै नमः

कुन्दप्रसूनसदृशीं रुचिराङ्गरागां
नानाविभूषणविभूषितवज्रदेहाम् ।
सव्येन हस्तकमलेन भयार्तिहन्त्रीं
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ १ ॥

आलिङ्गितां निजमसव्यभुजेन पुत्रान्
नेत्रैस्त्रिभिश्च परिशोभितचारुदेहाम् ।
नानाविधैर्मणिगणै रचितं किरीटं
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ २ ॥

तां वह्निमण्डलगतां वसुपत्रपद्मे
श्रीरत्नपीठ उपरिस्थितपादपद्माम् ।
यक्षादिभिः परिवृतां ललितासनस्थां
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ३ ॥

लोकत्रयार्तिशमनीं शिशुजीवदात्रीं
श्रीहारतीं करुणया निजभक्तदक्षाम् ।
दुःखापहां जनमनोहरभोगभाजां
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ४ ॥

संत्रासिनीं पिशुनवृत्तिवतां जनानां
विस्फोटकादिरुजराशिविनाशकर्त्रीम् ।
भक्तेषु धातृसदृशीं च सुशीतलाङ्गीं
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ५ ॥

बुद्धानुशासनरतामतिसूक्ष्मरूपां
लोकत्रयार्चितपदां करुणार्चिभूताम् ।
गन्धर्वकिन्नरगणैः परिसेव्यमानां
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ६ ॥

केयूरकुण्डलसुकङ्कणनूपुराढ्यां
नानाविचित्रवसनप्रदधानशीलाम् ।
संरक्षणीं शिशुगणान् परिपालयन्तीं
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ७ ॥

स्वर्भूरसातलमवस्थितभुक्तिदान-
संसक्तपूर्णहृदयां त्रिगुणात्मरूपाम् ।
तां संस्मराम्यहरहः शरणं प्रपद्ये
यक्षेश्वरीं बहुसुतां प्रणमामि भक्त्या ॥ ८ ॥

रक्षाकरीं स्तुतिमिमां प्रपठेन्मनुष्यः
श्रीहारतीं निजगृहे शिशुरक्षणाय ।
वाचं श्रियं सुविपुलं च सुखादि सर्वं
दात्री त्रिकं पठति यः प्रयतः प्रभाते ॥ ९ ॥

श्रीभवरत्नविनिर्गतं बालरक्षाकरं हारतीस्तोत्रं समाप्तम् ।

●

भक्तिशतकम्

महापण्डित-रामचन्द्रभारतीविरचितम्

नमस्तस्मै भगवतेऽर्हते सम्यक्सम्बुद्धाय

ज्ञानं यस्य समस्तवस्तुविषयं यस्यानवद्यं वचो
यस्मिन् रागलवोऽपि नैव न पुनर्द्वेषो न मोहस्तथा।
यस्याहेतुरनन्तसत्त्वसुखदाऽनल्पा कृपामाधुरी
बुद्धो वा गिरिशोऽथवा स भगवान् तस्मै नमस्कुर्महे ॥ १ ॥

देवः शम्भुर्न वैरी हरिरपि न रिपुः केवली नो सपत्नो
नोदासीनः स्वयम्भुर्न च पुनरपरे ते परे वासवाद्याः।
शास्ता बुद्धो न बन्धुर्जगति न जनको नैकगोत्रैकजातिः
किन्त्वेषां वीतरागो भवति सकलविद् यः सुधीभिः स सेव्यः ॥ २ ॥

ब्रह्मा विद्याभिभूतो दुरधिगममहामाययालिङ्गितोऽसौ
विष्णू रागातिरेकान्निजवपुषि धृता पार्वती शङ्करेण।
वीताविद्यो विमायो जगति स भगवान् वीतरागो मुनीन्द्रः
कः सेव्यो बुद्धिमद्भिर्वदत वदत मे भ्रातरस्तेषु मुक्त्यै ॥ ३ ॥

ब्राह्मं वैष्णवमैश्वरञ्च बहुधा लब्ध्वा पदं हेतुतैः(तः)
संसारे वत संसरन्ति पुनरप्येकान्तदुःखास्पदे।
किन्तैर्देहभृतामपायबहलैराद्यन्तवद्भिः पदै-
स्तस्मान्नित्यमनादिमध्यनिधनं बौद्धं पदं प्रार्थ्यताम् ॥ ४ ॥

चिदाकारं सूक्ष्मं विभुविशदमाकाररहितं
निरीहं नीरूपं निरवधिकृपाबीजमजरम्।
समस्तज्ञं सर्वोपधिरहितमैश्यादमृतदं
जितानङ्गैः सेव्यं भवतु मम तद्वस्तु शरणम् ॥ ५ ॥

अणीयोऽणोः क्लेशाप्रतिहतमनन्तं च महतो
महीयो माहात्म्यप्रविजितजगद्भूरिकरुणम्।
द्विबाहुं निर्बाहुं द्विपदमपदं सत्रिवदनम्
द्विनेत्रं निर्नेत्रं सगुणमगुणं तत्तु शरणम् ॥ ६ ॥

सदानन्दं तथ्यं सरसहृदयं सूक्तिसदनं
सतां सेव्यं सम्यक्समधिगततत्त्वं सममनः ।
स्वतः सिद्धं साध्यं सकलफलदं सौम्यवदनं
सदीयं सर्वीयं भवतु मम तद् वस्तु शरणम् ॥ ७ ॥

स्वयम्भूताभिज्ञं भवभयहरं भीतिरहितं
स्फुरद्भाग्यो भोगोज्झितमहतवीर्यं मदनजित् ।
चतुर्मार्गं शुद्धप्रकृति च तथाकर्तृकमिदं
मुदं लोकोत्कृष्टामतनु तनुतां वस्तु जगताम् ॥ ८ ॥

क्वचिन्नीलं पीतं क्वचिदपि च रक्तं क्वचिदपि
क्वचिच्चन्द्रच्छायं क्वचिदपि च माञ्जिष्ठरुचिरम् ।
क्वचित् प्राभास्वर्थ्यं यदयति च वर्णव्यतिकरा-
च्छिखाषट्कं तैस्तैर्दधदुपरि तद्वस्तु शरणम् ॥ ९ ॥

पराभेद्यं जाम्बूनदरुचिरवर्णं त्रिशरणं
त्रियानं त्रिप्रज्ञं त्रिभुवनशरण्यं त्रिवचनम् ।
कृपापात्रं मन्दस्मितमरुणसच्चीवरधरं
कृतध्यानं सिद्धासनघटितपाद वस्तु शरणम् ॥ १० ॥

प्रसन्नं फुल्लेन्दीवरनयनयुग्मं त्रिपिटकं
मुहुर्व्याकुर्वाणं सुरनरगणेभ्यः करुणया ।
परं शान्तं स्वर्णोपलरजतलोष्ट्रेषु च समं
दृशां नव्यातिथ्यं भवतु मम तद् वस्तु शरणम् ॥ ११ ॥

शरणमिति सदग्रं साधु गच्छामि बुद्धं
शरणमिति विरागाग्रीयमन्वेमि धर्मम् ।
शरणमिति गणानामग्रियं यामि संघं
शरणमिति पुनर्स्त्रि द्वित्रिवारं व्रजामि ॥ १२ ॥

पुनरपि शरणं व्रजामि बुद्धं
पुनरपि लोकगुरुं गुरुं करोमि ।
पुनरपि कथयामि नौमि वन्दे,
त्वयि मम गौतम नैव तृप्तिरास्ते ॥ १३ ॥

त्रिभुवनमसकृन्निरूप्य युष्मत्-
पदसरसीरुहरेणुमाश्रितोऽहम् ।
शरणमयमयञ्च दैवतस्मे
गतिरपरा मम नास्ति नास्ति नास्ति ॥१४॥

अनित्यमखिलं दुःखमनात्मेति प्रवादिने ।
नमो बुद्धाय धर्माय सङ्घाय च नमो नमः ॥ १५ ॥

भो वीतराग भगवंस्तव पादमेव
वन्दे मुनीन्द्र मुहुरेवमिमं प्रवन्दे ।
भूयः पुनः पुनरिमं परतः परस्तात्
पार्श्वद्वयोरुपरि दिक्षु विदिक्षु वन्दे ॥ १६ ॥

गतमिह भवता पथा च येन
स्थितमपि यत्र च यत्र वा निषण्णम् ।
शयितमपि मुनीन्द्र यत्र योगात्
तदपि शतं प्रणमामि पुण्यतीर्थम् ॥ १७ ॥

समजनि भगवान् स्वयं स्म यस्मिन्
सकलमबोधि च यत्र धर्मचक्रम् ।
विशदतरमदीपि यत्र यस्मि-
न्नमृतमपूरि तदप्यहं नमामि ॥ १८ ॥

सर्वज्ञचक्रसरसीरुहराजहंस
कुन्देन्दुसुन्दररुचिं सुरवृन्दवन्द्यम् ।
सद्धर्मचक्रसहजं जनपारिजातं
श्रीदन्तधातुममलं प्रणमामि भक्त्या ॥ १९ ॥

नागालयोपरि धरालयचक्रवाल-
मूर्ध्नि त्रिकूटगतकाञ्चनशैलशृङ्गे ।
बोधिद्रुमूलनिहिताक्षयधातुबिम्बं
बिभ्रन्नमामि शिरसा जिनचैत्यमग्रम् ॥ २० ॥

हैमालवालवलयान्तरत्नवेधी
वज्रासनोल्लसितमूलमगेन्द्रबोधम् ।
यं प्राप्य मारविजयानुपदं प्रपेदे
सर्वज्ञतां स भगवान् तमहं नमामि ॥ २१ ॥

मूर्द्धन् बुद्धं नम त्वं श्रवण शृणु सदा धर्ममद्वैधवादि
प्रोक्तं सर्वत्र रूपं नयन निरुपमं पश्य जिघ्राङ्घ्रिपद्मम् ।
घ्राण त्वं चार्कबन्धोः स्तुहि सखि रसने श्रीघनं पूजयेथाः
सिद्धं पाणे व्रजाङ्घ्रे जिनसदनमदस्मद्गुणं चित्त चिन्त्य ॥ २२ ॥

बुद्धो धर्मश्च संघस्त्रितयमिति महानर्घरत्नं मुमुक्षो-
रद्यारभ्याहमस्मै त्रिभवभयभिदे सन्ददाम्यात्मभाजम् ।
एषोऽहं तत्परः स्याम्परमयनमितो नास्ति मे सत्यमेतत्
स्यामस्याहन्तु शिष्यस्त्रिदशनुतमिदं कोटिकृत्वो नमामि ॥ २३ ॥

नाहं लाभार्चनार्थी न च भयचकितो नापि सत्कीर्तिकामो
न त्वं धर्मांशुवंशप्रभव इति मुने नापि विद्याशया ते ।
पारम्पर्यान्नच त्वां शरणमुपगतः किन्तु ते सार्वजन्यं
सम्यग्ज्ञानं समीक्ष्य त्वयि भवजलधिं सन्तरीतुं प्रवृत्तः ॥ २४ ॥

त्वद्वैराग्यसमस्तभूतकरुणा प्रज्ञादिनानागुण-
स्फूर्ज्जच्चन्दनपङ्कसिन्धुपतितो गन्तुं क्षमो नान्यतः ।
भूपा वा यदि दण्डयन्ति विबुधा निन्दन्ति वा बान्धवा
मुञ्चन्ति क्षणमप्यहं जिन पितर्जीवामि न त्वां विना ॥ २५ ॥

स्वर्गे वा वसतिर्ममास्तु निरये तिर्यक्षु किं वाऽऽसुरे
प्रेतानां नगरेऽथवा नरपुरे क्वाप्यन्यतः कर्मणा ।
भो सर्वज्ञ ततस्ततस्तव गुणान् कर्णामृतस्यन्दिनो
निष्पापानवलम्बतां मम मनो नान्या सुखप्रार्थना ॥ २६ ॥

तवैवाहं दासो गुणपणगृहीतोऽस्मि भवता
तवैवाहं शिष्यः स्ववचनविनीतोऽस्मि भवता ।
तवैवाहं पुत्रः स्मृतिकृतसुखस्तद्गतिगतो
गुरो बुद्धस्वामिन् मम जनक मां पाहि भवतः ॥ २७ ॥

पिता माता भ्राता त्वमसि भगिनी त्वं च विपदि
स्थिरं मित्रं बन्धुः प्रभुरमृतदीक्षागुरुत्तमः ।
त्वमैश्वर्य्यं भोगो त्वमसि धनधान्यं च महिमा
यशो विद्या प्राणस्त्वमसि मम सर्वज्ञ सकलम् ॥ २८ ॥

वीतराग मुनीन्द्र दयाम्बुधे
सुगत भग्नबृहद्भवपञ्जर ।
अधिगतामृत बुद्ध मनोऽम्बुजं
मम तवानघ गन्धकुटीयताम् ॥ २९ ॥

अनात्मन्यनित्येऽशुभे दुःखदुःखे
दुरन्तेऽत्र संसारचक्रे भ्रमन्तम् ।
त्वमेकोसि मां त्रातुमीशो दयाब्धे
प्रभोऽतः प्रसीद प्रसीद प्रसीद ॥ ३० ॥

प्रसीदेश देवेश लोकेश जिष्णो
जगद्वन्द्य मद्वन्द्य सद्वन्द्य बुद्ध ।
अघोरे भवारे स्मरारे तमोरे
तवैवास्मि भक्तो वपुर्वाङ्मनोभिः ॥ ३१ ।

स तव कुलसुतः स एव भक्तः
स भवति शासनधूर्वहः स शिष्यः ।
स च शरणगतः स एव दासः
कथमपि यो न विलङ्घयेत् तवाज्ञाम् ॥ ३२ ॥

जगदुपकृतिरेव बुद्ध ! पूजा
तदपकृतिस्तव लोकनाथ ! पीडा ।
जिन जगदपकृत् कथं न लज्जे
गदितुमहं तव पादपद्मभक्तः ॥ ३३ ॥

धनजनविभवासुदेहराज्यं
यदुपकृते शतधा त्वया प्रदत्तम् ।
तमहितमपकर्त्तुरस्य लोकं
क्व मम कृपा मुदिता क्व वा च मैत्री ॥ ३४ ॥

उपपतिमसतीव चित्तवृत्ति-
व्रंजति भवन्तमपास्य पञ्चकामम् ।
अपि च विषयिणो न मोक्षसिद्धिः
किमु करवाणि मुनीन्द्र देहि दास्यम् ॥ ३५ ॥

प्रियतम पुरुषोत्तमाग्रबुद्ध
श्रमहर सिद्ध जगत्प्रसिद्धकीर्ते ।
भव शरणमनुत्तरप्रसादिन्
प्रतिपदमस्मि तवैव दासदासः ॥ ३६ ॥

दशबल कलिकालदुर्बलोऽहं
चिरदुरितार्णवतुङ्गभङ्गमग्नः ।
तव कथमनुयामि धर्मनावं
जिन मम देहि कृपाकरावलम्बम् ॥ ३७ ॥

प्रणतिरियमनेकशस्तवाहं
बहु भवदुःखमवेक्ष्य भीतिभीतः ।
धर गुरुतरतृष्णया पतन्तं
जिन मम देहि कृपाकरावलम्बम् ॥ ३८ ॥

जगति तव कृपा हि निर्विशेषा
प्रपवतया जिन मां च दोषदुष्टम् ।
अलमहमिह नो सुखी भवेन्दु-
र्न समकरश्चरतीव साध्वसाध्वे(ध्वोः) ॥ ३९ ॥

उपचितबहुमोहजातमन्धं
विगतदयं विगतात्मबन्धुगन्धम् ।
अपगतगुणविद्यमुद्गताघं
जनमविवेकमवाशु दीनबन्धो ॥ ४० ॥

अकरवमुरुदुष्कृतं पुरा यद्
मम वपुषा मनसा च चेतसा च ।
अनुकलमखिलं प्रलीयतां तत्
तव चरणस्मरणेन सर्ववेदिन् ॥ ४१ ॥

सुगत तव पुरः पुरः पृथिव्यां
मधुरमते पतितोऽस्मि दण्डनत्या ।
अकुशलमखिलं तवानुभावात्
प्रपततु नोत्पतताद् पुनः सहैव ॥ ४२ ॥

तव चरणसरोजमेव वन्दे
तव पदपङ्कजमेव पूजयामि ।
तव पदयुगमेव भावयेऽहं
तव पदमेव सदैव दैवतं मे ॥ ४३ ॥

कमपि न कथयामि नार्चयामि
कमपि न नौमि न चिन्तयामि नेहे ।
कमपि न शरणं व्रजामि हित्वा
तव चरणं पितरस्मि किङ्करस्ते ॥ ४४ ॥

सदसि सदसि वाचि सिद्धं
पथि पथि सद्मनि सद्मनीह बुद्धम् ।
भुवि भुवि मम वारि वारि चेतः
कलयतु नित्यमिमं हि लोकनाथम् ॥ ४५ ॥

अविरतमवलोकयामि बुद्धं
गतरजसा मनसापि चक्षुषेव ।
स्वपिमि निशि निधाय यद्धृदि त्वां
न मम समं विरहस्त्वया त एव ॥ ४६ ॥

मम तदिह दिनं हि दुर्दिनं स्याद्
अशितघनस्थगितं न दुर्दिनं मे ।
यदमृतसमबुद्धरत्ननाम
स्मृतिरहितं दिनमस्य मा तदस्तु ॥ ४७ ॥

अमृतद षडभिज्ञ धर्मराज
त्रिभुवनवन्द्य मुनीन्द्र गोतमेति ।
अहरहरनुकीर्त्यते नृभिर्यै-
रहमहितानपि तान्नमामि धन्यान् ॥ ४८ ॥

दशबल जिन सिद्ध वज्रबुद्धे
सुगत तथागत बुद्ध शाक्यसिंह ।
इति निगदति यः क्वचित् कदाचित्
तमभिनमाम्यपि दासवंशजातम् ॥ ४९ ॥

मदनजित पराजितेभ्य शास्त-
र्विभव विनायक विश्वविद्वरेण्य ।
कविवर वदतांवरेश शुद्धो-
दनसुत शाक्यमुने मुने प्रसीद ॥ ५० ॥

अमृतमपि निपीय निर्जरेन्द्र
पुनरपि तेऽपि शुनीस्तनं धयन्ति ।
सकृदपि तव वाक्सुधारसज्ञो
न विशति जातु स मातुरेव गर्भम् ॥ ५१ ॥

अहमिह भगवन्नलं न सोढुं
जननजरामरणा[म]यादिबाधाम् ।
कुरु मम करुणं दिशो न जाने
गुरु तदवेक्ष्य च तिर्यगादिदुःखम् ॥ ५२ ॥

तदुपरि परिचिन्त्य वृद्धकाले
करचरणादिदृगादिपारवश्यम् ।
अगतिकमतिवेपते मनो मे
जिन किमहं करवै प्रभो प्रसीद ॥ ५३ ॥

श्रवणपथगतेऽप्यदृष्टपूर्वे
सुखकृति वस्तुनि यत्तनोमि तृष्णाम् ।
अविरतमत एव शान्तिबीजे
त्वयि वलते रमते ममात्र चेतः ॥ ५४ ॥

सविपदि रमते न मे मनोऽतः
सुरनरशर्मणि पूर्वपूर्वभुक्ते ।
अनुदिनमनुभूय शर्करायाः-
मपि विरतिं कुरुते हि दृष्टदोषः ॥ ५५ ॥

करतलगतमप्यमूल्यचिन्तामणि-
मवधीरयतोज्झितेन मूर्खः ।
कथमहमपहाय वुद्धरत्नं
जगति धनी गुणवांश्च पण्डितश्च ॥ ५६ ॥

स भवति मतिमान् स नाकुलीनः
स च गुणवान् स च कीर्तिमान् स शूरः ।
स जगति महितः सुखी स एव
त्वयि जिन यस्य सुनिश्चलास्ति भक्तिः ॥५७॥

अपि सकलमधीतमत्र तेन
श्रुतमपि सर्वमनुष्ठितं च तेन ।
अपि जितमजितेन तेन विश्वं
त्वयि जिन यस्य सुनिश्चलास्ति भक्तिः ॥ ५८ ॥

त्यजति निजपरम्परादरेणे-
तरसमयस्य जनो न दृष्ट दृष्टिम् ।
असुहरमपि गौरवेण मातु-
र्न खलु शिशुर्विषमोदकं तु मुञ्चेत् ॥ ५९ ॥

कविवरमहमस्मि पण्डितस्ते
जिन न जहामि कथन्नु कुगृंहीतम् ।
नुदति हि तमसन्तति प्रवृत्तां
मिहिरमरीचिसहायिनी सुदृष्टिः ॥ ६० ॥

सुगतपदपराङ्मुखस्य पुंसः
किमु तपसा यशसा च किं किमन्यैः ।
सुगतपदपराङ्नुखस्य पुंसः
किमु तपसा यशसा च किं किमन्यैः ॥ ६१ ॥

सुगतपदि न भक्तिरस्ति येषा-
मजननिरेव महीतलेऽस्तु तेषाम् ।
कथितमिह कृतागसां नराणां
निरयगतिर्नियतं न चान्यतो यत् ॥ ६२ ॥

विदितसकलशास्त्रमुन्नतानां
कुलभवमुत्तमरूपयौवनाद्यम् ।
जिन भवदनुपासकं नृपासं
त्यजतु मनो मल नीचवत्तु जात्या ॥ ६३ ॥

परिहृतमदमानमत्सरादिः
सकरुणशीलसमाधिमान् विवेकी ।
तव पददृढभक्तिरन्त्यजोऽपि
प्रतिभवमस्तु नरोत्तमः सखा मे ॥ ६४ ॥

विहितजिनपदार्चनस्य भक्तु-
र्दशदिवसानपि जीवितं प्रशस्तम् ।
न तु नियुतसहस्रकल्पकोटी-
रकृतमुनीन्द्रपदाब्जपूजनस्य ॥ ६५ ॥

स भवति सुरसुन्दरीसखोऽन्यैः
कृतमभिनन्दति वार्चनं च भक्त्या ।
त्रिदशनरगुरो त्वदीयपूजा-
मगतितया यदि कर्तुमक्षमः स्यात् ॥ ६६ ॥

सुरुचिरमतिचित्रचित्ररूपं
नयनपथं नयतीह यस्तवार्चाम् ।
रहयति पुरुषं तमप्युदारं
चिरतरसञ्चितदुष्कृतं कवीन्द्र ॥ ६७ ॥

मणिकनकशिलादिनिर्मितां यः
प्रणमति ते प्रतिमां तयोश्च तुल्यम् ।
फलमिह मनसश्च सम्प्रसादा-
दनुपरतं जिन योऽग्रतो नमेत् त्वाम् ॥ ६८ ॥

सकृदपि तव पादपद्मपूजा
वनकुसुमैरपि यः करोति धीमान् ।
अवनतसुरसंघमौलिमालो-
ज्ज्वलममलं श्रयते तमाधिपत्यम् ॥ ६९ ॥

यदि भवति सरूपमेकचित्त-
क्षणशरणोद्भवपुण्यवृन्दमुच्चैः ।
गणशरण समन्तभद्रसाधोऽखिल-
नभसोऽप्यतिरिच्यते तदा तत् ॥ ७० ॥

तव गुणकथने तु यः प्रसन्न-
स्तमनुविशन्ति मुने गुणास्त्वदीयाः ।
उदयति शशिनि प्रसन्नमिन्दू-
पलमिव तत्किरणावलीतुषारः ॥ ७१ ॥

सकृदपि समदायि देव किञ्चिद्
भवरतिमुत्सृजता जनेन तुभ्यम् ।
सुगत तदखिलान् लुनाति धारा-
वदसिरिव द्रुममाश्रवादिदोषान् ॥ ७२ ॥

कृतमिह सुकृतं मृषादृशा यज्ज-
नयति तत् किल तस्य दुर्विपाकम् ।
क्षितिसलिलरसं स्वतिक्तभावं
नयति यथा पिचुमर्दबीजमुप्तम् ॥ ७३ ॥

तव पदनलिने निपत्य भूयो
निपतति नैव चतुर्ष्वपायकेषु ।
नहि कुशलकरो नरः कदापि
क्वचिदपि दुर्गतिमेति नाथ कश्चित् ॥ ७४ ॥

इति भवदुपदेशतो विदित्वा
तव पदपङ्कजपूजने रतोऽस्मि ।
दृढयतु भगवान् युगे युगे मे
कुमतिमुदस्य भवे भवेऽर्यभक्तिम् ॥ ७५ ॥

स्थिरमपि भगवन् क्षणं तवोक्तौ
करचरणानि दृगादि वैरिवर्गः ।
व्यथयति हृदयं बलाद्विचाल्य
त्वमिदमनाथमनीश पाहि पाहि ॥ ७६ ॥

यदि नयनमयं वशे विधातुं
यतति तदा द्रवति श्रवो यदा तत् ।
तदनु रसन-नासिकाशरीरा-
ण्यहह परस्परदुर्ग्रहाणि चैवम् ॥ ७७ ॥

गतिरतिचपलस्य चेतसः स्या-
दिह नभसीव नभस्वतोऽसुरोधा ।
कथमपि भजते क्रमेण धैर्यं
चिरमिदमभ्यसनेन संविरक्त्या ॥ ७८ ॥

विशदमपि मनः स्वभावतो मे
चिरकृतकिल्विषकालिमाहृतं स्यात् ।
कुशलजललवैः कथन्नु धौतं
भवति मयेदृशचेतसार्जितैस्तैः ॥ ७९ ॥

शुचितरवचनामृतप्रवाहै-
रघमलिनीकृतचित्तसन्ततिं माम् ।
अनधिवर नितान्तमाधितप्तं
सपदि विशोधय दण्डवन्नमामि ॥ ८० ॥

सति सकलगुरो मुने प्रसन्ने
किमिह दुरापममुत्र किं दुरापम् ।
यदमलमनसस्त्वदीयदासाः
सुरपतितां मनसापि नाद्रियन्ते ॥ ८१ ॥

विदधति भयमिन्द्रियाणि भूम्ना
विषयविषग्रहणेषु दोषदृष्ट्या ।
नहि सुविदितभाविदाहदोषः
शिशुरपि दीपशिखाग्रसङ्गृही स्यात् ॥ ८२ ॥

न भवति जिन यावदेष जीर्णो
विषयपिशाचनिषेवणेन तावत् ।
झटिति सुकृतकर्मणि प्रयोज्य
स्वव शरणागतवत्सलागतं माम् ॥ ८३ ॥

इदमपि यदि वेद्मि पुत्रदार-
स्वतनुगृहादि मरीचिकाम्बुतुल्यम् ।
स्थगयति ममता च मामहन्ता
तदपि हि मोहविजृम्भितं गरीयः ॥ ८४ ॥

अजनि च निजकारणेन सर्वं
निरसति जीर्यति नश्यति स्वहेतोः ।
अहमपि हि तथैव धातुपुञ्जः
कथमहमस्य कथं मुने ममेदम् ॥ ८५ ॥

आत्मबुद्धिरिह यस्य जायते
सा च तस्य जनयेदहङ्कृतिम् ।
सा तनोति सुतरां भवस्पृहां
सैव मोहजननी मुहुर्मुहुः ॥ ८६ ॥

तेन कर्म कुरुते शुभाशुभं
तद्धि दुःखजनकं भवत्रये ।
दुःखमूलमत एव सात्मधीः
तां लुनीहि जिन मे वचोऽसिना ॥ ८७ ॥

अथ सकलविदं दयासमुद्रं
त्रिभुवनकारणकारणं कुलीनम् ।
निखिलगतमनन्तमस्तिशान्तिं
मुनिजनमानसहंसमीशमीडे ॥ ८८ ॥

स्नाने कर्मणि भोजने वितरणे घ्राणे तथाऽऽकर्णने
ध्यानस्पर्शनदर्शनादिषु तथा सम्भाषणादावपि ।
प्रातः सायमथो दिवा च निशि च त्वत्पादपद्मे त्रिभो
चित्तं मे रमतां मुनीन्द्र सततं यूनां युवत्यामिव ॥ ८९ ॥

मत्स्वामिन् मदभीष्टकल्पविटपिन् मद्दैवते मद्गुरो
मन्मातर्मदुपास्य मत्प्रियसखे मत्सद्गते मत्पितः ।
मद्विद्ये मदशेषदुःखशमकृद् मद्भावने मन्निधे
मन्मुक्ते मदुदारभाग्य मदसो मद्बुद्ध मां पालय ॥ ९० ॥

ब्रह्मा जिह्माननोऽभूद् गुरुरगुरुरहर्णायकोऽनायकोऽसौ
विष्णुस्तृष्णां प्रपेदे कविरकविरभूदीश्वरोऽनीश्वरोऽपि ।
शेषः शेषानुभावस्तव सुगत नुतौ खण्डिताखण्डलोक्तिः
कोऽहं मूढो वराकस्त्रिदशनरपते कीर्त्तने ते गुणानाम् ॥ ९१ ॥

दशद्व्यधिकविंशतिस्फुरदशीत्यनुव्यञ्जनैः
महापुरुषलक्षणं वपुषि यस्य देदीप्यते ।
कलामपि न षोडशीं भजति तस्य पुण्यात्मन-
श्चतुर्मुखमुखो गणो दिविषदां नृणां का कथा ॥ ९२ ॥

महेन्द्रनवचापवत् कनकपर्वते सर्वतः
सदा तव मनोहरं स्फुरति सुप्रभामण्डलम् ।
दृशो भवति गोचरं तदिह यस्य तस्य त्वरान्
तमस्ततिमनुत्तमां हरति दूरमन्तर्बहिः ॥ ९३ ॥

रूपं लोचनलोभनं श्रवणयोरानन्दसन्दोहदा
वाणी विश्वविमोहकृत् तव कृपावेशोऽतिशान्तस्तव ।
पाण्डित्यं प्रथितं जगत्सु भगवन् सर्वज्ञनाम्नैव ते
साम्राज्यस्य च यौवने निरसनं वैराग्यसीमा स्फुटम् ॥ ९४ ॥

शौर्यं त्वद्विषमेषु दर्पदलनादङ्गीकृतं दैवतैः
यद्बाणैः स सुरासुरः प्रविजितो लोकोऽयमीशत्करम् ।
वीर्यं ते प्रकटीचकार नितरां निर्वाणसाक्षात्कृतिः
किं ब्रूमो बलवैभवं भगवतस्तत्ते जगद्दुर्वहम् ॥ ९५ ॥

यत्र च्छागतुरङ्गमारणविधिर्वेदेऽपि तं निन्दसि
प्रेम्णा प्राणभृतामतः सकरुणस्त्वत्तो महान्नापरः ।
एवं ते गुणसम्पदो न विषया बुद्धेरसूयात्मनां
ते मूढाः प्रलपन्ति हन्त सुगतो मद्वेदनिन्दीत्ययम् ॥ ९६ ॥

निर्मज्जत्सुरसुन्दरीकुचचलन्निर्मन्दमन्दाकिनी-
फेणक्षीरसमुद्रकैरवसखी सत्कीर्तिलक्ष्मीस्तव ।
यन्नालिङ्गति मन्दभाग्यमधुना भूयान्न तेनापि मे
सङ्गः सङ्गगदादिवैद्य भगवन्नेषापि मे प्रार्थना ॥ ९७ ॥

ये त्वां गच्छन्ति बुद्धं शरणमिति न ते दुर्गतिं यान्ति सन्त-
स्त्यक्त्वा कायान्मनुष्यान्निरतिशयसुखान् ते लभन्तेऽथ दिव्यान् ।
दुःस्वप्नो दुर्निमित्तं दुरहिदुरहिता दुर्ग्रहा दुष्टसत्त्वा
दुःखं दुर्व्याधयोऽपि क्वचिदिह कुशलान् नोपसर्पन्ति चैवम् ॥ ९८ ॥

छत्रं ब्रह्मा व्यधात्ते मणिमयममलं चामरं चक्रपाणि-
स्तोतारो गद्यपद्यैर्हरगुरु-फणिनः शाङ्खिकोऽभून्महेन्द्रः ।
अन्ये दीपोदकुम्भध्वजकुसुमलसत्पाणयो भक्तिनम्रा-
स्तस्थुर्व्याख्याय धर्मं भुवमवरुहतः स्वर्गतस्ते मुनीन्द्र ॥ ९९ ॥

मातेवासीत् परस्त्री भवति परधने न स्पृहा यस्य पुंसो
मिथ्यावादी न यः स्यान्न पिबति मदिरां प्राणिनो यो न हन्यात् ।
मर्यादाभङ्गभीरुः सकरुणहृदयस्त्यक्तसर्वाभिमानो
धर्मात्मा ते स एव प्रभवति भगवन् पादपूजां विधातुम् ॥ १०० ॥

सर्वप्राणातिपातात् परधनहरणात् सङ्गमादङ्गनाया
मिथ्यावादाच्च मद्याद्भवति जगति योऽकालभुक्तेर्निवृत्तः ।
सङ्गीतस्त्रक्सुगन्धाभरणविलसितादुच्चशय्यासनाद-
प्यासीद्धीमान् स एव त्रिदशनरगुरो त्वत्सुतो नात्र शङ्का ॥ १०१ ॥

श्रोतापत्त्यादिमार्गाः सदवयवयुता घ्नन्ति रागादिदोषान्
दोषास्ते छिन्नमूला हतभवगतयस्तत्फलैर्यान्ति शान्तिम् ।
मार्गाणां क्लेशहानिः सदमृतमजरं कारणं स्यान्नवानां
धर्माणां हेतुरेषां तव जिन वचनं तस्य हेतुस्त्वमेव ॥ १०२ ॥

विंशत्सत्कायदृष्टिक्षितिधरममलज्ञानवज्रेण भित्त्वा
रागद्वेषादिपापान्तदुदितमखिलं कर्म चोन्मूलयन्तः ।
चत्वारो लब्धमार्गास्तदनुगुणफलास्तेऽपि चत्वार एवं
त्वत्तश्चाष्टार्यसङ्घः पृथगिति न पुनश्चिन्तयामो मुनीन्द्र ॥ १०३ ॥

अपि गगणमनन्तं सर्वसत्त्वोऽप्यनन्तः
सकलमिदमनन्तं चक्रवालं विशालम् ।
वदसि जिन विदित्वानन्तया ज्ञानगत्या
तव च गुणमनन्तं वेदसी बुद्ध चैवम् ॥ १०४ ॥

भगवति भवतीति ध्वंसकारिण्यमोघे
भवतु भवतु भक्तिर्जन्मजन्मान्तरेऽपि ।
भवतु भवतु धर्मः सर्वथा मेऽनुशास्ता
भवतु भवतु संघोऽनुत्तरा पुण्यभूमिः ॥ १०५ ॥

त्रिभुवनमहनीयं त्वामभिष्टुत्य बुद्धं
विशदतरमदभ्रं पुण्यमत्रार्जितं यत् ।
जगति सकलसत्त्वास्तेन सम्बुद्धबोधिं
विधुतविविधपापा भावनाभिर्व्रजन्तु ॥ १०६ ॥

भास्वद्भानुकुलाम्बुजन्ममिहिरे राजाधिराजेश्वरे
श्रीलङ्काधिपतौ पराक्रमभुजे नीत्या महीं शासति ।
सद्गौड़: कविभारतिक्षितिसुरः **श्रीरामचन्द्रः** सुधीः
श्रोतृणामकरोत् स **भक्तिशतकं** धर्मार्थमोक्षप्रदम् ॥ १०७ ॥

श्रीशाक्यमुनेर्भगवतः सर्वज्ञस्य परमोपासकेन गौड़देशीय-
श्रीबौद्धागमचक्रवर्त्तिना भूसुरेणाचार्येण महापण्डितेन
विरचितं भक्तिशतकं समाप्तम् ।

नृपः पराक्रान्तिभुजो महीभुजो शिरोमणिः पण्डितमण्डलीसखः ।
स रामचन्द्रं कविभारतिद्विजं चकार बौद्धागमचक्रवर्तिनम् ॥ १ ॥

बुद्धो मे जयतां जिनः स भगवान् तद्देशना निर्मला
स्थेयात् सत्त्वहिताय भातु भणिता सङ्घस्तदाधारकः ।
लङ्केशप्रमुखाश्चिरं वसुमतीं रक्षन्तु नित्यं नृपा
वर्षन्तु स्तनयित्नवश्च समये मैत्रीं लभन्तां प्रजाः ॥ २ ॥

तीर्थग्रामपतेर्यतेस्त्रिपिटकाचार्यस्य भूपान्वया-
चार्यश्रेष्ठमुनीश्वरस्य सुगिरः श्रीराहुलस्वामिनः ।
शिष्यो योऽवरजः सुमङ्गलमुनिर्धीमान् स्वया भाषया
कारुण्येन मुनीन्द्रभक्तिशतकव्याख्यानमाख्यातवान् ॥ ३ ॥

नमो बुद्धाय गुरवे नमो धर्माय शासिने ।
नमः सङ्घाय महते त्रिभ्योऽपि सततं नमः ॥ ४ ॥

सिद्धिः ।



अष्टमातृकास्तोत्रम्

ॐ नमः श्रीविघ्नेश्वराष्टमातृकाभ्यः।

विघ्नेश्वर महावीर सिद्धिरूपाय वृद्धये।
विघ्ननाशाय देवाय गणेशाय नमाम्यहम् ॥ १ ॥

पूर्वे ब्रह्माणी देवी हंसमारुह्य संस्थिता।
पीतवर्णप्रभा देवी श्रीब्रह्माणि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥

दक्षिणे श्रीवाराही महिषासनसंस्थिता।
रक्तवर्णाऽङ्कुशहस्ता श्रीवाराहि नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

पश्चिमे चेन्द्राणी देवी गजमारुह्य संस्थिता।
कुङ्कुमाभा वज्रहस्ता श्रीइन्द्राणि नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

उत्तरे माहेश्वरी देवी वृषमारुह्य संस्थिता।
श्वेतवर्णप्रभा देवी माहेश्वरि नऽमोस्तु ते ॥ ५ ॥

आग्नेये बालकौमारी मयूरकान्तिपूरणी।
रक्तवर्णा शक्तिहस्ता श्रीकौमारि नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

नैर्ऋत्ये वैष्णवी देवी श्यामाभा गरुडासना।
शङ्खचक्रधरा देवी नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

वायव्ये चामुण्डा देवी सिंहमारुह्य संस्थिता।
ककारमूर्तिधारी च खड्गहस्तां नमाम्यहम् ॥ ८ ॥

ईशाने चण्डिका देवी धूम्रवर्णा प्रज्वालिनी।
कर्तिमुण्डधरा देवो महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

अष्टपीठस्थिता देवीरष्टवृक्षनिवासिनीः।
अष्टभैरवसंयुक्ता अष्टमातृका नमाम्यहम् ॥ १० ॥

सूर्यः सोमो महीपुत्रो बुधो देवासुरगुरू।
शनिश्च राहुः केतुश्च यमाय च नमो नमः ॥ ११ ॥

श्री अष्टमातृकास्तोत्रं समाप्तम्।

सङ्केतपरिचयः

अ. अ.	अवलोकितेश्वराष्टकम्
अ. अ. श.	अवलोकितेश्वराष्टोत्तरशत-नामस्तोत्रम्
अचि.	अचिन्त्यस्तवः
अध्य.	अध्यर्धशतकम्
अ. मा.	अष्टमातृकास्तो०
अवधा.	अवधानस्तो०
अव. स्त.	अवलोकितेश्वरस्तवः
अव. स्तो. च.	अवलोकितेश्वरस्तोत्रम् (चन्द्रकान्ता)
,, ,, वा. ,, ,,	(वासुकि)
अव. अ.	अवलोकितेश्वराष्टकम्
आ. ग.	आकाशगर्भाष्टोत्तरशतनामस्तो०
आ. द्वा.	आदिबुद्धद्वादशकस्तो०
क. त्रि.	कल्याणत्रिंशतिकास्तो०
क. प.	कल्याणपञ्चविंशतिस्तो०
क. स. त.	कमलाकरसर्वतथागतस्तो०
क. स्त.	करुणास्तवः
ग. स्त.	गण्डीस्तवः
ग. स्तो.	गणेशस्तोत्रम्
गु. र.	गुरुरत्नत्रयस्तो०
गुह्ये०	गुह्येश्वरीस्तो०
चतुः. सं.	चतुःषष्टिसंवरस्तो०
च. द.	चण्डिकादण्डकम्
च. सं.	चक्रसंवरस्तुतिः
चै. व.	चैत्यवन्दनास्तो०
ता. अ.	ताराष्टोत्तरशतनामस्तो०
ता. न.	तारानमस्कारैकविंशतिस्तो०
ता. स्तु.	तारास्तुतिः

ता. स्र.	तारास्रग्धरास्तोत्रम्
द. भू.	दशभूमीश्वरस्तो०
ध. वा. म.	धर्मधातुवागीश्वरमण्डलस्तो०
नरको.	नरकोद्धारस्तो०
ना. सं.	नामसंगीतिः
निरौ.	निरौपम्यस्तवः
नैरा.	नैरात्म्याष्टकम्
पञ्चा.	पञ्चाक्षरस्तो०
प. त. गा.	पञ्चतथागतगाथा
प. त. स्तो.	पञ्चतथागतस्तो०
प. स्त.	परमार्थस्तवः
पीठ.	पीठस्तवः
पोत.	पोतलकाष्टकम्
प्र. पा. स्तु.	प्रज्ञापारमितास्तुतिः
प्र. पा. स्तो.	प्रज्ञापारमितास्तो०
प्र. स. स्तो.	प्रतिसरास्तो०
बु. ग.	बुद्धगण्डीस्तवः
बु. भ.	बुद्धभट्टारकस्तो०
बु. स्तो.	बुद्धस्तोत्रम्
भ. प्र.	भद्रचरीप्रणिधानस्तो०
भ. श.	भक्तिशतकम्
म. का.	महाकालस्तो०
मङ्ग.	मङ्गलाष्टकम्
म. च. अ.	महाचक्रवर्ति-अष्टोत्तरशत-नामस्तो०
मञ्जु. अ.	मञ्जुश्रीनामाष्टोत्तरशतस्तो०
मञ्जु. स्तो.	मञ्जुश्रीस्तोत्रम्
म. ता. स्तु.	महोग्रतारास्तुतिः
म. प्र.	महाप्रतिसरास्तो०

म. भ.	महाबोधिभट्टारकस्तो०	व. स. स्तो.	वज्रसत्त्वस्तोत्रम्
म. म.	महामन्त्रानुसारिणीस्तो०	व. स्तु.	वज्रयोगिनीस्तुतिप्रणिधानम्
म. मा.	महामायूरीस्तो०	वा. व.	वागीश्वरवर्णनास्तो०
म. व.	महाबोधिवन्दनाष्टकम्	वा. वा.	वाग्वाणी स्तो०
म. शा.	मध्यमकशास्त्रस्तुति:	विद्या.	विद्याक्षरस्तो०
म. शी.	महाशीतवतीस्तो०	शा. अ.	शारदाष्टकम्
म. षो.	मङ्गलषोडशस्तुति:	शा. ब्र.	शाक्यसिंहस्तोत्रं (ब्रह्माकृतं)
म. सा.	मह साहस्रप्रमर्दिनीस्तो०	शा. वि.	,, ,, (विष्णु०)
महो.	महोग्रताराष्टकम्	शा. श.	,, ,, (शंकर०)
मा. वि.	मारविजयस्तोत्रम्	शा. सु.	,, ,, (सुरपति०)
र. का.	रक्षाकालस्तव:	शा. न.	,, ,, (नवग्रह०)
र' मा.	रत्नमालास्तो०	शा. दु.	,, ,, (दुर्गतिपरि०)
रू. स्त.	रूपस्तव:	शा. छ.	,, ,, (छन्दोमृतो०)
लोका.	लोकातीतस्तव:	शा. य.	,, ,, (यशोधरा०)
लो. ना.	लोकनाथस्तो०	ष. स.	षट्त्रिंशत्संवरस्तुति:
लो. श.	लोकेश्वरशतकम्	ष. ग.	षड्गतिस्तोत्रम्
लो. स्तो.	लोकेश्वरस्तो०	षट् पा.	षट्पारमितास्तुति:
व. ति. स्तु.	वसन्ततिलकास्तुति:	स. अ.	सप्तविद्यानुत्तरस्तोत्रम्
व. दे.	वज्रदेवीस्तो०	स. गा.	सत्त्वाराधनगाथा
व. धा.	वसुधाराधारणी	स. जि.	सप्तजिनस्तव:
व. धा. स्तो.	वसुधारास्तोत्रम्	स. बु.	सप्तबुद्धस्तव:
व. ना.	वज्रपाणिनामाष्टोत्तरशतम्	सप्ता.	सप्ताक्षरस्तोत्रम्
व. पि.	वज्रयोगिनीपिण्डार्थस्तुति:	सुप्र.	सुप्रभातस्तोत्रम्
व. प्र.	,, प्रणामैकविंशिका	स्र. प.	स्रग्धरापञ्चकम्
व. म.	वज्रमहाकालस्तो०	स्व. स्त.	स्वयंभूस्तव:
व. वि. सा.	वज्रविलासिनीसाधनास्तव:	स्व. स्तो.	स्वयंभूस्तोत्रम्
व. वि. स्तो.	वज्रविलासिनीस्तो०	हार.	हारतीस्तोत्रम्
व. स. स्तु.	वज्रसत्त्वस्तुति:		

श्लोकानुक्रमणी आकरनिर्देशश्च

बौद्धस्तोत्रसंग्रह

जनार्दनशास्त्री पाण्डेय

संस्कृत वाङ्मय विशाल और हृदयस्पर्शी स्तोत्र-साहित्य से परिपूर्ण है। इसका समावेश इतिहासकारों ने भक्तिकाव्य में किया है क्योंकि काव्य की यह विद्या अनुराग और विराग दोनों प्रकार की भावनाओं से ओतप्रोत है।

बौद्ध सम्प्रदाय में स्तोत्रों का प्रचुर भण्डार है, विशेषत: महायान सम्प्रदाय में। ये स्तोत्र मूलत: संस्कृत में हैं। इनका अन्य भाषाओं में अनुवाद किया गया है और सामान्य जनता उसका निरन्तर उपयोग करती है। जैसे नमस्कारैकविंशति स्तोत्र, तारास्रग्धरा स्तोत्र आदि का सभी पाठ करते हैं परन्तु अधिकतर स्तोत्रों का मूल संस्कृत रूप नहीं मिलता और जो मिलता है वह प्राय: अशुद्ध रूप में।

ललित विस्तर, सुवर्णप्रभास, मञ्जुश्रीमूलकल्प, स्वयम्भूपुराण, गण्डव्यूह तथा साधना [illegible] सभी ग्रन्थों में विविध प्रकार के स्तोत्र हैं किन्तु इनका कोई संकलन आजतक नहीं हुआ। लोगों [illegible] अपनी आवश्यकता से स्तोत्रों को ग्रहण किया और प्राय: मौखिक परम्परा से ही उसका प्रसार हुआ। [illegible] न्यूनता की पूर्ति के लिये यह स्तोत्र संग्रह प्रस्तुत है।

इस संग्रह में दोनों प्रकार के स्तोत्र हैं (१) जिनका भक्तजन स्वाध्याय करते हैं और आराधना [illegible] जिनका विषय है। (२) जिन्हें प्राचीन आचार्यों ने रचा है और जिनमें बौद्ध धर्म और दर्शन के गूढ़ तत्त्वों [illegible] समावेश है। आर्यनागार्जुन के चतु: स्तव के अतिरिक्त वज्रदेवी स्तोत्र, वज्रमहाकाल स्तोत्र, सत्त्वाराधन [illegible] के ७ स्तोत्र, विरुवापाद के २ स्तोत्र, अश्वघोष, सर्वज्ञमित्र, आर्यदेव, बन्धुदत्त, चन्द्रदास, चन्द्रकीर्ति, [illegible]दत्त, विभूतिचन्द्र और राजा हर्षवर्धन जैसे विद्वानों और सिद्धों के स्तोत्र इसमें संकलित हैं। १२ स्तवों वाला मातृचेट का अध्यर्धशतक और रामचन्द्र भारती का भक्तिशतक अपना स्वतन्त्र महत्त्व रखते हैं। वज्रविलासिनी साधना स्तव, वसन्ततिलका स्तुति, आदि साधना के गूढ़ रहस्य का ज्ञान कराते हैं। पीठस्तव से संपूर्ण पीठ-उपपीठों का तथा धर्मधातु वागीश्वर-मण्डल वर्णना स्तोत्र से मण्डल देवताओं के स्वरुप का बोध होता है।

इस प्रकार अचिन्तयस्तव को सुमेरु मानकर शेष १०८ स्तोत्रों की यह एकमाला भगवान् तथागत को समर्पित है।

श्री जनार्दन शास्त्री पाण्डेय का जन्म १९२० ई० में हुआ। उन्होंने १९५० ई० में साहित्याचार्य एवं १९६० ई० में एम० ए० की परीक्षाएं पास कीं। उन्होंने विश्वनाथ पुस्तकालय, वाराणसी एवं का. हि. वि. वि. (मैनुस्क्रिप्ट वि.) में उपग्रन्थाध्यक्ष के रुप में कार्य किया। तत्पश्चात् उन्होंनें रामानुजदर्शन विद्यालय में साहित्य तथा सम्पू० सं० वि० वि० में पाण्डुलिपिविज्ञान के अध्यापक के रुप में कार्य किया। उन्होंने सरस्वतीभवन सं० सं० वि० वि० एवं काशिराजन्यास रामनगर नें अनुसन्धान-सहायक के रुप में कार्य किया। श्री पाण्डेय ने सरस्वती भवन सं० सं० वि० वि० में प्रोफेशनल जूनियर एवं केन्द्रीय उ० सि० शि० स० सारनाथ में दुर्लभ बौद्धग्रन्थ शोध योजना के अन्तर्गत वरिष्ठ शोधपरामर्शक के रुप में कार्य किया।

श्री पाण्डेय तेलुगू, कन्नड़, ग्रन्थ, उड़िया, बंगला, मैथिली, नेवारी (पांचों प्रकार की), शारदा, गुरुमुखी और गुर्जर लिपियों का ज्ञान रखते हैं और उन्हें २ लाख से अधिक पाण्डुलिपियों का परीक्षण, वर्गीकरण, सूचीकरण आदि का अनुभव प्राप्त है। अब तक साहित्य, दर्शन, वेद, धर्मशास्त्र, ज्योतिष और बौद्ध दर्शन से संबद्ध २४ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें संस्कृत-हिन्दी टीकाएँ, विशिष्ट टिप्पणियाँ, उपयोगी परिशिष्ट आदि हैं और उन्होंने शोध पत्रिका "धी:" में ४०० से अधिक दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों का परिचय, प्रकाशन, योजना से प्रकाशित सभी १२ ग्रंथों के सम्पादन में सहयोग दिया है।

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली वाराणसी पटना बंगलौर मद्रास

मूल्य : रु० २०० (सजिल्द)
१२५ (अजिल्द)